DALIT KAHANIYON KA BHASHIK VISHLESHAN

(CHAYANIT KAHANI-SANGRAHON KE VISHESH SANDARBH MEIN)

A Thesis submitted in Partial Fulfillment of the Requirement for the degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

In Centre for Dalit & Adivasi Studies and Translation

By

NAMRATA SINGH

17HDPH01

प्रतिष्ठित संस्थान
INSTITUTION OF EMINENCE
राष्ट्रीय अपेक्षाएँ, वैश्विक मानक
National Needs, Global Standards

2023

Under the Guidance of

PROF. C. ANNAPURNA

CENTRE FOR DALIT & ADIVASI STUDIES AND TRANSLATION
SCHOOL OF HUMANITIES
UNIVERSITY OF HYDERABAD
HYDERABAD-500046
TELANGANA, INDIA

दलित कहानियों का भाषिक विश्लेषण

(चयनित कहानी-संग्रहों के विशेष संदर्भ में)

हैदराबाद विश्वविद्यालय की पीएच.डी (दलित-आदिवासी अध्ययन एवं अनुवाद केंद्र)

उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबंध

प्रतिष्ठित संस्थान
INSTITUTION OF EMINENCE
राष्ट्रीय अपेक्षाएँ, वैश्विक मानक
National Needs, Global Standards

2023

शोधार्थी

नम्रता सिंह

17HDPH01

शोध-निर्देशक

प्रो. सी. अन्नपूर्णा

दलित-आदिवासी अध्ययन एवं अनुवाद केंद्र

मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद

प्रतिष्ठित संस्थान
INSTITUTION OF EMINENCE
राष्ट्रीय अपेक्षाएँ, वैश्विक मानक
National Needs, Global Standards

DECLARATION

I, **NAMRATA SINGH**, hereby declare that this dissertation entitled "**DALIT KAHANIYON KA BHASHIK VISHLESHAN (CHAYANIT KAHANI-SANGRAHON KE VISHESH SANDARBH MEIN)**" "दलित कहानियों का भाषिक विश्लेषण (चयनित कहानी-संग्रहों के विशेष संदर्भ में)" submitted by me under the guidance and supervision of **PROF. C. ANNAPURNA** is a bonafide research work which is also free from plagiarism. I also declare that it has not been submitted previously in part or in full to this University or any other University or Institution for the award of any degree or diploma.

I hereby agree that my dissertation can be deposited in shodhganga/INFLIBNET.

Name: **NAMRATA SINGH**

Date: /06/2023

(Signature of the Student)

Registration No. 17HDPH01

प्रतिष्ठित संस्थान
INSTITUTION OF EMINENCE
राष्ट्रीय अपेक्षाएँ, वैश्विक मानक
National Needs, Global Standards

CERTIFICATE

This is to certify that the thesis entitled "**DALIT KAHANIYON KA BHASHIK VISHLESHAN (CHAYANIT KAHANI-SANGRAHON KE VISHESH SANDARBH MEIN)**" "दलित कहानियों का भाषिक विश्लेषण (चयनित कहानी-संग्रहों के विशेष संदर्भ में)" submitted by **NAMRATA SINGH** bearing Registration No. **17HDPH01** in partial fulfillment of the requirements for the award of **DOCTOR OF PHILOSOPHY** in **CENTRE FOR DALIT & ADIVASI STUDIES AND TRANSLATION** is a bonafide work carried out by her under my supervision and guidance which is a plagiarism free thesis.

As far as we know the Thesis has not been submitted previously in part or in full to this or any other University for the award of any degree or diploma.

Further, the students have following publication(s) before submission of the Thesis for adjudication and has produce evidence for the same in the form of acceptance letter or the reprint in the relevant area of his research:

A. Published Research Paper in the following Publications:

1. Dalit Kahaniyon ki Bhasha: Mudde aur Chunautiyan (Chayanit Kahani-Sangrahon ke Sandarbh Mein. (AABHYANTAR, ISSN: 2348-7771).
2. Dalit Kahaniyon ka Bhashik Vishleshan: Vastu aur Bhasha ke star par. (AKSHARA, ISSN: 2582-5429)

B. Research Paper presented in the following Conferences:

1. Dalit Kahaniyon ka Bhashik Vishleshan (NATIONAL), Khalsa College for Women (Ludhiana) Evam Kendriya Hindi Sansthan (Agra), 5th November 2019.
2. Dalit Kahaniyon ki Bhasha: Mudde aur Chunautiyan (Chayanit Kahani-Sangrahon ke Sandarbh Mein) (NATIONAL), Department of Hindi (University of Hyderabad), 15th November 2019.

Further the student has passed the following courses towards fulfilment requirement for Ph.D.:-

Course Code	Name	Credit	Result
1. DS801	Research Methods and Critical Approaches	4	Pass
2. DS802	Sociology of Dalit Literature	4	Pass
3. DS803	Dalit and Adivasi Thought	4	Pass
4. DS804	Documenting of Dalit and Adivasi Oral Literature	4	Pass

The student has also passed M.Phil. degree of this University. She studied the following courses in this program.

Course Code	Name	Grade	Credit	Result
1. DS701	Research Methods and Critical Approaches	B+	4	Pass
2. DS702	Introduction to Dr. B. R. Ambedkar’s Thought	B+	4	Pass
3. DS703	Historical and Sociological Study of Indian Adivasi Literature	B	4	Pass
4. DS704	Translation and Computing in Hindi	A	4	Pass
5. DS751	Dissertation	A	16	Pass

Therefore, the student has been exempted from repeating Research Methodology course (as recommended by the Research Advisory Committee) in his Ph.D. program.

Signature of the Supervisor

Head

Centre for Dalit & Adivasi Studies and Translation

Dean

School of Humanities

अनुक्रमणिका

दलित कहानियों का भाषिक विश्लेषण

(चयनित कहानी-संग्रहों के विशेष संदर्भ में)

भूमिका **1 – 9**

प्रथम अध्याय: हिंदी साहित्य और दलित वाद **10 – 43**

1.1 साहित्य की अवधारणा 10 – 16

1.2 हिंदी साहित्य में दलित वाद 16 – 20

1.3 हिंदी साहित्य में दलित साहित्य का स्थान 20 – 24

1.4 दलित साहित्य की अवधारणा 24 – 32

1.5 दलित कहानी का उद्भव और विकास 32 – 41

निष्कर्ष 41 – 43

द्वितीय अध्याय: दलित कहानी की भाषा के विविध रूप और उसकी संरचना **44 – 79**

2.1 दलित साहित्य में रचित कहानियाँ 44 – 46

2.2 दलित कहानीकारों का विवेचन 46 – 50

2.3 दलित कहानी के विभिन्न रूप एवं पक्ष 50 – 54

2.4 विषयवस्तु 54 – 64

2.5 कथानक 64 – 68

2.6 चरित्र- चित्रण 68 – 70

2.7 देशकाल तथा वातावरण 70 – 73

2.8 भाषा 73 – 78

निष्कर्ष 78 – 79

तृतीय अध्याय: दलित कहानियों का संरचनापरक विश्लेषण 80 – 112

3.1 संज्ञा 81 – 87

संज्ञा के भेद 82 – 87

3.2 विशेषण 88 – 99

प्रविशेषण 89 – 90

विशेषण के प्रकार 90 – 99

3.3 क्रिया के प्रयोगों में विचलन 99 – 105

क्रिया के भेद 102 – 103

संज्ञा का क्रियारूप प्रयोग 104 – 105

क्रिया का संज्ञारूप प्रयोग 105

3.4 विशिष्ट विशेषण 106 – 107

3.5 विशेषण पदबंध 108 – 110

3.6 सादृश्यमूलक विशेषण 110 – 111

निष्कर्ष 111 – 112

चतुर्थ अध्याय: दलित कहानियों का शब्दपरक विश्लेषण 113 – 167

4.1 शब्द चयन 114 – 118

4.2 तत्सम शब्द 118 – 123

4.3 तद्भव शब्द 123 – 128

4.4 देशज शब्द 128 – 131

4.5 विदेशी शब्द 131 – 137

4.6 आंचलिक शब्द 137 – 140

4.7 कोड मिश्रण 141 – 143

4.8 समास रूप 143 – 158

समास के भेद 144 – 158

4.9 पारिभाषिक शब्द 158 – 166

पारिभाषिक शब्दों के प्रकार 161 – 163

निष्कर्ष 166 – 167

पंचम अध्याय: दलित कहानियों का वाक्यविन्यासात्मक विश्लेषण 168 – 204

5.1 रचना के आधार पर 170 – 172

5.2 अर्थ के आधार पर 172 – 174

5.3 पदक्रम 175 – 180

5.4 पदबंध 180 – 188

पदबंध के प्रकार 183 – 188

5.5 उपवाक्य 188 – 192

उपवाक्य के भेद 189 – 192

5.6 वाक्य – चयन 192 – 194

5.7 अन्विति 194 – 200

5.8 दलित कहानियों में प्रयुक्त होने वाली अमानक भाषा का प्रयोग 200 – 203

निष्कर्ष 204

षष्ठम अध्याय: दलित कहानियों की प्रोक्ति संरचना 205 – 246

6.1 प्रोक्ति की अवधारणा 207 – 219

6.2 प्रोक्ति और पाठ 219 – 232

प्रोक्ति के प्रकार 225 – 232

6.3 संसक्ति 232 – 240

संसक्ति के आयाम 233 – 240

6.4 कथन – शैली 240 – 245

कथन शैली के प्रकार 241 – 245

निष्कर्ष 245 – 246

सप्तम अध्याय: दलित कहानियों का अर्थ विधान 247 – 288

7.1 अर्थ की अवधारणा 248 – 254

7.2 शब्द शक्ति 254 – 265

अभिधा शब्द शक्ति 256 – 260

लक्षणा शब्द शक्ति 260 – 262

व्यंजना शब्द शक्ति 262 – 265

7.3 पर्यायवाचक 265 – 270

पर्यायवाची शब्द के प्रकार 267 – 270

7.4 अप्रस्तुत विधान 270 – 273

7.5 मुहावरे और लोकोक्तियाँ 273 – 287

मुहावरा 273 – 280

मुहावरों के आधार 274 – 276

लोकोक्ति 280 – 287

निष्कर्ष 287 – 288

उपसंहार 289 – 298

संदर्भ ग्रंथ सूची 299 – 307

परिशिष्ट	**308 – 321**
साक्षात्कार -1	**308 – 314**
साक्षात्कार -2	**315 – 321**
शोध आलेख	**322 – 329**
शोध प्रपत्र	**330 – 331**

भूमिका

दलित साहित्य वह लेखन है जो वर्ण व्यवस्था के खिलाफ में तथा उसके विपरीत मूल्यों के प्रति संघर्षरत मनुष्यों से प्रतिबद्ध है। इस समाज में मनुष्य प्रारम्भ से ही अपने परिवेश को लेकर संवेदनशील रहा है। अपनी अनुभूति को प्रस्तुत करने के लिए उसने उपलब्ध साधनों का भरपूर प्रयोग किया है। दलित साहित्य का मुख्य लक्ष्य अपने समुदाय को पराधीनता की परम्पराओं से मुक्ति दिलाना है। हिंदी दलित साहित्य के शुरुआत में ज्यादातर कविताएं ही लिखी गयी हैं। मगर सातवें दशक में अनेक दलित लेखकों ने कहानी विधा को अपनाया। हिंदी दलित कहानी की यात्रा आठवें दशक में बहुत तेजी से उभरी है। और अनेक नये दलित रचनाकार उभरकर अपनी उपस्थिति को दर्ज करते हैं तथा अपनी दलित कहानियों के माध्यम से दलित साहित्य को एक मजबूत आधार देने की कोशिश करते हुए नजर आते हैं। दलित कहानीकारों का यह प्रयत्न जहाँ सृजनात्मक आवेग से खुद को तलाशने की प्रक्रिया के साथ सामाजिक परिवेश की गम्भीर चुनौतियों से टकराता है।

कथा साहित्य में दलित चेतना की अभिव्यक्ति प्रथमत: आत्मकथा विधा में हुई है। दलित रचनाकारों ने अपने भोगे हुए अनुभवों को व्यक्त करने के लिए आत्मकथा विधा का चयन किया और दलित समाज के यथार्थ को पूरी ईमानदारी से अभिव्यक्त किया। आत्मकथा विधा के बाद दलित चेतना की सबसे ज्यादा

अभिव्यक्ति कहानी विधा में हुई है। दलित साहित्यकारों ने अपने जीवन के दाहक प्रसंगों को कहानियों में भी अभिव्यक्त किया है। दलित अस्मिता की अब तक अनेक कहानियाँ लिखी जा चुकी हैं। दलित कहानी लेखन परम्परा में सर्वप्रथम नाम आता है - ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों का। इनकी कहानियाँ सबसे चर्चित कहानियों में से एक होती है। इनकी कहानी-संग्रह 'घुसपैठिये' जिसमें बारह कहानियाँ है इस शोध कार्य में ली गई हैं। इनके अलावा जयप्रकाश कर्दम जो की दलित साहित्य की दुनिया के प्रतिष्ठाता की कहानी-संग्रह 'तलाश' जिसमें बारह कहानियाँ हैं उसे लिया गया है और साथ ही तेलुगु जगत के उभरते बीज डॉ० जी० वी० रत्नाकर की तेलुगु अनुदित हिंदी 'श्रेष्ठ दलित कहानियाँ' जिसमें की बारह कहानियों को लिया गया है।

कहानी गद्य साहित्य की वह सबसे अधिक रोचक एवं लोकप्रिय विधा है, जो जीवन के किसी विशेष पक्ष का मार्मिक, भावनात्मक और कलात्मक वर्णन करती है। हिंदी गद्य की वह विधा है जिसमें लेखक किसी घटना, पात्र अथवा समस्या का क्रमबद्ध ब्यौरा देता है, जिसे पढ़कर एक समन्वित प्रभाव उत्पन्न होता है, उसे कहानी कहते हैं। अथवा कहानी वह विधा है जो लेखक के किसी उद्देश्य किसी एक मनोभाव जैसे उसके चरित्र, उसकी भाषा, उसका कथा-विन्यास, सब कुछ उसी एक भाव को पुष्ट करते हैं। कहानी का आरम्भ मनुष्य के जन्म से ही माना जाता है। कहानी उपन्यास की तरह लम्बी नहीं होती है पर किसी महत्वपूर्ण घटना पर आधारित होता

है, यह किसी के जीवन का एक घटना पर आधारित होता है। वहीं हिंदी कहानी और दलित कहानी के तत्त्व एक जैसे होते हुए अंतर इतना होता की दलित कहानियाँ असमानता, अस्पृश्यता, भेदभाव एवं जातिगत वर्चस्व की मानसिकता को बदलने तथा समतापरक भारत के निर्माण की आकांक्षा को साकार करने का लक्ष्य सामने रखती है। हिंदी कहानी के इतिहास में दलित कहानी ने नब्बे के दशक में दस्तक दी। सामजिक असामनता, अस्पृश्यता, अन्याय, बहिष्करण और इनसे मुक्ति के लिए संघर्ष को कथा मानकों के रूप में स्वीकार करने वाली इस दुनिया के प्रमुख हस्ताक्षर हैं - ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, जयप्रकाश कर्दम, दयानन्द बटोही, सूरजपाल चौहान, कावेरी, कुसुम वियोगी, प्रह्लादचंद्र दास, विपिन बिहारी, सुशीला टाकभौरे, रत्नकुमार सांभरिया आदि।

हिंदी दलित साहित्य में कहानी के विविध उतार-चढ़ावों और कथित आंदोलनों से अनेक दलित कहानी दलित कहानी परिवर्तन हुए सामाजिक परिस्थिति में यथार्थ चित्रण की एक विशिष्ट धारा के रूप में सामने उभरकर आती है। आठवें दशक में आंदोलनकारी विचार और तेजी से उभरा इसमें मोहनदास नैमिशराय और ओमप्रकाश वाल्मीकि की क्रांतिकारी कहानियाँ निहित हैं। नवें दशक में भारतीय साहित्य में दलित कहानियों ने खास पहचान निर्मित की है। हिंदी साहित्य के लिये दलित साहित्य की चर्चा नई नहीं है। हिंदी दलित कहानी की यह अंदोलनकारी साथ ही साथ यह एक लम्बी संघर्ष यात्रा है जो सातवें दशक से लेकर नवें दशक तक कांटों

पर सफर करते हुए लहु-लुहान होते हुए भी अपने विस्फोटक तेवर की पहचान बनाने में कामयाब रही है। दलित कहानी ने समस्याओं का सामना किया है।

भाषा द्वारा ही हम अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हैं। साहित्यिक क्षेत्र में भी यही माध्यम है, जिससे साहित्यकार अपनी रचना को शब्दबद्ध करता है। साहित्यिक भाषा की अपनी छवि होती है। दलित कहानियों के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि ये सारी कहानियाँ आम दलित जनता की भाषा में कही गयी हैं। इसमें ज्यादातर पात्र अशिक्षित मजदूर और दबे हुए वर्ग के प्रतिनिधि होने के कारण इनकी भाषा में औपचारिकता कम है। दलितों की भाषा तो अपने जीवन संग्राम की भाषा है, उनके साहित्य में यही भाषा तो अभिव्यक्त होती है। उसमें अधिक रूप से बोली के शब्दों का प्रयोग हुआ है। यह आश्चर्य कि बात नहीं है क्योंकि ये कहानियाँ पिछड़े गाँव में रहने वाली जनता की कहानियाँ हैं। दलित कहानियों के भाषा पक्ष पर विचार करने की सही दृष्टि यही हो सकती है। सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग इनमें प्रचुरता से किया गया है।

हिंदी कथा भाषा में दलित कहानियों की भाषा का अलग स्थान निर्मित हो रहा है। यह भाव अलग व्यक्तित्व की पहचान कर रही है। पात्रों को स्वाभाविक भाषा प्रयोग के आधार पर कहानियाँ महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर रही है। स्वाभाविक रूप से यहाँ तात्पर्य है, सामान्य भाषा का वह रूप जिसका प्रयोग सवर्ण और अवर्ण विविध सामाजिक परिस्थितियों में एक दूसरे से संभाषण में करते हैं। इस भाषा का केंद्र

लालित्य न होकर दालित्य है। अर्थात दलित पात्रों को सम्बोधित करते हुए सवर्ण व्यक्ति की भाषा से यह झलकता है कि वह अपने से हीन को सम्बोधित कर रहा है। दूसरी ओर जब दलित पात्र बोलता है तो वह अपनी हीनता ग्रंथि से इतना ग्रसित है कि उच्च वर्ग के पात्र के समक्ष वह या तो निरीहता या फिर रोष में बोलता है। अर्थ यह है कि दोनों ही स्थितियों में वक्ता-श्रोता सम्बंध भाषा चयन को सीधे प्रभावित करता है। दलित कहानीकारों ने अपनी कहानियों में दलित जीवन से जुड़ी इसी वास्तविक और आंचलिक भाषा का प्रयोग किया है। और इन्हीं भाषा प्रयोगों को अपने इस शोध कार्य **दलित कहानियों का भाषिक विश्लेषण (चयनित कहानी-संग्रहों के विशेष संदर्भ में)** में दिखाने की कोशिश की गयी है।

प्रथम अध्याय: हिंदी साहित्य और दलित वाद के अंतर्गत साहित्य की अवधारणा, हिंदी साहित्य में दलित वाद, हिंदी साहित्य में दलित साहित्य का स्थान, दलित साहित्य की अवधारणा और स्वरूप, और दलित कहानी का उद्भव और विकास के साथ ही तेलुगु दलित साहित्य पर भी प्रकाश डाला गया है।

द्वितीय अध्याय: दलित कहानी की भाषा के विविध रूप और उसकी संरचना के अंतर्गत दलित साहित्य में रचित कहानियाँ, दलित कहानीकारों का विवेचन, दलित कहानी के विभिन्न रूप एवं पक्ष, विषयवस्तु, कथानक, चरित्र-चित्रण, देशकाल तथा वातावरण और भाषा पर चर्चा की गयी है। इसके आगे के

अध्याय जो कि मुख्य विषयों से जोड़ते हैं जिनमें भाषा की अलग-अलग परतों को देखने का प्रयास किया गया है।

तृतीय अध्याय: दलित कहानियों का संरचनारक विश्लेषण के अंतर्गत संज्ञा, संज्ञा के प्रकार, विशेषण, विशेषण के प्रकार, क्रिया के प्रयोगों में विचलन, क्रिया के भेद, संज्ञा का क्रियारूप प्रयोग, क्रिया का संज्ञारूप प्रयोग, विशिष्ट विशेषण, विशेषण पदबंध, सादृश्यमूलक विशेषण के जरिये चयनित दलित कहानियों का उदाहरण सहित विश्लेषण किया गया है।

चतुर्थ अध्याय: दलित कहानियों का शब्दपरक विश्लेषण के अंतर्गत शब्दों का चयन कैसा है, तत्सम शब्द, तद्भव शब्द, देशज शब्द, देशज शब्द के प्रकार, विदेशी शब्द, आंचलिक शब्द, कोड मिश्रण, समास रूप, समास के प्रकार, पारिभाषिक शब्द, पारिभाषिक शब्दों के प्रकार, पारिभाषिक शब्दों के निर्माण की परतों द्वारा चयनित दलित कहानियों का उदाहरण के साथ विश्लेषण किया गया है।

पंचम अध्याय: दलित कहानियों का वाक्यविन्यासात्मक विश्लेषण के अंतर्गत वाक्यविन्यास का वर्गीकरण, रचना के आधार पर वर्गीकरण, अर्थ के आधार पर वर्गीकरण, पदक्रम, पदबंध, पदबंध के कार्य, पदबंध के प्रकार, उपवाक्य, उपवाक्य के प्रकार, वाक्य का चयन किस प्रकार से दलित कहानियों में किया गया है, वाक्य-चयन के प्रकार, अन्विति, अन्विति सम्बंधी महत्वपूर्ण नियम, दलित

कहानियों में प्रयुक्त होने वाली अमानक भाषा का प्रयोग, इन सभी भेदों के अंतर्गत चयनित दलित कहानियों का उदाहरण बताकर विश्लेषण किया गया है।

षष्ठ अध्याय: दलित कहानियों की प्रोक्ति संरचना के अंतर्गत प्रोक्ति को समझना, प्रोक्ति की अवधारणा, प्रोक्ति के पांच घटक, प्रोक्ति और पाठ, प्रोक्ति के प्रकार, संलाप और एकालाप की चर्चा और उनके प्रकार, संसक्ति, संसक्ति के आयाम, अपनी बात कहने का ढंग यानी कि कथन-शैली, कथन-शैली के प्रकार, इन सब के द्वारा चयनित दलित कहानियों का उदाहरणस्वरूप विश्लेषण किया गया है।

सप्तम अध्याय: दलित कहानियों का अर्थ विधान के अंतर्गत अर्थ का शाब्दिक रूप, अर्थ की अवधारणा, शब्द शक्ति, शब्द शक्ति के प्रकार, अभिधा शब्द शक्ति, अभिधा शब्द शक्ति के प्रकार, लक्षणा शब्द शक्ति, लक्षणा शब्द शक्ति के प्रकार, व्यंजना शब्द शक्ति, व्यंजना शब्द शक्ति के प्रकार, पर्यायवाचक, पर्यायवाची शब्द के प्रकार, अप्रस्तुत विधान, मुहावरा, मुहावरों का वर्गीकरण, लोकोक्तियाँ, इन सभी में उदाहरणों के जरिये चयनित दलित कहानियों का विश्लेषण कर उन्हें समझा गया है।

प्रमुख हिंदी दलित कहानियों पर अनेक दृष्टिकोण से कार्य हुआ है, लेकिन मेरा प्रयत्न उन कहानियों का भाषिक विश्लेषण करना है। दलित कहानीकारों की आंदोलनकारी सामाजिक भावनाओं का आविर्भाव उनकी कहानियों में दृष्टिगत होता है। मेरा यह प्रयास है कि ओमप्रकाश वाल्मीकि, जयप्रकाश कर्दम, डॉ. जी. वी.

रत्नाकर की कहानियों के जरिये दलित कहानियों की भाषा की परतों को और खोल सके।

यह शोध-प्रबंध आदरणीय **प्रो. सी. अन्नपूर्णा** जी की सत्प्रेरणा पथ-प्रदर्शन तथा स्नेहाशीष का ही फल है। रूपरेखा से लेकर शोध-प्रबंध पूर्ण होने तक समय-समय पर आपने अपना अमूल्य समय देकर मेरी उलझनों को अपार स्नेह के साथ सुलझाने में साथ दिया है। आपका गहन अध्ययन और वात्सल्यपूर्ण व्यव्हार ही मेरा पाथेय रहा है। मैं उनकी ह्र्दय से आभारी हूँ। इंदिरा गांधी मेमोरियल लाइब्रेरी, हैदराबाद विश्वविद्यालय और इलाहाबाद विश्वविद्यालय की पुस्तकालय की भी आभारी हूँ, जिसने मुझे किताबों की सहायता की। इस शोध-कार्य रचना के लिए अनेक संदर्भ ग्रंथ, आलोचना शोध-प्रबंध, पत्र-पत्रिका आदि की सहायता ली गयी है। उन सभी विद्वानों, रचनाकारों की भी आभारी हूँ जिनकी रचनाओं, विचारों, शोध-तथ्यों का बहुमूल्य लाभ मुझे प्राप्त हुआ है।

दलित-आदिवासी अध्ययन एवं अनुवाद केंद्र, हैदराबाद विश्वविद्यालय के संस्थापक और हैदराबाद विश्वविद्यालय के मानविकी संकाय के अधिष्ठाता **प्रो. वी. कृष्ण** जी की सदा आभारी रहूंगी जिनकी सोच से यह केंद्र खुला और इसके उद्देश्य को यह पूरा कर रहा है। मेरे शोध सलाहकार समिति सदस्य और दलित-आदिवासी अध्ययन एवं अनुवाद केंद्र के सह-संस्थापक और साथ ही हैदराबाद विश्वविद्यालय के सम-कुलपति **प्रो. आर. एस. सर्राजु** जी की भी आभारी रहूंगी कि उन्होनें समय-

समय पर मेरा मार्गदर्शन किया । मेरे दूसरे शोध सलाहकार समिति सदस्य और हैदराबाद विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यक्ष **प्रो. गजेंद्र पाठक** जी का भी आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होने हमेशा इस शोध-कार्य को सफलतापूर्वक करने के लिए प्रेरित किया । और साथ ही दलित-आदिवासी अध्ययन एवं अनुवाद केंद्र के अध्यक्ष **प्रो. विष्णु सरवदे** जी की आभारी रहूंगी जिन्होंने शोध-कार्य को समय से पूरा करने में सहायता की ।

इस शोध-प्रबंध को पूर्ण करने में मैं मेरे दोस्तों, सीनियर्स, जूनियर्स इन सभी को मैं याद करना चाहूंगी जिन्होंने मेरे शोध-कार्य को सफल बनाने में हमेशा मेरी सहायता की है । आत्मीय मित्रवर्ग से प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप में सहायता मिली है, उन सबके प्रति दिल से शुक्रगुजार हूँ ।

अंत में मैं अपने माता-पिता और परिवारजनों को तहेदिल से धन्यवाद देती हूँ । मैं यह शोध-प्रबंध लिखने में सफल रही तो इसका श्रेय मेरे माता-पिता **स्व. डॉ. कृष्णनंदन प्रसाद** और **तारकेश्वरी देवी** जी को जाता है ।

दलित कहानियाँ पढ़ने वाले और भाषा में रूचि रखने वाले भावकों का यदि इस शोध-ग्रंथ से थोड़ा सा भी हित साध्य हुआ तो मैं अपने इस परिश्रम को सार्थक समझूंगी ।

- नम्रता सिंह

प्रथम अध्याय

हिंदी साहित्य और दलित वाद

हिंदी साहित्य और दलितवाद कहने से दोनों को अलग तरीके से देखा जाता है। जबकि हिंदी साहित्य से ही दलित साहित्य भी उभरा है। पर यहाँ हम बात दलितवाद की अगर करें तो भारत में जातियों को चार प्रकार में खंडित किया गया है जो कि इस प्रकार है- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शुद्र। ये शुद्र ही आगे चलकर दलित कहलातें हैं। और इस शुद्र को ही आगे चलकर और भी कई सह-जातियों में बाँट दिया गया। हिंदी साहित्य और दलितवाद में अंतर इतना है कि हिंदी साहित्य अपने में सब समेटे हुए है यहाँ तक कि दलित साहित्य को भी पर दलितवाद बात सिर्फ और सिर्फ दलित की करता है। दलित साहित्य को नकार का साहित्य कहा है जो संघर्ष से उपजा है तथा जिसमें समता, स्वतंत्रता और बन्धुता का भाव है और वर्णव्यवस्था से उपजे जातिवाद का विरोध है। महार, चमार, भंगी, कसाई जैसी जातियों की स्थितियों के प्रश्नों पर विचार तथा रचनाओं द्वारा उसे प्रस्तुत करने वाला साहित्य ही दलित साहित्य है।

1.1 साहित्य की अवधारणा

साहित्य शब्द का विग्रह दो तरह से किया जा सकता है-

साहित्य= स+हित= सहभाव अर्थात हित का साथ होना ही साहित्य है।

साहित्य शब्द अंग्रेजी के literature का पर्याय है, जिसकी उत्पत्ति लैटिन शब्द letter से हुई है। भाषा के माध्यम से अपने अंतरंग की अनुभूति, अभिव्यक्ति करानेवाली ललित कला 'काव्य' अथवा 'साहित्य' कहलाती है। साहित्य की व्युत्पत्ति को ध्यान में रखकर इस शब्द के अनेक अर्थ प्रस्तुत किये गए हैं। 'यत' प्रत्यय के योग से साहित्य शब्द की निर्मिति हुई है। शब्द और अर्थ का सहभाव ही साहित्य है। कुछ विद्वानों के अनुसार हितकारक रचना का नाम साहित्य है। साहित्य शब्द का प्रयोग 7वीं-8वीं शताब्दी से मिलता है। इससे पूर्व साहित्य शब्द के लिए काव्य शब्द का प्रयोग होता था। भाषाविज्ञान का ये नियम है कि जब एक ही अर्थ में दो शब्दों का प्रयोग होता है, तो उनमें से एक अर्थ संकुचित या परिवर्तित होता है। संस्कृत में जब एक ही अर्थ में साहित्य और काव्य शब्द का प्रयोग होने लगा तो धीरे-धीरे काव्य शब्द का अर्थ संकुचित होने लगा है। आज काव्य का अर्थ केवल कविता है और साहित्य शब्द को व्यापक अर्थ में लिया जाता है। साहित्य का तात्पर्य अब कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, आत्मकथा अर्थात गद्य और पद्य की सभी विधाओं से है। काव्य के स्वरुप को लेकर उसे परिभाषित करने का प्रयास ई. स. पूर्व 200 से अब तक हो रहा है। विविध विद्वानों ने साहित्य के लक्षण प्रस्तुत करते हुए उसे परिभाषित करने का प्रयास किया है। किन्तु इन प्रयासों में कहीं अतिव्याप्ति, तो कहीं अव्याप्ति का दोष है।

साहित्य सिर्फ आनंद, अर्थ, काम और मोक्ष के प्रयोजन से नहीं रचा जाता है। वहां मानवीय चिंताएं, सरोकार, विकास यात्रा, संवेदनशीलता ही सर्वोपरि होने चाहिए, तभी साहित्य समाज की सही-सही आइना बन पायेगा। यदि साहित्य सामाजिक जीवन का हिस्सा नहीं बनता है, उसके सुख-दुःख, संघर्ष को रेखांकित नहीं करता है, तो वह सिर्फ बौद्धिक दुनिया का ही हिस्सा बनेगा, जमीनी सच्चाई से कई मीटर ऊपर जहाँ मानवीय संवेदनाओं का

कोई अस्तित्व ही नहीं होता। **मैनेजर पांडेय** के सन्दर्भ से यदि कहें- *"प्रेमचंद और निराला की दलित जीवन से जुड़ी रचनाओं को देखा जा सकता है। लेकिन सारी सहानुभूति, करुणा, सहृदयता और परकाया प्रवेश की कला के बावजूद गैर दलितों द्वारा दलितों के बारे में लिखे गए साहित्य में कला चाहे जितनी हो, परन्तु अनुभव की वह प्रामाणिकता नहीं होती है, जो किसी भी दलित द्वारा अपने समुदाय के बारे में स्वानुभूति की पुनर्रचना से उपजे साहित्य में होती है।"*[1] साहित्य मनुष्य के विचारों की अभिव्यक्ति का एक बहुत ही प्रमुख माध्यम है। यह अपने ज्ञान के अमृत से समाज एवं संस्कृति दोनों को सार्थक दिशा देने का एक सशक्त पर्याय है। साहित्य के द्वारा मनुष्य की आत्मा और बुद्धि निर्मल होती है। साहित्य जब समाज से उदासीन होकर अपना बौद्धिक प्रलाप करता है तो वह समाज में घट रही तमाम स्थितियों, क्रिया-प्रतिक्रियाओं को भी अनदेखा करता है। यही कारण है कि अपनी तमाम साहित्यिक उत्कृष्टताओं, शिल्प, कलात्मक, भावात्मक सौंदर्यबोध के बावजूद हिंदी साहित्य में रीतिकाल, छायावाद, अप्रासंगिक हो जाते हैं। क्योंकि इस काल के रचनाकार सामाजिक, राजनीतिक स्थितियों से तटस्थ दिखाई देते हैं। अपने समय की बड़ी से बड़ी घटनाओं पर वे चुप्पी साधे हुए हैं। साहित्य समाज को सुलाने का नहीं जगाने का काम करता है और यह सारा व्यापार मुख्यधारा के नाम पर हुआ है। समाज में और कुछ हो रहा है, साहित्य किसी और दिशा में जा रहा है।

हिन्दी साहित्य हिन्दी भाषा का रचना संसार है। हिन्दी भारत और विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं में से एक है। उसकी जड़ें प्राचीन भारत की संस्कृत भाषा में तलाशी जा सकती हैं। परंतु हिन्दी साहित्य की जड़ें मध्ययुगीन भारत की ब्रजभाषा, अवधी,

[1] दलित चेतना साहित्य; मैनेजर पाण्डेय; पृ-4

मैथिली और मारवाड़ी जैसी भाषाओं के साहित्य में पाई जाती हैं। हिंदी में गद्य का विकास बहुत बाद में हुआ और इसने अपनी शुरुआत कविता के माध्यम से किया जो कि ज्यादातर लोकभाषा के साथ प्रयोग कर विकसित की गई। हिंदी में तीन प्रकार का साहित्य मिलता है- गद्य, पद्य और चम्पू। हिंदी साहित्य के प्रारम्भ के विषय में विद्वानों के तीन प्रकार के मत हैं। शिवसिंह सेंगर, मिश्रबन्धु तथा आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपभ्रंश को ही पुरानी हिंदी मानकर सातवीं सदी से ही हिंदी साहित्य का प्रारम्भ मान लिया है। संपूर्ण अपभ्रंश काव्य को हिंदी साहित्य में स्थान देने के पश्चात् उन्होंने 1050 से 1375 सम्वत तक हिंदी का प्रारंभिक युग स्वीकार किया है और इसे वीरगाथा काल नाम दिया है। डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, डॉ. रामकुमार तथा अन्य विद्वानों ने हिंदी का प्रारम्भ दसवीं शताब्दी से मानने का आग्रह किया है। जिन रचनाओं को आधार मानकर उन्होंने आग्रह किया था, वे सब बाद की लिखी सिद्ध हो चुकी है। तीसरे वर्ग के विद्वानों में डॉ. उदयनारायण तिवारी तथा डॉ. नामवर सिंह जैसे विद्वान आते हैं जिन्होंने अपभ्रंश को निश्चित रूप से हिंदी से भिन्न माना है। आचार्य द्विवेदी ने अपभ्रंश को हिंदी से अलग मानते हुए भी हिंदी साहित्य उद्भव और विकास ग्रन्थ में हिंदी साहित्य के आदिकाल को 1000 ईस्वी से प्रारम्भ मान लिया है।

दलितों की परंपरा पुरानी होने के कारण ही आज हमारे साहित्य में इनकी प्रमुखता बनी हुई है। दलित साहित्य से तात्पर्य दलित जीवन और उसकी समस्याओं पर लेखन को केंद्र में रखकर हुए साहित्यिक आंदोलन से है। दलितों को हिन्दू समाज व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर होने के कारण न्याय, शिक्षा, समानता तथा स्वतंत्रता आदि मौलिक अधिकारों से भी वंचित रखा गया। उन्हें अपने ही धर्म में अछूत या अस्पृश्य माना गया। दलित साहित्य की शुरुआत मराठी से मानी जाती है जहाँ दलित पैंथर आंदोलन के दौरान

बड़ी संख्या में दलित जातियों से आये रचनाकारों ने आम जनता तक अपनी भावनाओं, पीड़ाओं, दुःख-दर्दों के लेखों, कविताओं, निबंधों, जीवनियों, कटाक्षों, व्यंगों, कथाओं आदि के माध्यम से पहुँचाया। इस प्रकार दलित साहित्य में भी कई विधाएँ 1980 से अब तक में हमारे सामने आ चुकी हैं। अतः इतना कहा जा सकता है कि दलित साहित्य दलितों के जीवन सभ्यता, संस्कृति, समाज, मान्यताओं तथा इतिहास का 'इनसाइक्लोपीडिया' है। हमारा देश जितना विविधधर्मी है उसी के अनुरूप दलित साहित्य में भी विविधता है। दलित साहित्य की विकास यात्रा को एक नयी ऊँचाई मिल रही है। इसके ऐतिहासिक विकासक्रम पर अगर हम ध्यान केंद्रित करें तो पता चलेगा कि इसकी निरंतरता में बहुत कुछ नया जुड़ा है। इसका दायरा कई मायनों में विस्तृत हुआ है। इसने एक तरफ जहाँ अपना भौगोलिक विस्तार कर अखिल भारतीय स्वरुप ग्रहण कर लिया है वहीं इसमें विधागत समृद्धि के साथ-साथ कलात्मक ऊँचाई भी आई है। विषय वस्तु के भी स्तर पर इसमें उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं। लेखकों का अनुपात विविध सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाला हुआ है। दलित साहित्य लेखन में दलित महिलाओं की भागीदारी ने न केवल दलित साहित्य के स्वरूप को प्रभावित किया है बल्कि पूरे भारतीय साहित्य के स्वर को उसने एक नयी दिशा दी है।

विधा का अर्थ है ,किस्म, वर्ग या श्रेणी, अर्थात विविध प्रकार की रचनाओं को उनके गुण, धर्मों के आधार पर अलग करना। साहित्य में विधा शब्द का प्रयोग, एक वर्गकारक के रूप में किया जाता है। विधाएँ अस्पष्ट श्रेणियाँ हैं, इनकी कोई निश्चित सीमा रेखा नहीं होती ; इनकी पहचान समय के साथ कुछ मान्यताओं के आधार पर निर्मित की जाती है। विधाएं कई तरह की होती हैं- साहित्य की विधाएं, गद्य की विधाएं, कविता की विधाएं, काव्य आदि। साहित्य में विधा शब्द का प्रयोग एक वर्गकारक के रूप में किया जाता है। किंतु सामान्य

रूप से यह किसी भी कला के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। साहित्य की सभी विधाओं में इस शोध कार्य के लिए कहानी विधा को लिया गया है।

- **कहानी** – कहानी एक ऐसा आख्यान है जो एक ही बैठक में पढ़ा जा सके और पाठक पर किसी एक प्रभाव को उत्पन्न कर सके। इसमें उन सभी बातों को छोड़ दिया जाता है जो इस प्रभाव को आगे बढ़ाने में मदद नहीं करतीं। कहानी में जीवन के किसी एक अंक का चित्रण रहता है। बड़ी से बड़ी कहानी भी छोटे से छोटे उपन्यास से छोटी होती है। कहानी में विचार को सांकेतिक रूप में रखा जाता है।

यहाँ मुख्यता तीन कहानी-संग्रह लिए हैं- ओमप्रकाश वाल्मीकि की "घुसपैठिये" (जिसमें कुल बारह कहानियाँ हैं), जयप्रकाश कर्दम की "तलाश" (जिसमें कुल बारह कहानियाँ हैं) और डॉ० जी. वी. रत्नाकर की हिंदी अनूदित तेलुगु कहानी-संग्रह "श्रेष्ठ दलित कहानियाँ" (जिसमें कुल बारह कहानियाँ हैं)। "तलाश" कहानी-संग्रह की कहानियों में जयप्रकाश कर्दम जाति एवं शोषण रहित समाज की तलाश करते हुए नज़र आते है। एक ऐसे समाज की तलाश जिसमें घृणा, हिंसा, भेदभाव एवं शोषण की जगह प्रेम, करूणा, समता एवं सद्भाव की भावनाएं हो। "घुसपैठिये" कहानी-संग्रह की कहानियों में दलितों की अंतर्व्यथा, प्रताड़ना और बेबसी को वास्तविकता की भूमि पर प्रकट करती है। ये कहानियाँ सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिवेश को प्रस्तुत करते हुए दलित चेतना को उजागर करती हैं। इसमें आक्रोशभाव तथा विद्रोहभाव स्पष्ट झलकता है। "श्रेष्ठ दलित कहानियाँ" कहानी-संग्रह की कहानियाँ समाज के निचले तबके ओर ध्यान आकर्षित करती है। लगभग सभी कहानियों में माला (माहर) और मादिगा (चमार) जाति के लोगों की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक

व आँचलिक पक्षों को दर्शाया गया है। अनुवादक ने तेलुगु के मूल शब्दों को जैसे का वैसा रखकर उनके अर्थ और भाव ब्रैकेट में समझाया।

1.2 हिंदी साहित्य में दलित वाद

हिंदी साहित्य में दलित जीवन से जुड़ी रचनाओं की शुरुआत यद्यपि कबीर, रैदास, हीरा डोम, निराला, प्रेमचंद और राहुल सांकृत्यायन जैसे रचनाकारों से होती है, लेकिन उनकी रचनाओं की पहचान दलित साहित्य के रूप में कम, हाशिए अथवा निम्नवर्गीय समाज पर केंद्रित साहित्य के रूप में अधिक होती है। 1960 के आस-पास मराठी में दलित आंदोलन के उभार के साथ ही धीरे-धीरे हिंदी में दलित जीवन से जुड़ी रचनाओं का आना शुरू हुआ तथा 1980 तक आते-आते हिंदी में दलित साहित्य के रूप में रचनाएँ स्थापित होनी शुरू हो गयी। इसी बीच 1976 में नागपुर में पहली बार दलित साहित्य सम्मलेन का आयोजन हुआ तथा इस आयोजन ने यह सिद्ध कर दिया कि दलित साहित्य के आंदोलन की प्रक्रिया अब धीमी नहीं, तेज़ होगी। इसी दौरान हिंदी में दलितों द्वारा हिन्दू समाज और साहित्य की परम्परा के प्रति विद्रोह के रूप में छिटपुट लेखन की शुरुआत हुई, जिसने धीरे-धीरे एक विशेष प्रकार के साहित्य के रूप में अपनी पहचान स्थापित की। जो ही आगे चलकर हिंदी साहित्य में दलित वाद के रूप में सामने आया।

वर्ण-व्यवस्था को स्वेच्छा से स्वीकार नहीं किया गया था, बल्कि जोर-जबरदस्ती और सत्ता के बल पर इसे लादा गया था। ये तथ्य इतिहास में मौजूद हैं। इस वर्ण-व्यवस्था के कारण ही भारतीय समाज भिन्न-भिन्न खण्डों में बंटा हुआ है जिनमें सामूहिक चेतना जैसी कोई चीज नहीं है। जो है वह समाज चेतना नहीं, जाति चेतना है। इसीलिए 'जाति-चेतना'

समाज विरोधी है और परिणाम भी सुखद नहीं है। इसी कारण भारत हज़ारों साल गुलाम रहा। **डॉ. अंबेडकर** के सन्दर्भ से कहें तो *"हिन्दू समाज में मानवीय संबंधों को धर्म का आवरण ओढ़ाकर अनुलंघनीय बना दिया गया है। कामगारों के पारस्परिक संबंधों की सीमाएं बाँध दी गयी हैं। उन्हें कड़ियों और संशयहीनता के शिकंजे में कस दिया गया है।"*[2] साहित्य ने इन स्थितियों को अनदेखा किया। इसीलिए ऐसा साहित्य एक दलित के लिए अप्रासंगिक होता गया है जिसमें सामाजिक संघर्षों के द्वंद्व की ठीक-ठीक अभिव्यक्ति दिखाई नहीं पड़ती है। **सार्त्र** ने कहा है- *"प्रकृति के एक सुन्दर और विस्तृत परिदृश्य में जैसे ही आप एक मनुष्य को स्थापित करते हैं, तो सारा कुछ जीवंत हो उठता है। निश्चय ही यह परिप्रेक्ष्य से असंपृक्त व्यक्ति नहीं, स्वयं उसका जीवंत हिस्सा बन गया है, परिदृश्य को गति देता है।"*[3]

दलित समाज का सम्बन्ध उत्पादन से जुड़ा हुआ है। प्रकृति, श्रम और उत्पादन इन तीनों का परस्पर गहरा सम्बन्ध है, जिसकी संरचना में दलित गुंथा हुआ है। कृषि कार्यों, कारखानों, कपडा मिलें, चमड़ा उत्पादन, सफाई कार्य आदि ऐसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र हैं, जहाँ दलित समाज ने विशेष योग्यता हासिल की है, जबकि गैर-दलित इन सब कार्यों से विरत रहने के बावजूद इनकी महत्ता को भी नकारते हैं, इसलिए गैर-दलित साहित्य में जब भी कृषि, मिल, मजदूरी, श्रम, किसान, पशुपालन आदि का चित्रण होता है, वहां कल्पना आधारित तथ्य होते हैं, जिनका सम्बन्ध यथार्थ जीवन से नहीं होता।

हिंदी गद्य में उपन्यास विधा पर दृष्टिपात करें तो हम पाएंगे कि मेहता लज्जाराम शर्मा ने परतंत्र लक्ष्मी (1899), आदर्श दम्पति (1904), हिन्दू गृहस्थ (1904), आदर्श हिन्दू

---

[2] भगवान बुद्ध और उनका धम्म; डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर

[3] विकिपिडिया (सार्त्र का अस्तित्ववाद); प्रभा खेतान

(1915) आदि उपन्यास लिखे। उनके इन उपन्यासों में सनातनधर्म के प्रति गहरी आस्था, वर्ण-व्यवस्था का पक्ष अमानवीय सीमा तक जाति धर्म का आधार जन्म, भाग्य, कर्मफल में आस्था आदि तथ्य मौजूद हैं। आदर्श हिन्दू में एक उदाहरण देखिये- *"यदि आपने उनका पेशा छुड़ाकर उन्हें वर्णों में संयुक्त कर लिया तो किसी दिन आपको नाई, धोबी, भंगी, चमार नहीं मिलेंगे। उस दिन आपको उनकी जगह लेनी पड़ेगी। इस कारण उन्नति के बहाने हिन्दू समाज में अधर्म का ग़दर न मचाइए इसलिए ब्राह्मणों को ब्राह्मण ही रहने दीजिये। उनसे जूता सिलवाने का काम लीजिये। यदि कोई गिर गया हो उसपर लात न मारिए।"*[4] एक प्यासे शूद्र द्वारा पानी मांगने पर वे उसे पानी देने के स्थान पर दुत्कारते हैं और पत्थरों से मारने की धमकी देते हैं। **भारतेंदु** का कथन भी देखने योग्य हैं- *"जाति में कोई चाहे ऊँचा हो, चाहे नीचा सबका आदर कीजिए, जो जिस योग्य हो वैसा मानिए, छोटी जाति के लोगों का तिरस्कार करके उनका जी मत तोड़िए। सब लोग आपस में मिलिए।"* भारतेंदु एक उपदेशक की तरह पेश आते हैं। उनमें दलितों के प्रति दया और सहानुभूति है, परन्तु दलित संवेदना का विद्रोही स्वर नहीं दिखाई पड़ता है। यह भारतेंदु ही नहीं अधिकांश लेखकों में मिलता है। अर्थात एक मर्यादा में रहकर जातिवाद और धार्मिक जड़ता का विरोध करते हैं। यह उस काल के लेखकों की सीमा है। हिंदी में अनेक उपन्यासकारों ने दलित पात्रों को केंद्रित करके उपन्यास लिखें। जिनमें प्रमुख हैं 'यथा प्रस्तावित', 'परिशिष्ट' (गिरिराज किशोर), 'नाच्यौ बहुत गोपाल' (अमृत लाल नागर), 'धरती धन न अपना', 'नरक कुंड में बास' (जगदीश चंद्र), 'पत्थर के आंसू' (यादवेंद्र चंद्र शर्मा), 'सती माता का चौरा' (भैरव प्रसाद गुप्त), 'किस्सा गुलाम' (रमेशचंद्र शाह), 'एक टुकड़ा इतिहास' (रामदरश मिश्र), 'रंगभूमि' (प्रेमचंद) आदि। इन उपन्यासों में

---

[4] आदर्श हिंदू; मेहता लज्जाराम शर्मा; पृ-127

'धरती धन न अपना' और 'नरक कुंड में बास' का यथार्थवादी कथ्य, वातावरण, पात्र सभी प्रभावित करते हैं, लेकिन लेखक का वर्गीय दृष्टिकोण हावी रहता है। दलित समस्या को मात्र आर्थिक नजरिये से ही देखा गया है।

एक बात जो साफ़ तौर से दिखाई देती है कि हिंदी लेखकों ने दलित आंदोलनों को गंभीरता से नहीं लिया। चाहे वह ज्योतिबा फुले का संघर्ष हो या डॉ. अम्बेडकर, अछूतानंद या फिर रामास्वामी पेरियार का। ऐसे में लेखकीय ईमानदारी पर प्रश्नवाचक चिन्ह लग जाता है। हिंदी साहित्य सिर्फ गाँधी और उनके अछूतोद्धार से प्रभावित होता है। उपन्यासकारों ने मसीहाई अंदाज में दलितों की दीनता-हीनता और उनकी स्त्रियों की विवशता का विवरण तो दिया, लेकिन उनके संघर्ष की धार को कुंद करके। दलित स्त्री के भोग्य रूप को ही देख पाए, उनकी उत्कट जिजीविषा का कहीं चित्रण नहीं मिलता है। दलित पात्र सवर्णों के निमित्त मात्र हैं। वे सवर्णों की करुणा जगाने के लिए हैं या उनका संस्कार करने के लिए या उनकी उदारता महानता दिखाने के लिए। दूसरे शब्दों में कहें तो वे सब्जेक्ट नहीं ऑब्जेक्ट बने रहे हैं। समूचे हिंदी साहित्य को पढ़कर यह नहीं जान पाते है कि दलित सवर्णों के बारे में क्या सोचते हैं ? उनकी स्त्रियों को देखकर दलितों के मन में क्या विचार आते हैं, क्योंकि जो भी लेखक ने अभिव्यक्त किया वह सवर्ण मन से ही किया।

दलित साहित्य के रूप में मुक्ति, स्वतंत्रता के गंभीर सरोकार विद्यमान हैं। अनीश्वरवाद, अनात्मवाद, वैज्ञानिक दृष्टिबोध, पाखंड-कर्मकांड का विरोध, सामाजिक न्याय की पक्षधरता, वर्ण-व्यवस्था का विरोध, सामंतवाद का विरोध, पूंजीवाद-बाज़ारवाद विरोध, साम्प्रदायिकता का विरोध, ब्राह्मणवाद का विरोध, अधिनायकवाद का विरोध, जैसे सवाल दलित साहित्य के सरोकारों में शामिल हैं।

समकालीन हिंदी दलित कथा साहित्य में उपन्यास, कहानी, नाटक, आत्मकथा आदि विधाओं की अनेक कृतियों ने पाठकों, आलोचकों का ध्यान खींचा है। आलोचना की भी कई पुस्तकें आयी हैं जिन्होंने सौंदर्यशास्त्रीय मान्यताओं की समीक्षा दलित चेतना की दृष्टि एवं सोच के अनुरूप की है। मोहनदास नैमिशराय, सूरजपाल चौहान, जयप्रकाश कर्दम के कथा साहित्य में दलित जीवन की गहरी छानबीन की गयी है। इनकी रचनाओं में दलित समाज का जद्दोजहद और अस्मिता की पहचान की उत्कट इच्छाओं को अभिव्यक्ति मिली है। दलित साहित्य में आत्मकथाओं ने एक विशिष्ट स्थान बनाया है जो मात्र लेखक की निजी पीड़ा नहीं बल्कि समूचे दलित समाज की व्यथा-कथा बनकर रह गयी है। 'जूठन', 'अपने-अपने पिंजरे' को पढ़कर दलित समाज की जिजीविषा से पाठकों का परिचय हुआ है। हिंदी साहित्य की जड़ता टूटी है। 'दोहरा अभिशाप', 'तिरस्कृत' के माध्यम से हिंदी साहित्य को नयी ज़मीन मिली है। इसी तरह 'सलाम', 'आवाज़ें', 'हैरी कब आएगा' कहानी-संग्रहों ने हिंदी दलित साहित्य को गरिमा प्रदान की है। इसे एक ऐसा फलक दिया है जो साहित्य को जीवंत बनाता है।

1.3 हिंदी साहित्य में दलित साहित्य का स्थान

दलित साहित्य वर्तमान का ऐसा विमर्श बन चुका है जिसका अध्ययन किए बिना सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य को समझना ग़लत होगा। भारी संख्या में इस दिशा में लेखन के लिए प्रेरित होना यह बताता है कि यहाँ भी कम चेतना नहीं है बस बोलने का मौक़ा नहीं दिया गया। आज दलित विमर्श हिन्दी का ही नहीं, हिन्दी प्रदेश की सीमाओं से बाहर निकालकर बड़ा स्वरूप ले चुका है, जिसका मूल उद्देश्य है दलित जीवन की बुनियादी समस्याओं को जनता

के सामने लाना। सम्पूर्ण भारतीय भाषा में दलित लेखन तेज़ी से हो रहा है। 'दलित साहित्य' के लेखन में किस-किस को शामिल किया जाए यह अभी तक स्पष्ट नहीं हो पाया है। दलित साहित्यकारों का मनाना है कि दलित की पीड़ाओं को वही समझ सकता है जिसने इसको भोगा है, यानि कि अनुभूति के आधार पर, जबकि दूसरा खेमा दलितों से इतर लिखे गए साहित्य को, जो दलित जीवन पर उसी भी उसमें शामिल करने की बात कर रहा है। हिन्दी साहित्य के मुख्यधारा में 'दलित विमर्श' का मुद्दा अस्सी के दशक में उभरा जो नब्बे तक आते-आते काफी चर्चित हो चुका था। साहित्य की बहुचर्चित पत्रिका 'हंस' में दलित साहित्यकार ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा 'जूठन' धारावाहिक रूप मे प्रकाशित हुई जो आलोचकों और पाठकों में बहुत चर्चित हुई। 1997 में इसे राजकमल प्रकाशन ने आत्मकथा के रूप में प्रकाशित किया जो बहुत चर्चित हुआ। यहीं से दलित साहित्य, विमर्श का मुद्दा बन गया। दलित साहित्य में दलित साहित्यकार अपने जीवन के कटु अनुभवों को व्यक्त करते हैं, जिसका एक मात्र उद्देश्य यही है कि पूरी दुनियाँ यह जाने के उनके साथ क्या दुर्व्यवहार हुआ है। विख्यात दलित चिंतक **कंवल भारती** ने लिखा है- *"दलित साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है, जिनमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को रूपायित किया है, अपने जीवन-संघर्ष में जिस यथार्थ को भोगा है, दलित साहित्य उनका उसी की अभिव्यक्ति का साहित्य है। यह कला के लिए कला का नहीं, बल्कि जीवन का और जीवन की जिजीविषा का साहित्य है।"*[5]

हिन्दी साहित्य में दलित जीवन की समस्याओं को साहित्य में आरंभ से उठाया जा रहा है। आज़ादी से पहले प्रेमचंद, निराला, यशपाल आदि कहानीकारों ने अपनी रचनाओं

[5] दलित साहित्य की भूमिका; कंवल भारती; पृ-67

में हाशिए के समाज के पक्ष में मज़बूती से लिखा। आज़ादी के बाद जब भारतीय समाज की तस्वीर काफ़ी बदली मार्कण्डेय, अमरकांत, राजेन्द्र यादव, नैमिशराय, ओम प्रकाश वाल्मीकि, पुन्नी सिंह, प्रेम कपाड़िया, डॉ. दयानंद बटोही, डॉ. तेज सिंह, बाबूलाल खंडा, रामचंद आदि चर्चित रचनाकार हैं। महिला कथाकारों में उषा चन्द्रा, रमणिका गुप्ता, रजत रानी 'मीनू', मैत्रेयी पुष्पा, सुभद्रा कुमारी जैसे रचनाकार इसमें शामिल होकर मज़बूत लेखन किया।

दलित साहित्य को तीन स्तरों पर समझा जा सकता है। पहला भोगे हुए यथार्थ के आधार पर। दूसरा उनका लिखा गया जो साहित्य नहीं है। तीसरा स्तर विचारधारा का है। क्या प्रगतिशील होकर दलित साहित्य लिखा जा सकता है ? हालाँकि यह सवाल बहुत उलझा हुआ है और बुनियादी भी है। क्योंकि विचारधारा के स्तर पर तो दलित साहित्यकार व आलोचक, चिंतक प्रगतिशील यानी मार्क्सवाद का भी बहुत महत्व नहीं हैं क्योंकि उनका मानना है कि इसमें अधिकतर सवर्ण लोग ही हैं। विख्यात दलित साहित्यकार **माता प्रसाद** का मानना है कि- *"दलित साहित्य वह साहित्य है जिसमें वर्ण समाज में सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनीतिक दृष्टि से दलित, शोषित, उत्पीड़ित, अपमानित, उपेक्षित, तिरस्कृत, वंचित, निराश्रित, पराश्रित, बाधित, अस्पृश्य और असहाय है, पर साहित्य की रचनाएँ हैं, वही दलित साहित्य की श्रेणी में आता है। इसमें बंधनों में जकड़ी स्त्रियाँ, बंधुआ मजदूर, दास, घुमन्तू जातियाँ, अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ आती हैं। दलित साहित्य वेदना, चीख और छटपटाहट का साहित्य है।"*[6]

[6] कथा-क्रम; दलित विशेषांक; नवम्बर-2000; पृ-115

दलित साहित्य का विस्तार हिन्दी साहित्य में आने के बाद ही हुआ। 'अपने-अपने पिंजरे' 'मैं भंगी हूं', 'जूठन', 'तिरस्कृत', 'दोहरा अभिशाप', मुर्दहिया, मणिकणिका, जूठन भाग दो आदि आत्मकथाओं ने साहित्य प्रकाशित होते ही सबका ध्यान अपनी तरफ़ खींचा। दलित लेखक समानता, सम्मान और अपनी आज़ादी के लिए लिख रहे हैं। जाति, नस्ल या रंग के आधार हो रहे भेदभाव को वह ख़त्म करना चाहता है। दलित साहित्यकार चाहता है कि समाज में धर्म, सत्ता दर्शन तथा जन्म के आधार पर किसी व्यक्ति की श्रेष्ठता घोषित न किया जाए। जितने भी दलित साहित्यकारों ने समाज और साहित्य में अपना सम्मानित स्थान बनाया है, सभी ने शिक्षा के बल पर यह स्थान प्राप्त किया है। शिक्षा दलित समाज की बुनियाद को मज़बूत करती है। दलित साहित्यकारों ने यह प्रेरणा भी बाबा साहब से ली है। बाबा साहब दलितों को शिक्षित करने के सभी प्रयासों के लिए प्रतिबद्ध से सरकारी, ग़ैर-सरकारी संस्थाओं के साथ अपने व्यक्तिगत प्रयासों द्वारा वह उन्हें शिक्षित करना चाहते थे। शिक्षा द्वारा ही दलितों और स्त्रियों में अपने अधिकार और अस्मिता को समझने की चेतना आयी। डाली शिक्षा द्वारा ही स्वयं के अधिकारों के लिए संघर्ष के लिए एकत्र हुए। आंबेडकर कहते थे- 'शिक्षित बनो', 'संगठित हो' और 'संघर्ष करो' एवं 'अप्पो दीपो भव' अर्थात् 'अपना दीपक स्वयं बनो'!

समग्रता में देखें तो हिन्दी में दलित साहित्य का आना उसके लिए सुखद ही रहा क्योंकि यह सच है कि हिन्दी साहित्य से जुड़ते ही दलित साहित्य व्यापक स्तर पर चर्चित हुआ जिसकी पहुँच बड़ी है। दलित साहित्यकार भाषा में चमत्कार दिखाने के लिए नहीं लिखता न ही किसी को ख़ुश करने के लिए बल्कि वह लिखता है अपनी पीड़ा की अभिव्यक्ति के

लिए। पाठक इसीलिए उससे जुड़ भी जाता है क्योंकि उसे दलित साहित्य की संवेदना झूठी नहीं लगती है। उसमें छुपे सत्य को वह महसूसता है और उसे आत्मसात करता है।

1.4 दलित साहित्य की अवधारणा और स्वरूप

भारत में सात-आठ दशक पूर्व से ही दलित शब्द का प्रयोग हो रहा है। व्याकरणिक दृष्टि से दलित शब्द को यदि परिभाषित किया जाये तो संस्कृत के धातु 'दल' से दलित शब्द की उत्पत्ति हुई है। हिंदी शब्द सागर के अनुसार दलित शब्द का अर्थ विनष्ट किया हुआ ही है।

दलित वि (स.) (स्त्रीदलिता)

१. मसला हुआ, मर्दित।

२. दबाया, रौंदा या कुचला हुआ।

३. खण्डित।

४. विनष्ट किया हुआ।

हिंदी शब्द कोश के अनुसार दलित वह है

१. कुचला हुआ, दबाया हुआ (जैसे- दलित वर्ग)

२. नष्ट किया हुआ (जैसे- दलित जाति)

हिंदी के अलावा प्राकृत शब्द के अनुसार दलित शब्द 'दल' धातु से उत्पन्न हुआ है-

१. दल- (सक) चूर्ण करना, टुकड़े करना, विदारना।

२. दल- (अक) विकसना, फटना, खण्डित होना, द्विधा होना।

३. दल- (नष्ट) सैन्य, लड़कर, पत्र, पत्ती।

संस्कृत-अंग्रेजी शब्दकोश के अनुसार- दल – दलित

दलित हृदय गाठोद्वेगं द्विधातुन, विधते- अर्थात वेदनाओं के कारण हृदय के टुकड़े-टुकड़े होते हैं नाश नहीं।

दलित: ब्रोकन, टार्च, वर्स्ट, रेंट, स्प्लिट।

हिंदी, संस्कृत तथा अंग्रेजी शब्द कोशों के तरह मराठी शब्दकोशों में भी दलित शब्द का यही मिला जुला अर्थ निकलता है।

१. दल- नाश करणे (विनष्ट करना)

दलित- नाश पावलेला (विनष्ट हुआ)

दीनदलित समानार्थी शब्द।

नालंदा विशाल शब्द सागर में-

१. मसला, रौंदा या कुचला हुआ।

२. नष्ट किया हुआ।

हिंदी पर्यायवाची कोश में-

१. कुचला हुआ, मर्दित, मसला हुआ, रौंदा हुआ।

२. पस्त हिम्मत, हतोत्साह।

३. अछूत, जनजाति, डिप्रेस्ड क्लास।

प्रस्तुत शब्दकोशों के अनुसार दलित शब्द का जो अर्थ आया उसका सारांश यह है कि- 'जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, मीड़ा, मसला, मर्दित, रौंदा, कुचला, खंडित, टुकड़े-टुकड़े, विनष्ट, पस्त हिम्मत, हतोत्साहित, वंचित, उत्पीड़ित, शोषित तथा सताया गया हो, उसे दलित कहा जाता है।' यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि दलित शब्द को जितना परिभाषा के दायरे में लाया गया है उतना विस्तृत अर्थ यह नहीं रख पाता है क्योंकि जैसे ही 'दलित' शब्द का सम्बोधन होता है उसमें एक समाज के निम्न श्रेणी के व्यक्ति होने का लेबल लग जाता है अर्थात दलित शब्द का प्रयोग कभी भी किसी भी व्यक्ति के लिए प्रयोग में नहीं लाया जा सकता है, हमारी सामाजिक व्यवस्था अभी भी इतनी दीनहीन नहीं हुई है कि कोई सवर्ण व्यक्ति अपने को दलित कह सके। अर्थात किसी भी दलित व्यक्ति को दलित नहीं कहा जा सकता है।

डॉ. तुलसीराम के विचार से साहित्य में आरंभ से दो परम्पराएं रही हैं, एक दलित विरोध की अथवा वर्ण-व्यवस्था के समर्थन की तथा दूसरी दलितों के समर्थन तथा वर्ण-व्यवस्था विरोध की परंपरा। चूँकि दलित साहित्य की जरुरत वर्ण-व्यवस्था के कारण ही पैदा हुई इसलिए दलित साहित्य का मूल मानक वर्ण-व्यवस्था ही है। इसीलिए वाल्मीकि दलित होकर भी दलित लेखक नहीं और न ही उनकी 'रामायण' दलित रचना जबकि अश्वघोष ब्राह्मण होकर भी दलित रचनाकार है और उनकी 'वज्रसूची' दलित साहित्य है।

डॉ. राजेंद्र यादव के अनुसार, *"दलित की श्रेणी में स्त्री, पिछड़ी जाति एवं दलित वर्ग के लोग आते हैं।"*

प्रसिद्ध मराठी एवं दलित लेखक **नारायण सुर्वे** 'दलित' शब्द की मिली-जुली परिभाषा देते हैं- *"केवल बौद्ध या पिछड़ी जातियाँ ही नहीं समाज में जो भी पीड़ित है, वे दलित हैं। ईश्वर निष्ठा या शोषण निष्ठा जैसे बंधनों से आदमी को मुक्त रहना चाहिए। उसका स्वतंत्र अस्तित्व सहज स्वीकार किया जाना चाहिए। उसके सामाजिक अस्तित्व की धारणा, समता, स्वतंत्रता और विश्व बंधुत्व के प्रति निष्ठा निर्धारित होनी चाहिए।"*

मोहनदास नैमिशराय दलित शब्द की व्यापकता को रेखांकित हुए लिखते हैं- *"दलित शब्द मार्क्स प्रणीत सर्वहारा शब्द के लिए समानार्थी लगता है। लेकिन इन दोनों में पर्याप्त भेद भी हैं। दलित की व्याप्ति अधिक है, तो सर्वहारा की सीमित! दलित के अंतर्गत सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक शोषण का अंतर्भाव होता है, तो सर्वहारा केवल आर्थिक शोषण तक ही सीमित है लेकिन प्रत्येक सर्वहारा को दलित कहने के लिए बाध्य नहीं हो सकते....अर्थात सर्वहारा की सीमाओं में आर्थिक विषमता का शिकार वर्ग आता है, जबकि दलित विशेष तौर से सामाजिक विषमता का शिकार होता है।"*

दलित शब्द को संवैधानिक प्रश्नों से जोड़ते हुए **डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन** की धारणा है कि *"दलित वह है जिसे भारतीय संविधान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है।"*

प्रमुख दलित चिंतक **ओमप्रकाश वाल्मीकि** के शब्दों में कहें तो,*"दलित शब्द व्यापक अर्थ बोध की अभिव्यंजना देता है, भारतीय समाज में जिसे अस्पृश्य माना गया वह व्यक्ति ही दलित है। दुर्गम पहाड़ों, वनों के बीच जीवन यापन करने के लिए बाध्य जनजातियों और आदिवासी, जरायम, पेशा घोषित जातियां सभी इस दायरे में आतीं हैं। सभी वर्गों की स्त्रियां दलित हैं। बहुत कम श्रम-मूल्य पर चौबीसों घण्टे काम करनेवाले श्रमिक, बंधुआ मजदूर दलित की श्रेणी में आते हैं।"*

दलित शब्द की परिभाषा को मनुष्यता से जोड़ते हुए **डॉ. धर्मवीर** का मानना है कि *"दलित एक मनुष्य पैदा। मनुष्य एक सम्भावना है। हर दलित व्यक्ति मनुष्य की संभावनाओं से भरपूर पैदा होता है, वे लोग मनुष्य के दुश्मन कहे जायेंगे जो मनुष्य की संभावनाओं पर किसी भी रूप में रोक लगाते हैं। दूसरी तरफ से, इस चिंतन से इतना और कहने की जरुरत है कि मनुष्य केवल हिन्दू नहीं है अर्थात दलित भी मनुष्य है।"*

इसी तरह से **अर्जुन डागले** का कहना है कि *"दलित शब्द का यानी शोषित, पीड़ित समाज, धर्म व अन्य कारणों से जिसका आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक शोषण किया जाता है, मनुष्य और वही मनुष्य क्रांति कर सकता है।"*

प्रस्तुत परिभाषाओं- शब्द कोशीय एवं मानवीय आधार के अनुसार यह निष्कर्ष निकलकर आया कि दलित शब्द का प्रयोग समाज-व्यवस्था के सबसे निचले स्तर के लोगों के लिए प्रयोग में लाया जाने वाला शब्द है और समाज का ऊँचा तबका जिसको हेय एवं अछूत तथा अन्त्यज की श्रेणी में रखता है। यहाँ मानवीयता और मनुष्यता के लिए कोई स्थान नहीं है और इस श्रेणी का व्यक्ति कितना भी प्रगतिशील एवं पढ़ा-लिखा क्यों न हो सवर्ण समाज उसकी जातीय हैसियत को आंक कर ही उसे अपनी बराबरी का दर्ज़ा देता है। अर्थात इस दलित, शोषित, पीड़ित व्यक्ति को संविधान में अनुसूचित जातियों के रूप में रेखांकित किया गया है।

अब अगर दलित साहित्य की बात करें तो दलित साहित्य साहित्य जगत के दो खेमों में स्पष्ट बंटा नज़र आ रहा है। जहाँ एक ओर 'दलित साहित्य' कुछ विद्वानों की दृष्टि में उत्कृष्ट साहित्य है वहीं दूसरी ओर कुछ विद्वानों की दृष्टि में दलित साहित्य का कोई वजूद ही नहीं है। दोनों पक्षों के अपने-अपने प्रबल तर्क एवं अवधारणाएं भी हैं, परन्तु यहाँ पर हम इतना कहना

चाहेंगे कि आज दलित साहित्य ने अपनी पहचान स्थापित कर ली है और अब यह नवोन्मेष की प्रक्रिया से गुजर कर अपनी प्रौढ़ावस्था में प्रवेश कर चुकी है। दलित साहित्य के माध्यम से वर्तमान में दलित अपनी अस्मिता को पहचानने का भरसक प्रयास कर रहा है।

हिंदी में दलित साहित्य को लेकर दलित और गैर-दलित दोनों वर्ग के बुद्धिजीवियों में विचारोत्तेजक मंथन चल रहा है। दलित बुद्धिजीवियों का तर्क है कि दलित ही वास्तविक दलित साहित्य का सृजन कर सकते हैं और गैर-दलित रचनाकारों का मानना है कि दलित साहित्य की रचना के लिए आवश्यक नहीं कि व्यक्ति जन्म से दलित ही हो। दलितों के प्रति संवेदना रखने वाले गैर-दलित भी दलित साहित्य लिख सकते हैं। दलित साहित्य में व्यक्ति प्रमुख है। दलितों के लिए ऐसे साहित्य की कोई आवश्यकता नहीं, जिसका उपयोग मानव की समस्याओं पर सहज विमर्श के लिए न हो। इस लेखन में शब्दों का उलझाव नहीं होता है। दलित साहित्य पर डॉ. अंबेडकर के सामाजिक क्रांतिकारी विचारों का प्रभाव होना आवश्यक शर्त है। हिंदी के वरिष्ठ दलित साहित्यकार **ओमप्रकाश वाल्मीकि** का मत है कि *"वर्ण-व्यवस्था से उपजी घोर अमानवीयता, स्वतंत्रता-समता विरोधी सामाजिक अलगाव की पक्षधर सोच परिवर्तित कर बदलाव की प्रक्रिया तेज करना दलित साहित्य की मूल संवेदना है। डॉ. अम्बेडकर और ज्योतिबा फुले की जीवन-दृष्टि दलित साहित्य की ऊर्जा है।"* दलित चिंतक **डॉ. धर्मवीर** कहते हैं- *"वास्तव में दलित साहित्य की सच्ची और पूरी परिभाषा यह है कि यह वह साहित्य है जो दलित जाति में जन्मा हुआ एक साहित्यकार अच्छा या बुरा साहित्य लिखता है। दलित साहित्य का नायक और खलनायक भी दलित होता है क्योंकि वो अपनी पूरी ज़िन्दगी जीते हैं।"* साहित्य के साथ दलित शब्द जुड़ते ही उसकी व्यापकता और अधिक क्रान्ति बोधक हो जाती है। अर्थ और अधिक व्यंजनात्मक होकर

साहित्य की भूमिका और सामाजिक उत्तरदायित्वों को और अधिक विश्लेषित करने की क्षमता हासिल कर लेता है। दलित शब्द विरोध की अभिव्यक्ति का प्रतीक बन जाता है। मानवीय संवेदनाओं के सरोकारों से जुड़कर सामाजिक प्रतिबद्धता स्थापित करता है।

दलित साहित्य की जितनी भी परिभाषाएँ हैं, उनका एकमात्र स्वर है। सामाजिक परिवर्तन अम्बेडकरवादी विचार ही उनकी एकमात्र प्रेरणा है। **बाबूराव बागूल** के शब्दों में कहें, *''मनुष्य की मुक्ति को स्वीकार करने वाला, मनुष्य को महान माननेवाला, वंश, वर्ण और जाति श्रेष्ठत्व का प्रबल विरोध करनेवाला साहित्य ही दलित साहित्य है।''* डॉ. **विमल थोरात** का मानना है, *''दलित साहित्य उस विद्रोह का उन्मेष है, जो किसी विशिष्ट जाति या व्यक्ति विरुद्ध नहीं बल्कि 'स्व' की खोज में निकले हुए एक पूरे समाज का पूर्व परम्पराओं से विद्रोह एवं अपने अस्तित्व की स्थापना का प्रयास है।''* इससे हम यह कह सकते हैं कि दलित साहित्य का जीवन दर्शन आज तक व्यक्त हुए जीवन दर्शन से भिन्न है। एक नया संस्कार, एक नया समाज, एक नया मनुष्य पहले पहल साहित्य में व्यक्त हुआ है। दलित साहित्य का यथार्थ अलग है। इस यथार्थ की भाषा अलग है। वर्ण-व्यवस्था के अमानवीय बंधनों ने शताब्दियों से दलितों के भीतर हीनता भाव को पुख्ता किया है। धर्म और संस्कृति की आड़ में साहित्य ने भी इस भावना की नीव सुदृढ़ की है ऐसे सौंदर्यशास्त्र का निर्माण किया गया जो अपनी सोच और स्थापनाओं में दलित विरोधी है। दलित लेखक ऐसी स्थितियों का सामना करते हुए कहते हैं कि दलितों की पीड़ा दलित ही समझ सकता है, वही उस पीड़ा का प्रामाणिक प्रवक्ता भी है। लेकिन हमें इस बार को पूर्ण रूप से नहीं मानना चाहिए दलित की पीड़ा को वह भी समझ सकता है जो उसे रोज उस हाल में देखता हो, और यह महसूस करता हो कि वह उसपर बीत रही है। बाबासाहब अम्बेडकर के विचारों से दलित को अपनी गुलामी

का एहसास हुआ। उनकी वेदना को वाणी मिली, क्योंकि मूक समाज को बाबासाहब के रूप में अपना नायक मिला। दलितों की यह वेदना ही दलित साहित्य की जन्मदात्री है। यह वेदना एक की नहीं है, न ही एक दिन की है। यह वेदना हज़ारों वर्षों की है। इसीलिए इस वेदना का स्वरुप सामाजिक है। आज दलित साहित्य अखिल भारतीय स्वरुप ले चुका है। साहित्य की लगभग सभी विधाओं में दलित साहित्य की अभिव्यक्ति उभरकर सामने आयी है।

दलित साहित्य का उद्भव भारतीय समाज-व्यवस्था की अमानवीयता से हुआ है। आज बदलते परिदृश्य में स्थितियाँ कुछ भिन्न हैं, और बहुत तेजी से बदल रहीं हैं। भारतीय समाज-व्यवस्था पर पाश्चात्य प्रभाव बहुत तीव्रता से अपनी जड़ें बढ़ा रहा है। भारतीय मानस की प्राथमिकताएं, मानसिकताएं, अभिरुचि, भाषा, व्यवहार भी बदल रहा है। एक ओर आधुनिकता के प्रति मोह में वृद्धि हुई है, तो दूसरी ओर सनातन संस्कृति और परम्पराओं को बचाए रखने का काम भी युद्ध स्तर पर हो रहा है। देश में मंदिरों की संख्या में वृद्धि हो रही है। इन बदलती स्थितियों, मानसिकताओं को साहित्य के लिए पकड़ना जरुरी है। जब समाज बदलता है तो साहित्य में भी परिवर्तन आता है। लेखक को एक साथ कई मोर्चों पर ध्यान केंद्रित करना होता है। यदि साहित्यकार इस बदलाव को अनदेखा कर देगा, तो वह समय के साथ नहीं चल पायेगा।

तेलुगु साहित्य जगत में लोक को प्रमुखता दी जाती है। लोक भाषा एवं लोक साहित्य का अपना एक विशिष्ट स्थान है। लोक साहित्य लोक कंठ से निःसृत साहित्य है। वैसे तो यह विमर्शों का युग है। हाशियाकृत समुदाय केंद्र की ओर आ रहें हैं और अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष कर रहे हैं। हर भाषा के साहित्य में इस प्रकार के विमर्श प्रधान साहित्य को भलीभांति देखा जा सकता है। तेलुगु साहित्य में भी दलित साहित्य की अवधारणा को देखा

जा सकता है। डॉ. कत्ति पद्मारव कृत 'दलित साहित्यवादम: जाषुवा' शीर्षक पुस्तक दलित साहित्य की अवधारणा को तेलुगु के कवि गुर्रम जाषुवा के परिप्रेक्ष्य में स्पष्ट करती है। स्मरणीय है कि तेलुगु साहित्य में दलित कवि के रूप में गुर्रम जाषुवा विख्यात हैं लेकिन वे मूल्यता मानववादी कवि हैं।

1.5 दलित कहानी का उद्भव और विकास

कहानी की उत्पत्ति तब हुई होगी, जब मनुष्य ने भाषा गढ़ ली होगी। एक तरफ़ वह आदि मनुष्य प्रकृति से जूझता रहा होगा, दूसरी तरफ़ उसी निर्भर या उसी के सहारे जीवित था। कविता की तरह कहानी एकाएक नहीं फूटा करती। कहानी तो घटा करती है यानी घटती है, इसलिए कहानी तो विकसित हुई होगी, गढ़ी और तराशी भी गई होगी। महाभारत में दोणाचार्य ने गुरु के शीर्ष स्थान पर बैठकर एक अन्य महत्त्वपूर्ण दलित कथा को जन्म दिया था, एकलव्य का अँगूठा जबरन कटवाकर, ताकि क्षत्रिय-पुत्र अर्जुन से शूद्र-पुत्र एकलव्य आगे न बढ़ जाए। सवर्ण इतिहास ने इसे एकलव्य का त्याग बताकर सदियों तक गुरु के छद्म को गौरवान्वित किया। लेकिन डॉ. अम्बेडकर ने जो तर्क की कसौटी दलित साहित्यकार के हाथों में दी तो सारा का सारा गौरव ढह गया-छद्म बेनक़ाब हो गया और एक और बड़ी कहानी, दलित-कहानी वाङ्मय के पृष्ठों पर उभर आई जो पूरे ढाँचे को चूर-चूर करने की कुव्वत रखती थी। एक और दलित कथा भी है इतिहास में, जब चाणक्य जैसे ब्राह्मण ने बदला लेने के लिए एक दलित लड़के चन्द्रगुप्त को राजा बना दिया था। चन्द्रगुप्त में योग्यता थी राजा बनने की, तभी तो बना है वह राजा, मात्र चाणक्य के प्रयास से नहीं। यह दलितों की योग्यता की कहानी थी, चाणक्य के मन में दलित प्रेम नहीं बल्कि राज्य के प्रति प्रतिशोध

था, खासकर राजा नन्द के प्रति चूँकि वह भी एक शूद्र ही था। यह इस बात का द्योतक है कि दलित बड़े-से-बड़े काम को अंजाम देने में भी सक्षम थे, इसीलिए चाणक्य के द्वारा चुना गया दलित बालक चन्द्रगुप्त राजा बना। तो दलित कहानी के इतिहास के बारे में हम यह कह सकते हैं कि दलित कहानी ने कल की गौरव गाथाओं की परिभाषा बदली। आज के सच की गाथा बनी दलित कहानी। भले सवर्ण वाड्मय के कर्त्ता धर्त्ताओं ने साहित्य में उसका महत्व नहीं माना, वे इतिहास लायक़ भी नहीं समझी गईं, चूँकि उनकी दृष्टि में कथा का नायक दलित बन ही नहीं सकता था, पर वे सदैव अस्तित्व में रहीं।

भारतीय भाषा साहित्य में सबसे पहले मराठी में दलित साहित्य आरम्भ हुआ। इसके पीछे महात्मा फूले और डॉ. बाबा साहब अम्बेडकर के विचारों की प्रेरणा तथा दलित पैंथर नामक जुझारू आंदोलन का प्रभाव था। इसके बाद तमिल, तेलुगु, पंजाबी, असमी, बंगला आदि भाषाओँ में दलित साहित्य का लेखन आरम्भ हुआ। हिंदी में यह सबसे अंत में पहुँचा। इसके अनेक कारणों में से एक है हिंदी प्रदेश की सामंती मानसिकता। कबीर, अछूतानंद जैसे कवियों की यहाँ सोच-समझकर उपेक्षा की गयी। स्वामी अछूतानंद ने अछूत का मतलब श्रेष्ठ माना है। उन्होंने अनेक नाटक, कविताएं तथा गीतों की रचना की। बीसवीं सदी के अंतिम दो दशकों में दलित साहित्य हिंदी में प्रखरता के साथ सामने आया है। परन्तु हिंदी कहानी के उद्भव और विकास के इतिहास में दलित कहानी का कोई इतिहास नहीं मिलता। दलित जीवन से जुड़ी प्रेमचंद द्वारा लिखित कहानियाँ सन 1929-30 के आसपास जरूर मिलती है लेकिन दलित द्वारा लिखित किसी भी कहानी का जिक्र नहीं मिलता, जबकि लोक में दलित की उपस्थिति से आप इंकार नहीं कर सकते। हिंदी में अम्बेडकरवादी विचारों एवं चेतना पर आधारित दलित कहानी लेखन का समय मोटे तौर पर सन 80 के दशक के उत्तरार्द्ध

को माना जा सकता है। हिंदी की दलित कहानियों ने पिछले दो दशक से दलित चिंतन को अपनी विशिष्टता से काफी संवर्द्धित किया है। हिंदी के दलित कहानीकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, प्रेम कपाड़िया, बी. एल. नायर, सूरजपाल चौहान, कावेरी, कुसुम मेघवाल, जयप्रकाश कर्दम, विपिन बिहारी, नीरा परमार इस दौर के महत्त्वपूर्ण कहानीकार हैं, उनकी कहानियों में अभिव्यक्त दलित जीवन की त्रासद सच्चाई हमें दिखती है। समय का बदलाव और दबाव कुछ ऐसा था कि सामंती व्यवस्था दलित साहित्य की उपेक्षा न कर सकी। हिंदी में दलित साहित्य आत्मकथा, उपन्यास, कहानी, कविता तथा समीक्षा के रूप में लिखा जा रहा है। यहाँ पर मैं दलित कहानी का इसमें उल्लेख करती हूँ। आवाज़ें, हमारा जवाब (मोहनदास नैमिशराय), घुसपैठिए, सलाम (ओमप्रकाश वाल्मीकि), सुरंग (दयानन्द बटोही), हैरी कब आएगा (सूरजपाल चौहान), तीन महाप्राणी (बुद्ध शरण हंस), दूसरी दुनिया का यथार्थ (रमणिका गुप्ता), चार इंच की कलम (कुसुम वियोगी), अपना मकान (बिपिन बिहारी), हाशिये का बाहर (रजत रानी मीनू), नयी सदी की पहचान- श्रेष्ठ दलित कहानियां (संपादक-मुद्राराक्षस) आदि कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए हैं। इसी प्रकार हंस, दलित साहित्य (वार्षिकी), युद्धरत आम आदमी, बयान आदि पत्र-पत्रिकाओं में भी दलित कहानियाँ प्रकाशित हो रही हैं। इन कहानियों में भाव एवं शिल्प की नवीनता है, जीवन की प्रामाणिक अनुभूति है, समाज का यथार्थ चित्रण है। इसी प्रकार सन 1970 के दशक में छुट-पुट दलित पत्र-पत्रिकाओं व स्मारिकाओं में कहानी विधा के मानदंडों को पूरा करती हुई, हिंदी की दलित कहानियाँ भी प्रकाशित होना प्रारम्भ हो गयी थीं। 1975 में ***सतीश*** की **वचनबद्ध** कहानी को हम पहली दलित कहानी मान सकते हैं।

दलित कहानी के विकास पर गौर करते हैं तो एक भरी पूरी पीढ़ी दिखाई पड़ती है। पिछली पीढ़ी में ओमप्रकाश वाल्मीकि से शुरू करें तो जयप्रकाश कर्दम, मोहनदास नैमिशराय, सूरजपाल चौहान, अनीता भारती, रजनी सिसोदिया, कैलाश वानखेड़े और संदीप मील जैसे कथाकार विरोध-प्रतिरोध का एक विमर्श रचते दिखाई देते हैं। ये कहानियाँ एकरेखीय न होकर बहुअर्थी संवेदना के सूत्र हमारे सामने प्रस्तुत करती हैं। इस लेख का उद्देश्य उन्हीं सूत्रों को पकड़ना है। जहाँ कहानी प्रचलित और प्रसिद्ध पाठ के बाहर कुछ अन्य अर्थों को पकड़ सके। और कहीं-कहीं कहानी बहुत चर्चित न पर जरूरी लगे, पुष्पा भारती की 'जूता' ऐसी ही कहानी हैं राजेन्द्र बड़गूजर की 'इनाम' हरियाणवी समाज में जाटों की अवसरवादिता और दलितों के प्रति उनके 'यूज़ एण्ड थ्रो' वाले दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती है। दलित कहानी में एक नहीं अनेक स्वर हैं। आज की दलित कहानी में चेतना के धरातल इकहरे नहीं हैं। दलित कहानी जाति के अलावा, सामाजिक न्याय, साम्प्रदायिक विसंगतियों, प्रशासनिक घालमेल और शोषण के बारीक तंतुओं को भी पकड़ती है। मायने कि दलित कहानी की कथ्य भूमि पहले से ज्यादा विस्तृत और आन्दोलनधर्मी हुई है।

वरिष्ठ लेखक ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'सलाम' जाति व्यवस्था के कुछ अलग स्तरों को दिखाती है। यहाँ परम्परागत जाति विरोध न होकर एक विखंडित अर्थ मिलता है। कमल उपाध्याय अपने परममित्र हरीश की बारात में जाता है। हरीश दलित है, उसकी उपजाति वाल्मीकि है। कमल गाँव की एक दुकान पर चाय पीने जाता है। वहां उसे बारात में आया दलित जानकर गाँव वाले उसका घोर अपमान करते हैं। दूधर उसका मित्र और दूल्हा हरीश सवर्णों के दरवाजे पर 'सलाम' के लिये जाने से इन्कार कर देता है। दूसरी तरफ एक दलित किशोर रोटी खाने से इसलिए इंकार कर देता है कि वह रोटी (नान) एक

मुसलमान कारीगर ने बनाई है। 'सलाम' एक साथ जाति-व्यवस्था के कई स्तरों को छूती है। कमल उपाध्याय जातिगत उत्पीड़न को झेलता है। एक झटके में ही वह दलित समाज की पीड़ा और दमन का भोक्ता बन जाता है। हरीश पढ़ा लिखा होने के कारण 'सलाम' का विरोध करता है। मात्र दलित ही जाति की पीड़ा को समझ सकता है, सवर्ण नहीं।

जयप्रकाश कर्दम के नाम हिन्दी दलित साहित्य का प्रारंभिक उपन्यास 'छप्पर' है। यह उपन्यास काफी चर्चित भी रहा है। इनकी कहानियाँ भी खासी चर्चित व सार्थक रही हैं। 'नो बार' एक ऐसी ही कहानी है। एक पढ़ा-लिखा, नौकरी-पेशा दलित युवक अखबार में वैवाहिक विज्ञापन देखता है। शादी के लिये उसे एक ही विज्ञापन में दिया गया रिश्ता पसन्द आ जाता है। विज्ञापन के इस रिश्ते की खासियत यह थी कि 'हाईली एजूकेटेड फेमिली, नो बार।' अर्थात् जाति का कोई बंधन नहीं व राजेश पत्र लिख देता है, बुलावा आता है। उस परिवार तथा लड़की अनिता से मेल मिलाप और बात शादी तक पहुंच जाती है, सब घुल-मिल जाते हैं। बातचीत से लड़की के पिता को शक होता है। पर्दे के पीछे जाकर पिता बेटी से राजेश की जाति के विषय में पूछता है। लड़की अनभिज्ञ है। वह अपनी बेटी को समझाता है। बेटी प्रतिवाद करती है *''पर क्यों पापा, जब हम जाति-पांति को मानते ही नहीं तो...' पिता का जवाब 'नो बार' का यह मतलब तो नहीं कि किसी चमार-चूहड़े के साथ... ।''*[7] कहानी यहाँ समाप्त होती है और शुरू होती है भारतीय हिन्दू समाज की महागाथा। तमाम प्रगतिशीलता के बावजूद यह समाज जाति को नहीं छोड़ना चाहता। यदि वह 'इंटरकास्ट मैरिज' की बात करता है तो अपने समान तथाकथित उच्च जाति में ही। 'नो बार' में दलित या अछूत जातियाँ नहीं आतीं। उनके लिये तो आज भी बार ही बार, बाधा ही बाधाद्ध हैं।

---

[7] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-45

यह कहानी सवर्णों की छद्म प्रगतिशीलता और बनावटी व नकली आधुनिकता पर तीखा व्यंग्य करती है। इस कहानी को पढ़कर लगता है कि तथाकथित सवर्ण और प्रगतिशील तबका मानसिक रोगी है। क्योंकि जब तक राजेश की जाति नहीं पता थी सब उस पर प्यार लुटा रहे थे लेकिन जाति का पता (सन्देह) होते ही लड़की के पिता का दिमाग फिर गया। ध्यान देने की बात यह है कि- *"अनिता वहीं खड़ी रह गई थी।"*[8] क्योंकि बाप (परिवार व समाज) द्वारा लगाई गई जाति की बार (बाधा) को वह भी पार नहीं कर सकती। या संभवतः पार करना नहीं चाहती। इतने दिनों की मुलाकातों में अनिता की राजेश से प्यार जैसा कुछ ही चला था। कहते हैं कि प्यार अंधा होता है, पर लगता है कि तमाम अंधेपन के बावजूद प्यार जाति तो देख ही लेता होगा। यह इस कहानी से प्रमाणित होता है। एक पाठ और है जो इस कहानी की समाप्ति के बाद पढ़ा-समझा जा पाया होगा ? क्या उसका हाल वाल्मीकि जी की कहानी 'सलाम' के कमल उपाध्याय जैसा नहीं हुआ होगा ? क्या एक ऐसा समाज बन पायेगा जहाँ वाकई 'नो बार' हो ? क्या प्रगतिशीलता या आधुनिकता मात्र कपड़ों की तरह बदली, पहनी व फेंकी जा सकने वाली अवधारणाएँ हैं ? यह कहानी ऐसे अनेक सवाल उठाती है और बनाती है कि तमाम भौतिक तरक्की के बावजूद हम आज भी पिछड़े, दकियानूस और पोंगा-पंथी ही हैं। 'जाति क्यों नहीं जाती ?' में एक पद और जोड़ लिया जाए 'जाति क्यों नहीं जाती सवर्णों के दिमाग से ?'

दलित कहानीकारों में कैलाश वानखेड़े का नाम महत्त्वपूर्ण है। कैलाश वानखेड़े चूंकि प्रशासनिक सेवा से जुड़े हैं अतः शासन-प्रशासन में व्याप्त जातिगत भेदभाव को वो बेहतर ढंग से चित्रित करते हैं। 'सत्यापन' उनकी प्रतिनिधि कहानी है। इसी शीर्षक से उनका कहानी

[8] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-45

संग्रह है। 'सत्यापन' करने वाली कहानी है। एक दलित युवक किसी सरकारी दफ्तर में अपना फोटो 'सत्यापन' (अटेस्टेड) करवाने जाता है। यहाँ उसकी कालोनी का नाम सुनकर ही क्लर्क उसे रोक देता है, घंटों खड़ा रखता है। इसी उपक्रम में वह 'भाऊ साहेब इंगले' से मिलता है। उसकी भी शिकायत है। अस्पताल में पत्नी की डिलीवरी करवाने के दौरान वह तमाम उत्पीड़न झेल गया लेकिन उसकी शिकायत है कि अस्पताल के काग़जों में पते के तौर पर वह 'बौद्धवाड़ा' लिखवाना चाहता है लेकिन नर्स 'महारवाड़ा' ही क्यों लिखती है। और फिर दोनों मिलकर सरकारी दफ्तर की बाबूशाही को चुनौती दे देते हैं।

अनीता भारती एक सक्रिय कार्यकर्ता और चर्चित लेखिका हैं। 'एक थी कोटेवाली' उनका कहानी संग्रह है। यों उनके कविता संग्रह तथा संपादित पुस्तकों की संख्या भी अच्छी खासी है। 'एक थी कोटेवाली' उनकी चर्चित, संक्षिप्त और असरदार कहानी है। दलित शिक्षिका गीता का चयन एक विद्यालय में होता है। यहाँ शिक्षिकाओं का पूरा स्टॉफ 'कोटेवालियों' और 'गैर कोटेवालियों' में बंटा रहता है। गीता सुबह पहले पीरियड से ज्वॉइन करती है और हर पीरियड की घंटी के साथ इन दोनों समूहों में उसकी जाति को लेकर कयास, पूर्वाग्रह और तनाव बढ़ता चला जाता है। गीता की मैरिट और आकर्षक व्यक्तित्व भी कोई धारणा कायम करने में बाधा बनते हैं। कहानी और उसका तनाव आठवें तथा अंतिम पीरियड तक चरम पर पहुंच जाते हैं। गीता अम्बेडकरवादी है, यह जानते ही सवर्ण शिक्षिकाओं का पारा चढ़ जाता है। गीता का साथ पाकर 'कोटेवाली शिक्षिका' उनका कड़ा और तार्किक जवाब देती हैं। और सबकी जाति बताती हैं। यह कहानी दर्शाती है कि कार्यस्थल पर यौन-उत्पीड़न रोकने वाले नियम व समितियाँ तो बनी हैं किन्तु जातिगत भेदभाव को रोका जा सके ऐसा कोई मैकेनिज़्म भी तो होना चाहिये। सवर्ण समाज किसी व्यक्ति की जाति जानते ही

निर्मम और पक्षपाती हो जाता है। सवर्ण वर्ग, शहरी परिवेश में उत्पीड़न की गंवई हरकत तो नहीं करता किन्तु संकेतों, कटाक्षों, शब्दों और शारीरिक भाषा के द्वारा वह ऐसा माहौल बना देता है कि बर्दाश्त नहीं होता। तब जाति व्यवस्था और इसके पैरोकारों के प्रति आक्रोश पनपना स्वाभाविक ही है। अनीता और श्रीमती सागर का गुस्सा जायज ही लगता है। अनीता भारती दलित स्त्रीवाद की मुहिम चलाए हुए हैं। वे दलित स्त्री के प्रश्न को अपने ढंग से उठाती हैं। प्रस्तुत कहानी दलित स्त्री के कार्यस्थल यानी स्कूल में व्याप्त जातिगत विसंगतियों को बेनकाब करती है। दलित पुरुष चूंकि इस जगह नहीं पहुंच सकता अतः दलित स्त्री को यह भूमिका निभानी पड़ी। इसी अर्थ में दलित स्त्रीवाद उभरकर आता है, क्योंकि दलित साहित्य का पुरुष साहित्यकार यहाँ तक पैठ नहीं बना सका है।

रजनी सिसोदिया ने कम परन्तु सार्थक कहानियाँ लिखी हैं। उनके 'चारपाई' कहानी-संग्रह में से 'ताड़का वध' कहानी का कथावाचक कॉलेज शिक्षक है। उसके घर (फ्लैट) के सामने सौमित्र रहता है जो सेना में अधिकारी है। उसके पिता की मौत नक्सलवादियों के द्वारा किये गये बारूदी सुरंग विस्फोट में हुई थी। अब सौमित्र की पोस्टिंग भी नक्सल प्रभावित क्षेत्र में हो जाती है। कथावाचक तथा सौमित्र के परिवार में तनाव का वातावरण है। हर फोन, हर आवाज़ पर कुछ अनिष्ट की आशंका होती है। जल-जंगल-जमीन का विमर्श भी चलता रहता है। पक्ष-विपक्ष के विचार भी कौंधते हैं। कथावाचक की कालोनी में चल रही रामलीला में 'ताड़का वध' के संवाद सुनाई पड़ते हैं। आदिवासी, नक्सल, पुलिस, राजनीति, मुख्यधारा और हाशिये का ऐसा कोलाज बनता है कि 'ताड़का वध' तो हो जाता है लेकिन सवाल खड़ा रह जाता है- 'हाय चाची ताड़का रोटी कौन पकाएगा ? हाय चाची ताड़का रोटी कौन

खिलाएगा ?' मुख्य-धारा के लिये कानूनी, न्यायिक और नैतिक जीत 'ताड़का वध' की तरह है लेकिन आदिवासियों के लिये अस्तित्व और अस्मिता का प्रश्न, रोटी का सवाल है।

स्पष्ट है कि दलित कहानी मात्र व्यक्तिगत या जातिगत दुख दर्द को ही बयान नहीं करती। वहाँ कुछ वृहद सरोकारों, समान संघर्ष और अस्मिता के विस्तार की भरपूर संभावनाएँ नज़र आती हैं। दलित कहानी मात्र शहरी-ग्रामीण परिवेश में जातिगत उत्पीड़न तक सीमित न रहकर आदिवासियों, मानवतावादियों के संघर्ष में सहभागी होकर उसे मज़बूती और विस्तार देती है। मिथकों का रचनात्मक उपयोग यहाँ दिखाई देता है। ध्यान देने की बात यह है कि दलित कहानीकार मिथकों का उपयोग अपने ढंग से कर रहे हैं। मिथक मूल निवासियों की संवेदना से जुड़े हैं। इसके कारण प्राचीन देव-न्याय आज अन्याय की श्रेणी में आ गया है। यह एक प्रकार से ब्राह्मणवादी वैचारिकी को पलट देने का उपक्रम है।

वैसे तो दलित साहित्य प्रतिरोध का साहित्य है, लेकिन कहानी विधा में विरोध प्रतिरोध का तेवर अपेक्षाकृत ज्यादा मुखर और धारदार होता है। इसका कारण यह है कि आत्मकथा जो कि दलित साहित्य की प्रतिनिधि विधा है, व्यक्ति विशेष की संघर्ष गाथा बन जाती है, कविता कवि का आक्रोश, नाटक स्थितियों का बयान । परन्तु कहानी लेखक, पात्रों, घटनाओं, परिवेश आदि का ऐसा समग्र बिम्ब प्रस्तुत कर देती है कि पाठक के चेतन अवचेतन का हिस्सा बन जाती है। पाठक के रूप में कहानी एक मुहिम और उसका एक पैरोकार तैयार करती है।

तेलुगु साहित्य में छोटी कहानियों का आरम्भ 16वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ। परन्तु सबसे पहली मौलिक तेलुगु कहानी आंध्र के महाकवि स्वर्गीय श्री गुरजाड अप्पाराव ने सन 1610 में लिखी थी। इसके पूर्व की जो कहानियाँ हमें तेलुगु साहित्य में मिलती हैं, वे संस्कृत

से अनुदित अथवा संस्कृत के आधार पर लिखी गयीं थीं। श्री अप्पाराव जी के बाद बाकी के लेखक भी मौलिक लिखना शुरू कर दिए। ऐसे में ही श्री अनीसेट्टी सुब्बाराव प्रगतिशील कहानीकार हैं। इनकी कहानियाँ दलित, पीड़ित मानव को लेकर लिखी गयी हैं। 'अनीसेट्टी कथलु' करके इनका कहानी-संग्रह प्रकाशित हुआ है जिसमें कुल आठ कहानियाँ हैं। वस्तु, पात्र, चित्रण, भाषा, शैली और प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से तेलुगु दलित कहानी में वैविध्य है, व्यापकता है और गहनता है। प्रत्येक रीति के रचनाकारों की संख्या भी अधिक हैं।

निष्कर्ष

वास्तव में दलित वाद ने हिंदी साहित्य (मुख्यधारा) के अंदर एक लम्बी लड़ाई लड़ी है। वे बार-बार गिरे हैं, फिर उठे हैं। उन्होंने अपनी तथा अपने समाज की समस्याओं को लेकर संघर्ष किया है, तब जाकर उन्हें हाशिये से केंद्र में थोड़ी सी जगह मिली है। जहाँ हिंदी साहित्य अभी भी दलित साहित्य को एक नयी मुख्यधारा न मानकर, केवल प्रवृत्ति या विमर्श मान रहा वहीं दलित साहित्य में नए लेखकों की कतार नई पुस्तकों के साथ आयी है, उन्हें देखकर साफ़ लगता है कि दलित साहित्य में सामाजिक संघर्ष और पहचान की प्रक्रिया तीव्र हुई है। यह पाठक वर्ग के लिए भी एक अच्छा संकेत है क्योंकि पारम्परिक पाठ से अब हिंदी का पाठक वर्ग ऊब रहा है तथा दलित पाठ अपनी विषयवस्तु और नए स्वरुप के कारण पाठकों को आकर्षित कर रहा है।

दलित साहित्य संकीर्णता का साहित्य नहीं है और न ही यह कोई नया वर्णवाद गढ़ रहा है। इसका प्रमुख आदर्श विखंडन की जगह सामंजस्य एवं सम्पूर्णता को लेकर है। दलित शब्द आधुनिकता का बोध कराता है परतु दलितपन की संज्ञा ऐतिहासिकता एवं प्राचीनता

की ओर उन्मुख करती है। ऐतिहासिक दस्तावेजों की बात करें तो प्राचीनकाल में दलित शब्द के परिवर्तित रूप शूद्र, अतिशूद्र, चांडाल, अन्त्यज, अस्पृश्य चांडाल, अवर्ण, पंचम, हरिजन आदि विशेषणों-उपमानों की दुखद ऐतिहासिक सांस्कृतिक यात्रा के बाद अपने वजूद की तलाश में है। दलित शब्द कुल मिलाकर इन सब शब्दों का पर्यायवाची माना जा सकता है।

दलित साहित्यकार डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के विचारों से प्रेरित है, लेकिन जो लेखक प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित नहीं हैं, परन्तु वे दलित चेतना, दलित मुक्ति और दलितों के मानवीय अधिकारों के प्रति जागरूकता लाने के उद्देश्य से साहित्य-सृजन कर रहे हैं, ऐसे साहित्यकारों को भी दलित साहित्य में रखा जाना चाहिए। **डॉ. धर्मवीर** की उस मान्यता पर विचार करना अपेक्षित है जिसमें उन्होंने कहा- *"दलित जो भी लिख रहे हैं मात्र वही सच्चा दलित साहित्य है।"* इससे अच्छा-बुरा अम्बेडकरवादी बुद्ध, या गांधीवादी विचारों से युक्त या मुक्त होकर भी उसकी पहली शर्त यह है कि दलित साहित्य तर्क पर आधारित साहित्य है और यह मूल में सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक न्याय की बात करता है। दलित साहित्य के वर्तमान रूप की सार्थकता तब तक बनी रहेगी, जब तक इस देश में जातिगत और आर्थिक असमानता के बीज बने रहेंगे। भविष्य में असमानताओं के बदलते स्वरुप समान ही उसका कोई नया नाम भी दिया जाना आश्चर्यजनक नहीं होगा। यानी दलितों की पृथक पहचान होने के कारण उनका साहित्य भी पृथक है। यहाँ यह स्पष्ट करना भी आवश्यक है कि वर्तमान समय में हम दलितों में ऐसे साहित्य को प्राथमिकता नहीं देंगे, जो सनातनी वर्ण-भेद की विचारधारा का पोषण कर रहा है। अपने उद्देश्य में दलित साहित्य दलित मुक्तिकामी विचारधारा का साहित्य है।

दलित कहानी का यथार्थ, उसकी भावभूमि बिलकुल अलग है। हिंदी की परंपरागत साहित्यिक परंपरा के समान्तर इसका विकास हुआ है, दलित कहानियों का कलेवर और

बिम्ब बिलकुल अलग है। इसकी भाषा एवं संवेदनाएं नए सौंदर्यबोध का सृजन करती है। समतापरक समाज की संरचना दलित कहानियों का मुख्य ध्येय है जो अम्बेडकरवादी विचारधारा पर आधारित है। दलित चेतना की सार्थक अभिव्यक्ति दलित कथाकारों की कहानियों में देखी जा सकती है। दलित साहित्य एक जलते हुए दीपक के समान है जिसकी रोशनी में राह से भटका हुआ पाठक सोच-समझकर आगे चलता है। द्वितीय अध्याय में दलित कहानी की भाषा की चर्चा करके उसके विविध रूप को जानेंगे और उसकी संरचना पर भी बात की जाएगी।

द्वितीय अध्याय

दलित कहानी की भाषा के विविध रूप और उसकी संरचना

दलित लेखक के चित्रण में सच्ची अनुभूति है, मात्र सहानुभूति नहीं। दलितों पर होने वाले सामाजिक अत्याचारों को अनुभूति के साथ चित्रित किया है। इस सन्दर्भ में अनेक कहानियों के नाम गिनाये जा सकते हैं। उदाहरण के लिए मोहनदास नैमिशराय जी की कहानी 'हमारा जवाब' देखी जा सकती है। इस कहानी का नायक हिम्मत सिंह वास्तव में हिम्मत वाला था। आगरा के एक दलित बस्ती का हिम्मत कुछ नया करने की तमन्ना रखता है। वह उच्च वर्ग की बस्ती जीवनी मंडी में मिठाई का खेमचा लगाता है। वह मेहनत से पेट भरना चाहता है। पर मिठाई की खुशबू भी उसके दलित होने को छिपा न सकी। एक दलित की यह हिम्मत की वह सरे आम मिठाई बेचे। मानो जीवनी मंडी में वह मिठाई नहीं वह अपनी जाति बेच रहा हो। और लोग हैं कि उससे मिठाई नहीं, जाति खरीद रहे हों। हिम्मत अंतिम क्षण तक संघर्ष करता है, हार नहीं मानता। इस कहानी में चित्रित वस्तु हिम्मत की अपनी मेहनत है न कि सहानुभूति जो सवर्ण जाति दिखाती है।

2.1 दलित साहित्य में रचित कहानियाँ

दलित साहित्य की प्रथम दलित कहानी कौन सी है यह एक विवाद का विषय है। सतीश द्वारा रचित "वचनबद्ध" 1975 में 'मुक्ति' स्मारिका में प्रकाशित तो कुछ लोग मोहनदास

नैमिशराय की "सबसे बड़ा सुख" 1978 में 'कथालोक' में प्रकाशित को प्रथम दलित कहानी मानते हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी "अंधेरे बस्ती" और राम निहोर विमल की "आखिरी मौत" का नमोल्लेख भी प्रारम्भिक दलित कहानियों में आता है। प्रवृत्ति और चेतना के आधार पर "अंधेरे बस्ती" अद्वितीय है। इन कहानियों के अलावा और भी कई संग्रह प्रकाशित हैं जैसे कि मोहनदास नैमिशराय का "आवाजें", दयानंद बटोही का "सुरंग", काबेरी का "द्रोणाचार्य एक नहीं", ओमप्रकाश वाल्मीकि के "सलाम" और "बहुरुपिये", सुशीला टाकभौरे के "टूटता बहम" और "अनुभूति के घेरे", जयप्रकाश कर्दम का "तलाश", सूरजपाल चौहान की "हैरी कब आएगा" आदि प्रमुख कहानी संग्रह है। इसके आलावा कुछ सम्पादित कहानी संग्रह भी है जैसे डॉक्टर कुसुम वियोग द्वारा सम्पादित "यातना की परछाइयाँ", रमणिका गुप्ता द्वारा सम्पादित "दूसरी दुनिया का यथार्थ" और "दलित कहानी संचयन", सूरजपाल चौहान द्वारा सम्पादित "हिंदी दलित कथाकारो की पहली कहानी"। सन 1980 के बाद से हिंदी दलित कहानी की चेतना प्रखर होने लगती है। सन 1990 के बाद अनेक दलित कहानी संग्रहों के प्रकाशन से इसका प्रभाव पाठक पर पड़ता है और यह जन सामान्य तक पहुंचता है। हिंदी के दलित कहानीकारों में मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि का नाम शीर्ष पर है। इनकी नवीनता, मौलिकता और दलित समस्याओं को शिद्दत से उठाने की जो क्षमता है वह इन्हें शीर्ष स्थान देती है। ये लेखक दलितों की आशा, आकांक्षा और समस्या को उस समय कहानियों में स्थान दिये, जब हिंदी साहित्य में दलितों की आवाज का अस्तित्व भी नहीं था। इन दलित रचनाकारों की कहानियाँ यथार्थपरक अंदाज में लिखी गयी हैं। जहाँ एक ओर वर्णवादी-सामंती शोषण है तो दूसरी ओर दलितों की दयनीय दशा। भारतीय समाज के इस सच को व्यक्त करने के लिए जो साहस होना चाहिए वन इस कहानीकारों में है। ये

कहानीकार समाज के सुंदर स्वरूप के स्थान पर उसकी विसंगति, विद्रूपता और वीभत्सता का यथातथ्य निरूपण करते हैं। इनमें दलित चेतना और उत्पीड़न के जितने पक्ष हैं उनमें से अधिकांश की समझ और अभिव्यक्ति का कौशल इनके पास है। इसी कारण से ये कहानियाँ 'वाह' की नहीं 'आह' की हैं।

2.2 दलित कहानीकारों का विवेचन

वैसे तो सम्पूर्ण दलित साहित्य प्रतिरोध का साहित्य है, लेकिन कहानी विधा में विरोध प्रतिरोध का तेवर अपेक्षाकृत ज्यादा मुखर और धारदार होता है। इसका कारण यह है कि आत्मकथा जो कि दलित साहित्य की प्रतिनिधि विधा है, व्यक्ति विशेष की संघर्ष गाथा बन जाती है, कविता कवि का आक्रोश, नाटक स्थितियों का बयान। परन्तु कहानी लेखक, पात्रों, घटनाओं, परिवेश आदि का ऐसा समग्र बिम्ब प्रस्तुत कर देती है कि पाठक के चेतन अवचेतन का हिस्सा बन जाती है। पाठक के रूप में कहानी एक मुहिम और उसका एक पैरोकार तैयार करती है।

दलित कहानी के सर्वाधिक चर्चित कथाकार हैं- ओमप्रकाश वाल्मीकि। इनके दो कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं– 'सलाम'(2000) और 'घुसपैठिये'(2003)। और कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुईं। इनका असमय निधन 17 नवंबर (रविवार) 2013 को हुआ। और अपने पीछे छोड़ गये एक वृहद कथा एवं आत्मकथा लेखन की परंपरा। समय से संघर्ष करता हुआ वह दलित साहित्य का विरला लेखक था। जिसने अपनी साफ़गोई से सभी को अपनी ओर आकर्षित किया। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ उनके भोगे और जिए हुए जीवन का सच हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने अपने समय में

हिंदी साहित्य की एक ऐसी गैर-उर्वर भूमि को तोड़कर उपजाऊ भूमि में तब्दील किया जो सदियों से उपेक्षित पड़ी थी । यद्यपि हिंदी साहित्य लिखा जा रहा था पर वह जातिवाद से पीड़ित वर्ग, जाति भेद से पीड़ित समाज की आवाज नहीं बन रहा था। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने इस बंजर भूमि को जोत-बोकर इस पर दलित साहित्य की फसल उगाई। यह कार्य उस दौर में बहुत कठिन था। मगर ओमप्रकाश वाल्मीकि ने यह कर दिखाया।

इसके साथ ही उन्होंने दलित साहित्यकारों को यह सन्देश दिया कि हमें क्या लिखना चाहिए और क्यों लिखना चाहिए। उन्होंने साहित्य को मनोरंजन के लिए नहीं बल्कि एक खास मकसद के लिए लिखने की बात कही। उन्होंने "अम्मा" जैसी कहानी लिखी जो मैला ढोने वाली महिलाओं का प्रतिनिधित्व करती है। उन्होंने दलित वर्ग के आपसी मतभेदों को भी सामने रखने के लिए "शवयात्रा" जैसी कहानी भी लिखी जो उस सामय बहुत चर्चित रही । हालांकि उसकी आलोचना भी बहुत हुई। किसी कृति की आलोचना करना बुरा नहीं है यदि वह सही नीयत और निष्पक्ष ढंग से की जाए। ओमप्रकाश वाल्मीकि का रचना संसार उनका साहित्य नई पीढ़ी का उसी तरह मार्ग दर्शन करता है जिस प्रकार अँधेरे में सागर के यात्रियों को लाइट हाउस या प्रकाशस्तम्भ। ओमप्रकाश वाल्मीकि के परिचय के बारे में **जयप्रकाश कर्दम** ने लिखा है– *"हिन्दी साहित्य में ओमप्रकाश वाल्मीकि एक ऐसा नाम है, जिसने अपनी रचनाओं के माध्यम से कुलीनता और अभिजात्य संस्कृति के मूल्यों में रचे-बसे हिंदी साहित्य की सदियों पुरानी जड़ता को तोड़ा और समाज की भांति साहित्य की चौखट से बाहर उपेक्षित पड़े दलितों को साहित्य के केन्द्र में लाकर खड़ा किया।"*[9]

---

[9] ओमप्रकाश वाल्मीकि: व्यक्ति, विचरक और सृजक; सं. जयप्रकाश कर्दम; पृ- 29

हिन्दी पटटी में दलित साहित्य को सामने लाने, उसको स्थापित करने और परंपरागत हिन्दी साहित्य के समांतर दलित साहित्य के बुनियादी सरोकारों को उजागर करने में जिन दलित साहित्यकारों का महत्वपूर्ण योगदान है उन दलित कहानीकारों में जयप्रकाश कर्दम एक जाना-पहचाना नाम है । वह दलित साहित्य के एक सशक्त हस्ताक्षर हैं और अपने व्यक्तित्व, सृजनकर्म के बूते अपने समकालीनों में काफी चर्चित और समादृत हैं। जयप्रकाश कर्दम एक बहुआयामी प्रतिभावाले साहित्यकार और चिंतक हैं । कविता, कहानी और उपन्यास लिखने के अलावा दलित समाज की वस्तुगत सच्चाइयों को सामने लानेवाली अनेक निबंध व शोध पुस्तकों की रचना व संपादन भी उन्होंने किया है। उनके अथक प्रयासों के चलते दलित साहित्य वार्षिकी, दलित साहित्य में दलित सोच और सृजन का एक बुनियादी आधार बन गई है। डॉ. जयप्रकाश कर्दम हिन्दी दलित साहित्य के सशक्त सर्जक है । हिन्दी दलित साहित्य के प्रथम पीढ़ी के हस्ताक्षर है। वे दलित वर्ग से जुड़े होने के कारण उनका साहित्य अनुभूति का साहित्य न बनकर स्वानुभूति का साहित्य हैं। उनके साहित्य में दलित जीवन से सम्बन्धित यथार्थ चित्रण मिलता है । उनका साहित्य दलित जीवन की संवेदनशीलता और अनुभवों का यथार्थ हैं। डॉ. जयप्रकाश कर्दम का साहित्य दलितों के जीवन-संघर्ष और उनकी बेचैनी का जीवंत दस्तावेज है। इनके साहित्य में दलित जीवन की विडम्बना, दुःख, पीड़ा, कशक तथा छटपटाहट दिखाई देता है। वे अपने साहित्य के माध्यम से समाज में नवनिर्माण चाहते हैं। उनके साहित्य की मांग विश्वदृष्टि, जातिभेद का त्याग, उदात्त आदर्श भाव तथा आदर्श जीवन का निर्माण करना है। जो सम्पूर्ण मानव जाति को सत्य के प्रशस्त मार्ग पर अग्रसर करना है। यहाँ 'नो बार' एक ऐसी ही कहानी है। एक पढ़ा-लिखा, नौकरी-पेशा दलित युवक अखबार में वैवाहिक विज्ञापन देखता है। शादी के लिये उसे एक

ही विज्ञापन में दिया गया रिश्ता पसन्द आ जाता है। विज्ञापन के इस रिश्ते की खासियत यह थी कि 'हाईली एजूकेटेड फेमिली, नो बार।' अर्थात् जाति का कोई बंधन नहीं व राजेश पत्र लिख देता है। बुलावा आता है। उस परिवार तथा लड़की अनिता से मेल मिलाप और बात शादी तक पहुंच जाती है, सब घुल-मिल जाते हैं। बातचीत से लड़की के पिता को शक होता है। पर्दे के पीछे जाकर पिता बेटी से राजेश की जाति के विषय में पूछता है। लड़की अनभिज्ञ है। वह अपनी बेटी को समझाता है। बेटी प्रतिवाद करती है *"पर क्यों पापा, जब हम जाति-पांति को मानते ही नहीं तो...' पिता का जवाब 'नो बार' का यह मतलब तो नहीं कि किसी चमार-चूहड़े के साथ...।"*[10] यह कहानी सवर्णों की छद्म प्रगतिशीलता और बनावटी व नकली आधुनिकता पर तीखा व्यंग्य करती है। जयप्रकाश कर्दम अपनी कहानियों के जरिए समाज का आईना हमारे समक्ष रखते हैं।

डॉ. जी. वी. रत्नाकर की कहानियाँ समकालीन, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक पक्षों को उजागर करती है। स्वतंत्रता के 60 वर्षों बाद भी भारत में किस तरह दलितों, अल्पसंख्यकों व गरीबों का शोषण किया जाता है। उसका यथार्थ चित्रण डॉ. रत्नाकर ने अपनी अनुवाद कला के माध्यम से तेलुगु की मूल कहानियों की कहानी कला को हिन्दी भाषियों के सामने प्रस्तुत किया है। डॉ. रत्नाकर ने अपनी अनुवाद कला को इन 12 कहानियों में अजमाया है और मूल कहानियों के साथ न्याय करने का भरसक प्रयास किया है। इन कहानियों में चित्रित राजनीतिक सामाजिक समस्याएं और उन समस्याओं के समाधान का मार्ग भी हमें कुछ कहानियों में दिखलायी देता है। सामाजिक मूल्यों का पतन किस प्रकार हो

[10] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-45

रहा है और इन मूल्यों के प्रति युवा पीढ़ी का आक्रोश भी इन कहानियों के माध्यम से पाठक को एहसास होता है।

2.3 दलित कहानी के विभिन्न रूप एवं पक्ष

दलित लेखन एक ऐसा विषय है जिस पर बिना बात किये नहीं रहा जा सकता है। भारत में सबसे अधिक किसी वर्ग पर अत्याचार हो रहे हैं वह है – दलित और पिछड़ा समाज। दलित किसी धर्म का हो सकता है जिसके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता हो, जिसे न्याय पाने में कठिनाई आ रही हो। जब ऐसे समाज के रचनाकार अपनी क़लम से लिखेंगे तो जीवन की सच्चाई को लिखेंगे, न कि बनावटी और दिखावटी यथार्थ को प्रस्तुत करेंगे। वह जिए हुए सच को अपनी रचनाशीलता में नया आयाम देने का प्रयास करेंगे। ऐसे में उनका पूर्ववर्ती लेखन से भिन्न होगा। वह कल्पना की उड़ान की निजता नाम मात्र की होगी।

दलित कथा लेखन की परंपरा प्रेमचंद से अवश्य प्रारंभ होती है लेकिन दलित लेखकों द्वारा यह विधिवत परंपरा महीप सिंह द्वारा संपादित पत्रिका सारिका के 1982 से प्रारंभ होता है। किंतु इसके पूर्व चाँद पत्रिका का अछूत अंक अवश्य प्रकाशित हुआ। इस अंक को अधिक महत्त्व नहीं दिया गया। इस लेखन की धार यहीं पर कुंद हो गयी। सारिका पत्रिका के सन् 1982 अंक में साहित्य और समाज नई हलचल उत्पन्न कर दी। लोगों को सोचने के लिए विवश कर दिया। यहीं से प्रारंभ होता है दलित कहानियों का सिलसिला।

दलित कहानी के विकास पर गौर करते हैं तो एक भरी पूरी पीढ़ी दिखाई पड़ती है। पिछली पीढ़ी में ओमप्रकाश वाल्मीकि से शुरू करें तो जयप्रकाश कर्दम, मोहनदास नैमिशराय, सूरजपाल चौहान, अनीता भारती, रजनी सिसोदिया, कैलाश वानखेड़े और संदीप

मील जैसे कथाकार विरोध-प्रतिरोध का एक विमर्श रचते दिखाई देते हैं। ये कहानियाँ एकरेखीय न होकर बहुअर्थी संवेदना के सूत्र हमारे सामने प्रस्तुत करती हैं। इस लेख का उद्देश्य उन्हीं सूत्रों को पकड़ना है। जहाँ कहानी प्रचलित और प्रसिद्ध पाठ के बाहर कुछ अन्य अर्थों को पकड़ सके। और कहीं-कहीं कहानी बहुत चर्चित न पर जरूरी लगे, पुष्पा भारती की 'जूता' ऐसी ही कहानी हैं राजेन्द्र बड़गूजर की 'इनाम' हरियाणवी समाज में जाटों की अवसरवादिता और दलितों के प्रति उनके 'यूज़ एण्ड थ्रो' वाले दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती है। समकालीन दलित कहानी में एक नहीं अनेक स्वर हैं। आज की दलित कहानी में चेतना के धरातल इकहरे नहीं हैं। दलित कहानी जाति के अलावा, सामाजिक न्याय, साम्प्रदायिक विसंगतियों, प्रशासनिक घालमेल और शोषण के बारीक तंतुओं को भी पकड़ती है। मायने कि दलित कहानी की कथ्य भूमि पहले से ज्यादा विस्तृत और आन्दोलनधर्मी हुई है।

'घुसपठिये'(2003) कहानी संग्रह में कुल 12 कहानियाँ हैं। इस संग्रह की प्रथम कहानी 'घुसपैठिये' है। 'घुसपैठिये' कहानी उच्च-शिक्षण संस्थाओं में दलित छात्रों के प्रति होने वाले भेदभाव को सच के साथ प्रस्तुत करती है। रैंगिग के नाम पर इस कहानी में सुभाष सोनकर की प्रवण मिश्रा द्वारा जमकर पिटाई की जाती है। ऐसे चित्र को कहानीकार ने जीवंतता के साथ दिखाया है, "दलित छात्रों को अलग खड़ा करे अपमानित करना तो रोज का किस्सा है प्रवेश परीक्षा के प्रतिशत अंक पूछकर थप्पड़ या घूँसों का प्रहार होता है। जरा विरेध किया तो लात पड़ती है यह दो-चार दिन नहीं साल के साल चलता है और पिटाई और कॉलेज छात्रावास तक ही सीमित नहीं है। शहर के कॉलेज तक जाने वाली बस में भी पिटाई होती है। कोई एक सीनियर चलती बस में चिल्लाकर कहता है, *"इस बस में जो भी चमार स्टूडेंट है.....वह खड़ा हो जाए......फिर उसे धकियाकर पिछली सीटों पर ले जाया जाता है, जहाँ*

पहले बैठे सीनियर लात घूँसों से उसका स्वागत करते हैं।.....प्रणव मिश्रा अपनी अवहेलना पर तिलमिला गया। सोनकर के बाल पकड़ अपनी ओर खींचे। 'क्यों वे चमरटे सुनाई नहीं पड़ा हमने क्या कहा था ?'...... 'सोनकर बाल छुड़ाने की कोशिश ....मैं चमार नहीं हूँ' बालों की पकड़ मजबूत थी सोनकर कराह उठा प्रणव मिश्रा का झन्नाटदार थप्पड़ सोनकर के गाल पर पड़ा...(गाली)......चमार हो या सोनकर ......ब्राह्मण तो नहीं हो...हो तो सिर्फ़ कोटेवाले.....बस इतना ही काफी है, प्रणव मिश्रा ने सोनकर को लात घूँसों से अधमरा कर दिया।"[11] इस संग्रह की अन्य कहानियों में 'यह अंत नहीं', 'मुंबई काण्ड', 'शवयात्रा', 'प्रमोशन', 'कूड़ाघर', 'मैं ब्राह्मण नहीं हूँ', 'रिहाई', 'ब्रह्मास्त्र', 'हत्यारे', एवं 'जंगल की रानी' हैं।

निःसंदेह ओमप्रकाश वाल्मीकि की दलितों की मानवीय संवेदनाओं के सभी पक्षों को उदघाटन करती है दलित समाज की समस्याओं को मुद्दों के रूप में पाठकों के समक्ष रखती है। इनकी कहानियों में धर्म के पाखंड रूप को, ईश्वर के प्रति विश्वास के साथ मठाधीशों पर करारा चोट करते हैं। भाग्यवाद, पुनर्जन्म, परंपराएँ, रूढ़ियाँ, दासता, अंधविश्वास जातिवाद के प्रति आक्रोश, उच्चता-निम्नता, जातीय संकीर्णता इत्यादि के विरुद्ध आवाज़ उठाती दिखाई देती हैं। जड़वादी संस्कृति तथा न्याय-अन्याय के की परिभाषा को बदलने का सार्थक प्रयत्न भी करती दिखाई देती हैं। जातिगत प्रश्नों, शैक्षिक वंचनाओं, आर्थिक शोषण, सामाजिक शोषण, धार्मिक बहिष्कार, सांस्कुतिक कूप मण्डूकता, राजनीतिक अज्ञानता, चेतना मूलक दिशा देने, जड़वादी सामंती मानसिकता पर प्रहार और तिरस्कार के विरुद्ध

[11] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-16

आवाज़ बुलंद करती दिखाई पड़ती हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ दलित कथा लेखन में नई दीवार खड़ी की है और नए परिवर्तन का आग़ाज़ किया है।

जयप्रकाश कर्दम की कहानियाँ दलित राजनीति आंदोलन से प्रभावित होती दिखाई पड़ती हैं। दलित राजनीति के आंदोलन पर लिखी गयी उनकी कहानी है– मूवमेन्ट। 'मूवमेन्ट' कहानी का नायक सामाजिक कार्यों से प्रायः घर से बाहर ही रहता है और अपनी पत्नी तथा बच्चों को समय नहीं दे पाता। उसकी पत्नी सुनीता इस बात से बहुत नाराज़ है। अपने पति से पूछती है, *"मैं पूछती हूँ क्या यही प्रगतिशीलता है तुम्हारी कि बाहर जाकर अन्याय और असमानता के ख़िलाफ़ भाषण झाड़ो और खुद घर में असमानता का व्यवहार करो ? यही मूवमेन्ट है तुम्हारा।"*[12] वह अपनी पत्नी सुनीता से भी सामाजिक आंदोलन में 'सहभागिता' करने के लिए कहता है, *"यही सच नहीं है। मैं तो सोचता हूँ कि तुम घर की चहार दीवारी से बाहर निकलकर सामाजिक आयोजनों में हिस्सा लो और काम करो।"*[13] यह कहानी दलित आंदोलन में दलित महिलाओं की भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए भी तत्पर दिखाई पड़ती है।

दलित लेखकों की एक बड़ी विशेषता है –अनुभव और भोगे हुए और समाज से टकराते हुए संघर्ष के चित्रों को अपनी कहानियों में प्रस्तुत करना। 'मोहरे' कहानी में स्कूल और कालेजों में दलित बच्चों के साथ होने वाले दुर्व्यवहार को प्रतिबिंब करती है। 'मोहरे' कहानी का नायक सत्यप्रकाश अपने विद्यालय में जातीय संकीर्णता का शिकार है। वह समझ गया है, *"ग़ैर दलित अध्यापक दलित बच्चों को पढ़ाने के प्रति गंभीर नहीं हैं ये नहीं चाहते*

[12] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-88

[13] वही; पृ-88

कि दलित बच्चे पढ़ लिखकर कामयाब हों, इसलिए वे हमारे बच्चों को पढ़ाने में तनिक भी रुचि नहीं लेते हैं। हमारा शिक्षित होना उनके लिए चुनौती बन सकता है। वे इस बात को अच्छी तरह समझते हैं। इसलिए पढ़ाने के बजाए वे उन्हें उल्टे हतोत्साहित करते हैं। बाबा साहब डॉ. अंबेडकर के लंबे संघर्ष और त्याग का फल कि आप लोग पढ़-लिखकर सरकारी नौकरी में हैं। यदि आप लोग चाहते हैं कि हमारा समाज तरक्की करे, हमारे समाज के बच्चे पढ़-लिखकर आगे बढ़ें तो लोगों को नौकरी की भावना से ऊपर उठकर इन बच्चों को पढ़ाने के लिए अतिरिक्त उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेना होगा।"[14] और सत्यप्रकाश इस उत्तरदायित्व को पूरी ईमानदारी के साथ कर रहा था। इसलिए अध्यापक रामदेव त्रिपाठी उसके विरुद्ध षड़यंत्र रचाकर उसका स्थान्तरण एक ऐसे स्थान पर करवा देता है, जो उसके लिए नितांत असुविधाजनक है।

यह कहा जा सकता है कि दलित कहानीकारों ने अपनी कहानियों के द्वारा दलित समाज की विविध समस्याओं, मुद्दों और जीवित यथार्थ को सत्यता और अनुभव के साथ अपनी कहानियों में रचते हैं। यह रचनात्मक अनुभव और जीवानुभव से गुजरे हुए कथाकार का हिस्सा हैं। वह अपने जिए हुए सच को अपने कथा संसार में कहीं न कहीं प्रस्तुत अवश्य करता है। यही उसके कथाकार होने की दृष्टि अलग कर देती है।

2.4 विषयवस्तु

दलित कहानी की वैचारिक निर्मिति ज्योतिबा फुले और बाबा साहेब डॉ.अम्बेडकर के मुक्तिकामी आन्दोलनों एवं उनके विचारों से हुई है। दलित कहानी में सामाजिक जीवन

---

[14] वही; पृ-52

की मुख्यधारा में हाशिए की जिन्दगी व्यतीत कर रहे दलित समाज के अधिकारों को लेकर अनेक तरह के सवाल उठाए गए हैं। खासकर, जब सन् 1956 में अम्बेडकर ने यह कहते हुए अपने समर्थकों के साथ हिन्दू धर्म छोड़ने की घोषणा की कि *''गले-सड़े धर्म को त्यागकर, जो असमानता और उत्पीड़न को मान्यता देता है। मैं आज एक नया जन्म ले रहा हूँ और नरक से मुक्ति प्राप्त कर रहा हूँ।... मैं हिन्दू धर्म को त्यागता हूँ।''*[15] तो इसका गहरा असर सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन की मुख्य धारा पर पड़ा। महाराष्ट्र सहित पूरे भारत में दलित आन्दोलन को एक नई दिशा मिली। लेखन और विचारधारा की दुनिया में बदलाव आया। इसे और ताकत मिली सन् 1961 में *अस्मितादर्श* के प्रकाशन और सन् 1972 में नामदेव ढसाल एवं जे.वी. पवार द्वारा बम्बई में गठित 'दलित पैन्थर' से जिसने अपने घोषणा-पत्र में यह कहा कि *''राजसत्ता, धर्म, सम्पति और सामाजिक हैसियत के आधार पर होने वाली सभी ज्यादतियों के खिलाफ संघर्ष के लिए प्रतिबद्ध अनुसूचित जातियाँ, जनजातियाँ, भूमिहीन मजदूर, छोटे किसान और घुमंतू-जनजातियाँ दलित विमर्श दलित मानी जाएगी।''*[16] मराठी में नामदेव ढसाल सहित दया पवार, अर्जुन डांगले, बेबी काँबले, शरणकुमार लिम्बाले, लक्ष्मण गायकवाड़, सूर्यनारायण रणसुभे आदि का लेखन के क्षेत्र में पदार्पण इन्हीं सारी परिस्थितियों का परिणाम था। यद्यपि हिन्दी के दलित साहित्य पर मराठी के दलित सन्दर्भों का गहरा प्रभाव है, चाहे वे कहानियाँ हो या कविताएँ या आत्मकथाएँ। स्वामी अछूतानन्द के प्रयासों से हिन्दी क्षेत्र में दलित चेतना का उदय हुआ और दलित आन्दोलन को एक नई ताकत मिली। सन् 1914 में प्रकाशित हीरा डोम की कविता *अछूत*

---

[15] बुद्ध और उनका धम्म; डॉ. अम्बेडकर

[16]आधुनिक साहित्य में दलित विमर्श; नामदेव ढसाल और जे.वी. पवार; पृ-226

की शिकायत से भी हिन्दी में दलित लेखन को बल मिला, परन्तु दलित लेखन में तेजी तब आई, जब सन् 1990 में मण्डल आयोग की रिपोर्ट लागू होने के बाद दलित लेखकों ने भारतीय समाज को दलितों की निगाह से देखना और अपने अनुभवों का बयान करना शुरू किया। इन अनुभवों में वर्ण-व्यवस्था का प्रतिरोध और सामन्तवाद के दमन और शोषण के खिलाफ दलित समाज में प्रतिरोध की चेतना विकसित की गई। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी *पच्चीस चौका डेढ़ सौ* कहानी में मास्टर का यह कथन *''दिमाग में कूड़ा करकट जो भरा है। पढ़ाई-लिखाई के संस्कार तो तुम लोगों में आ ही नहीं सकते।''*[17] दलितों के बारे में मुख्य धारा की बनी धारणा एवं मानसिकता को दर्शाता है। उनकी *सलाम* कहानी के नायक का यह कथन उनके अन्दर सवर्ण समाज की निर्मितियों एवं संकेतों के खिलाफ पनप रहे आक्रोश और प्रतिरोध के भाव को प्रकट करता है- *''आप चाहे जो समझें...मैं इस रिवाज को आत्मविश्वास तोड़ने की साजिश मानता हूँ। यह सलाम की रस्म बन्द होनी चाहिए।''*[18]

दलित कहानी में मौजूद दलित समाज के जीवन्त अनुभव का यह वही यथार्थ है, जिसे वर्ण एवं जाति केन्द्रित सामाजिक व्यवस्था के शोषण और दमन के खिलाफ दलित कहानीकारों ने रचा है। इसीलिए बीसवीं सदी में हुए दलित आन्दोलनों और विचारधारा के प्रभाव में जो दलित कहानियाँ लिखी गई; उनका विश्लेषण करने पर साफ पता चलता है कि दलित कहानियाँ, कहानी मात्र नहीं हैं, अपितु दलित समाज के उत्पीड़न, संघर्ष और प्रतिरोध का यथार्थ चित्र है। इनका आकलन करते हुए यह भी पता चलता है कि दलित लेखकों ने मुख्यधारा के लेखन के समानान्तर अपनी जातीय संस्कृति, सामाजिक संघर्ष और पारम्परिक

---

[17] सलाम; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-52

[18] सलाम; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-17

वर्ण एवं जातिकेन्द्रित सामाजिक व्यवस्था में अपना वजूद तलाशने का प्रयास किया है तथा वर्ण एवं जाति को अपने समाजके शोषण और दमन का सबसे बड़ा कारण माना है।

वर्ण एवं जाति केन्द्रित असमानता तथा उसके शोषण एवं दमन के खिलाफ प्रतिरोध की चेतना विकसित करना दलित कहानी का मुख्य लक्ष्य है। यद्यपि वर्ण-जाति व्यवस्था को लेकर इतिहाकारों और समाजशास्त्रियों के एक बड़े तबके का मानना है कि यह व्यवस्था समाज को नियन्त्रित एवं संचालित करने के लिए थी तथा श्रमिकों का विभाजन इसका लक्ष्य था जिसका विरोध करते हुए मूकनायक के प्रवेशांक में अम्बेडकर ने लिखा था कि *''जाति प्रथा सिर्फ श्रमिकों का विभाजन नहीं है...वह वंशगत है, जिसमें श्रमिकों का वर्गीकरण एक के ऊपर दूसरी सीढ़ीनुमा है, इसमें जिसका जन्म जिस तल (जाति) में होता है, वह उसी तल में मरता है।''*[19] वर्ण और जाति का यह सवाल जिसे कथाकारों ने दलित कहानी का हिस्सा बनाया। दलित कहानी के सन्दर्भ में यह वर्ण और जाति क्या है ? इस सन्दर्भ में जयप्रकाश कर्दम की 'नो बार' कहानी का अंश ध्यातव्य है –

''बेटी एक बात तो बताओ

''क्या पापा?''

''इस लड़के की कास्ट क्या है?''[20]

---

[19] मूकनायक; डॉ. अम्बेडकर; पृ-3

[20] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-45

जब लड़की के सवर्ण पिता को लड़के की जाति का पता चलता है कि वह दलित है तो पिताकी टिप्पणी होती है- *"आखिर नो बार का यह मतलब नहीं कि किसी चमार-चूहड़े के साथ..."*[21] यह कहानी प्रगतिशीलता के ढोंगियों का पर्दाफ़ाश करती है। आज भी हमारा समाज जाति एवं वर्ण-व्यवस्था से मुक्त नहीं हो पाया है।

दलित कहानियों में भारतीय समाज में शोषणकारी परम्पराओं पर प्रहार किया गया है। इन शोषणकारी परम्पराओं तथा इनका दलित समाज के साथ सम्बन्ध को समझना जरूरी है। इसीलिए दलित कथाकारों ने इन कहानियों में परम्पराओं से जुड़ी हुई निर्मितियों से सीधी मुठभेड़ की है तथा उसे दलित आत्मसम्मान के खिलाफ माना है। इस सन्दर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने *सलाम* कहानी में भारतीय समाज में दलितों के लिए सदियों से मौजूद सलामी देने की परम्परा का विरोध किया। इस प्रकार की वर्चस्ववादी परम्पराओं का निर्माण मुख्यधारा के समाज द्वारा दलित समाज को शेष समाज के सामने नीचा दिखाने के लिए किया गया है- हरीश ने तीखे शब्दों में कहा, *"आप चाहे जो समझें, मैं इस रिवाज को आत्मविश्वास तोड़ने की साजिश मानता हूँ। यह सलाम की रस्म बन्द होनी चाहिए।"*[22]

लेखक ने इस कहानी के माध्यम से सामाजिक जीवन में मौजूद उन परम्पराओं के प्रति विरोध प्रकट किया है, जिनसे दलित आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है। खास बात यह है कि दलितसमाज के अन्दर प्रतिरोध की यह चेतना ज्ञान की प्रक्रिया से जुड़ने के बाद आती है। अर्थात दलित समाज का अनपढ़ होना, उन्हें सामाजिक रूढियों एवं असम्मानजनक

---

[21] वही; पृ-45

[22] सलाम; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-17

परम्पराओं को मानने के लिए विवश करता है। दलित कहानीकारों ने अपनी कहानियों में इनका गहरा प्रतिरोध किया है।

भारतीय समाज एवं संस्कृति में प्रारम्भ से ही कुछ चीजें 'उत्कृष्टता' और 'पवित्रता' का प्रतीक रही हैं, चाहे वे 'ज्ञान' की परम्परा से जुड़े शिक्षण संस्थान हो या 'जल' की संस्कृति से जुड़े कुएँ, तालाब, नदी के घाट। इस तरह की निर्मितियों को भारतीय समाज के सवर्ण समाज ने 'उत्कृष्ट' और 'पवित्र' घोषित कर दलित समाज के लिए अस्पृश्य कर रखा है। इनके निकट दलित समाज के लोग नहीं आ सकते हैं। अगर गलती से ये इन स्थलों पर या उसके करीब आ जाते हैं तो शेष समाज इन्हें प्रताड़ित करता है। इसीलिए दलित जीवन से जुड़ी अधिकांश कहानियों में 'पानी' अथवा 'जल' को कथाकारों ने एक बड़ी समस्या के रूप में चित्रित किया है तथा यह दिखाने का प्रयास किया है कि दलितों को गाँवों में पानी के लिए कितनी अपमानजनक प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। इस सन्दर्भ में अम्बेडकर द्वारा सन् 1927 में चलाए गए महाड़ तालाब के आन्दोलन और सन् 1930 में मन्दिर प्रवेश आन्दोलन को भी देखा जा सकता है, जिसका गहरा असर प्रेमचन्द की *'ठाकुर का कुआँ'* जैसी कहानियों पर देखा जा सकता है। दलित कहानीकार नीरा परमार की *'वैतरणी'* और सूरजपाल चौहान की *'टिल्लू का पोता'* कहानी में अस्पृश्यता के इस प्रसंग को देखा जा सकता है जहाँ सवर्ण जातियाँ पानी के सवाल पर दलितों के साथ अस्पृश्यता का व्यवहार करती है-

"अरे मंगनिया, नेक पीछे कू हट के पानी पी, यह शहर ना है, गाँव है, मारे लठिया के कमर तोड़दई जाएगी। सारे (साले) मंगिया चमार शहर में जा के नए-नए मित्तन (कपड़े) पहर के गाँव

में आजात है। कछु (कुछ) पतो न चलतु कि ने मंगिया चमार के हैं कि नाय (नहीं) ।"[23] यानी एक दलित शहर जाकर कितना भी साफ-सुथरा हो जाए, परन्तु हमारी सामाजिक संरचना ऐसी है कि निम्न जाति में होने के कारण सामाजिक जीवन की मुख्यधारा में उससे समानता का बर्ताव नहीं किया जाता है। वह सवर्ण समाज के लिए आजीवन अस्पृश्य बना रहता है। इसी सन्दर्भ में नीरा परमार ने *'वैतरणी'* कहानी में दर्शाया है कि इस अस्पृश्यता के लिए ब्राह्मणवाद सबसे अधिक जिम्मेदार है-

"नेताजी, आप तो अन्नदाता हैं, प्रजा के मालिक ठहरे।एक चाँपाकल हमारे आँगन में लग जाता। पण्डिताइन को दरवाजे पर जात-कुजात के बीच पानी भरने जाना पड़ता है।"[24] यद्यपि दलित कहानियों का एक बड़ा हिस्सा इसी ब्राह्मणवाद के खिलाफ खड़ा है लेकिन सच यह भी है कि ब्राह्मणवाद के विरोध के कारण ही साहित्य की इस धारा की पहचान बनी तथा दलित कहानी को एक नई ज़मीन मिली।

अस्पृश्यता के सवाल पर दलित कहानियों का एक हिस्सा उन सवालों से भी टकराता है,जहाँ दलित लेखक स्वयं इस बात को महसूस करते हैं कि दलित जातियों के अन्दर भी एक-दूसरे के प्रति 'अस्पृश्यता' का भाव भरा हुआ है। इस सन्दर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि की *'शवयात्रा'* और सूरजपाल चौहान की *'कुएँ से तांगे तक'* जैसी कहानियों को देखा जा सकता है जिनमें लेखकों ने यह दिखलाने का प्रयास किया है कि जातीय वर्चस्व का अन्तर्विरोध दलितों के अन्दर भी है। उदाहरण के लिए *'कुएँ से तांगे तक'* कहानी में यह अन्तर्विरोध दिखलाने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार दलित समाज में 'चमार' अपने

[23] हैरी कब आएगा?; सूअजपाल चौहान; पृ-26
[24] वैतरणी; नीरा परमार; पृ-8

को ‘भंगी’ से श्रेष्ठ मानते है ? उपजातियों का यह अन्तर्विरोध ठीक उसी प्रकार है, जैसा कि भारतीय समाज के हिन्दू समाज में एक ही वर्ण और जाति में लोग अपने को श्रेष्ठ और दूसरे को निम्न समझते हैं।

दलित कहानियों का एक बड़ा हिस्सा ज्ञान की परम्परा में शिक्षण संस्थानों में दलित समाज के साथ हो रहे भेदभाव पर केन्द्रित है। इस सन्दर्भ में कथाकारों ने इस सवाल पर विचार किया है कि ज्ञान के बिना समाज का विकास सम्भव नहीं है। इससे वंचित रहने से व्यक्ति अथवा समाज का मानसिक, आर्थिक और शारीरिक शोषण होता है। जैसे, यदि एक व्यक्ति अगर ज्ञान की प्रक्रिया से वंचित रहता है, तब वह न तो अपना बौद्धिक विकास ही कर सकता है और न ही समाज में सम्मानपूर्वक रहने के लिए अर्थोपार्जन कर सकता है। अर्थात् ज्ञान प्राप्ति के बाद वह अपनी तथा अपने परिवार की गरीबी भी दूर कर सकता है। दलित कहानीकारों का मानना है कि ज्ञान की परम्परा से वंचित रहने के कारण ही दलित समाज का सबसे अधिक शोषण हुआ है तथा वे विकास की प्रक्रिया से वंचित रह गए। दलित समाज की गरीबी का भी सबसे बड़ा कारण उनकी अज्ञानता है। इस अज्ञानता के कारण ही उनका आर्थिक शोषण होता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की *‘पच्चीस चौका डेढ़ सौ’*, सुशीला टाकभौरे की *‘साक्षात्कार’*, दयानन्द बटोही की *‘सुरंग’*, श्यौराज सिंह बेचैन की *‘शोध-प्रबंध’*, सूरजपाल चौहान की *‘छूत कर दिया’* आदि कहानियाँ शिक्षण संस्थानों में दलित समाज की स्थिति का यथार्थ चित्रण करती हैं। उदाहरण के लिए, ओमप्रकाश वाल्मीकि की ‘पच्चीस चौका डेढ़ सौ’ की निम्नलिखित पक्तियां देखी जा सकती हैं, जिसमें कहानीकार ने कथानायक सुदीप के पिता के आर्थिक शोषण के बहाने यह बतलाने की कोशिश की है कि अनपढ़ होने के कारण गाँव के चौधरी आम दलित जन का कितना शोषण करते रहे हैं ? –

"पिताजी मुझसे आपको एक बात करनी है । क्या बात है, बेट्टे ? कुछ चाहिए ? नहीं पिताजी, कुछ नहीं चाहिए...मैं आपको कुछ बताना चाहता हूँ । सुदीप ने पच्चीस-पच्चीस रुपये की चार ढेरियाँ लगाईं। पिताजी से कहा, 'अब आप गिनिए" । पिताजी चुपचाप सुदीप की ओर देख रहे थे, उनकी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था । असहाय होकर बोले, *"बेट्टे, मुझे तो बीस से आगे गिनना ही नी आता, तू ही गिन के बता दे ।"*

सुदीप ने धीमे स्वर से कहा, *'पिताजी, ये चार जगह पच्चीस-पच्चीस रुपये है । अब इन्हें मिलाकर देखते हैं पच्चीस चौका सौ होते हैं या डेढ़ सौ ।'*

पिताजी अवाक होकर सुदीप का चेहरा देखने लगे । उनकी आँखों के आगे चौधरी का चेहरा घूम गया । तीस-पैंतीस साल पहले की पुरानी घटना साकार हो उठी । वह घटना जिसे वे अब तक न जाने कितनी बार दोहराकर लोगों को सुना चुके थे । सुदीप रुपये गिन रहा था बोल-बोलकर । सौ पर जाकर रुक गया । बोला, *"देखो, पच्चीस चौका सौ हुए, डेढ़ सो नहीं ।"*[25]

इससे स्पष्ट होता है कि अनपढ़ होने के कारण गाँव के चौधरी या साहुकार दलित समाज का कितना आर्थिक शोषण करते थे ? इस कहानी में अनपढ़ दलित का पुत्र शिक्षा प्राप्त कर यह प्रमाणित करता है कि ज्ञान न सिर्फ आर्थिक शोषण से मुक्त होने में मदद करता है, अपितु इस भ्रान्तिपूर्ण धारणा का खण्डन भी करता है कि तथाकथित 'बड़े लोग' नैतिक दृष्टि से चरित्रवान और बेहद ईमानदार होते हैं । पुत्र द्वारा व्यवहारिक रूप से जानकारी मिलने के बाद पिता को ऐसा महसूस होता है कि गाँव के सम्मानित चौधरी ने वर्षों पूर्व उनके साथ

---

[25] सलाम; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-52

कितना बड़ा विश्वासघात किया था। इस तरह दलित कहानियाँ शिक्षण संस्थानों में दलितों के साथ किए जा रहे भेदभाव की समस्या को उठाती है।

दलित कहानियों का एक बड़ा हिस्सा स्त्री जीवन के सवाल पर केन्द्रित है। दलित स्त्री के जीवन के सवाल को समझने के लिए भारतीय समाज में स्त्री जीवन के यथार्थ को जानना जरूरी है। कहा जाता है कि भारतीय समाज में स्त्रियों की जिन्दगी को दो संरचनाएँ नियन्त्रित करती हैं- एकपितृसत्ता और दूसरी वर्ण-व्यवस्था। ये दोनों स्त्री की देह और मनदोनों को बाँधती है। धर्म की इसमें प्रमुख भूमिका होती है। मर्यादा के मानकीय आधार पर वह विवाह संस्था द्वारा स्त्रियों को सबसे अधिक बाँधने का प्रयास करता है। इसलिए अन्य स्त्री लेखन की तरह सुशीला टाकभौरे, कौशल्या बैसन्त्री, रजनी तिलक, अनीता भारती, विमल थोराट, रजत रानी मीनू, कुसुम मेघवाल, कावेरी आदि दलित लेखिकाओं ने पितृसत्ता और वर्ण-व्यवस्था के आधार पर दलित स्त्री के शोषण को अपने लेखन का केन्द्र बनाया है। इस सन्दर्भ में सुशीला टाकभौरे की *सिलिया*, कुसुम मेघवाल की *अंगारा*, कावेरी की *सुमंगली* आदि कहानियों को देखा जा सकता है। सुशीला टाकभौरे अपनी *सिलिया* कहानी में विवाह जैसी संरचनागत संस्था पर नायिका के बहाने सवाल उठाती हैं– *"मैं शादी कभी नहीं करूँगी।"*[26] यद्यपि सिलिया अभी बहुत छोटी है, पर उसे महसूस होता है कि विवाह ही स्त्री की दुर्गति का सबसे बड़ा कारण है, यह स्त्री के आत्मसम्मान को सबसे पहले नष्ट करता है।

अखबारों के वैवाहिक विज्ञापनों में अक्सर लिखा होता है– जाति-बंधन नहीं (नो बार) । लेकिन इसमें भी एक छिपा एजेंडा होता है। एक दलित के लिए यह शर्त लागू नहीं यानी

---

[26] सिलिया; सुशीला टाकभौरे; पृ-13

दलित स्वीकार्य नहीं। यह कहानी इसी समस्या को केंद्र में रख कर सामाजिक जीवन में रची बसी जाति वैमनस्य की भावना को अभिव्यक्त करती है। इस कहानी के प्रस्तुतिकरण से जो प्रभावोत्पादकता पैदा होती है, वह पाठक को छू जाती है। वही इसे एक अच्छी कहानी के रूप में मान्यता दिलाती है। **'अपना गाँव'** मोहनदास नैमिशराय की एक महत्त्वपूर्ण कहानी है जो दलित मुक्ति-संघर्ष आंदोलन की आंतरिक वेदना से पाठकों को रूबरू कराती है। दलित साहित्य की यह विशिष्ट कहानी है। दलितों में स्वाभिमान और आत्मविश्वास जगाने की भाव भूमि तैयार करती है। इसीलिए यह विशिष्ट कहानी बन कर पाठकों की संवेदना से दलित समस्या को जोड़ती है। दलितों के भीतर हज़ारों साल के उत्पीड़न ने जो आक्रोश जगाया है वह इस कहानी में स्वाभाविक रूप से अभिव्यक्त होता है। भाषा की सहजता इस कहानी को गंभीर सरोकारों से जोड़ने में सफल होती है।

2.5 कथानक

कथांतर्गत "कार्यव्यापार की योजना" को **कथानक** (Plot) कहते हैं। "कथानक" और "कथा" दोनों ही शब्द संस्कृत के "कथ" धातु से उत्पन्न हैं। संस्कृत साहित्यशास्त्र में "कथा" शब्द का प्रयोग एक निश्चित काव्यरूप के अर्थ में किया जाता रहा है किंतु कथा शब्द का सामान्य अर्थ है- 'वह जो कहा जाए'। यहाँ कहनेवाले के साथ-साथ सुननेवाले की उपस्थिति भी अंतर्भुक्त है कयोंकि 'कहना' शब्द तभी सार्थक होता है जब उसे सुननेवाला भी कोई हो। श्रोता के अभाव में केवल 'बोलने' या 'बड़बड़ाने' की कल्पना की जा सकती है, 'कहने' की नहीं। इसके साथ ही, वह सभी कुछ 'जो कहा जाए' कथा की परिसीमाओं में नहीं सिमट पाता। अत: कथा का तात्पर्य किसी ऐसी 'कथित घटना' के कहने या वर्णन करने से होता है जिसका एक निश्चित क्रम एवं परिणाम हो। ई.एम. फ़ार्स्टर ने 'घटनाओं के

कालानुक्रमिक वर्णन' को कथा (स्टोरी) की संज्ञा दी है; जैसे, नाश्ते के बाद मध्याह्न का भोजन, सोमवार के बाद मंगलवार, यौवन के बाद वृद्धावस्था आदि। इसके विपरीत कथानक (चाहे वह महाकाव्य की हो अथवा खंडकाव्य, नाटक, उपन्यास या लोककथा की हो) का वह तत्व है जो उसमें वर्णित कालक्रम से श्रृंखलित घटनाओं की धुरी बनकर उन्हें संगति देता है और कथा की समस्त घटनाएँ जिसके चारों और ताने बाने की तरह बुनी जाकर बढ़ती और विकसित होती हैं। कथा या कहानी भी साधारणत: कार्यव्यापार की योजना ही होती है, परंतु किसी एक भी कथा को कथानक नहीं कहा जा सकता; कारण, कथा की विशिष्टता केवल उसके कालानुक्रमिक वर्णन को अभिभूत कर लेती है। "नायक को नायिका से प्रेम हुआ और अंत में उसने उसका वरण कर लिया"- कथा है। "नायक ने नायिका को देखा, वह उसपर अनुरक्त हो गया। प्राप्तिमार्ग के अनेक अवरोधों को अपने शौर्य और लगन से दूर करके, अंत में, उसने नायिका से विवाह कर लिया"- कथानक है। अर्थात् कथा किसी भी कथात्मक साहित्यिक कृति का ढाँचा मात्र होती है जबकि कथानक में तत्प्रस्तुत प्रकरणवस्तु (थीम) के अनुरूप कथा का स्वरूप स्पष्ट, संगत एवं बुद्धिग्राह्य बनकर उभरता है।

वेब्सटर (थर्ड न्यू इंटरनैशनल डिक्शनरी) के अनुसार कथानक (प्लाट) की परिभाषा इस प्रकार है-

"किसी साहित्यिक कृति (उपन्यास, नाटक, कहानी अथवा कविता) की ऐसी योजना, घटनाओं के पैटर्न अथवा मुख्य कथा को कथानक कहते हैं जिसका निर्माण उद्दिश्ट प्रसंगों की सहेतुक संयोजित श्रृंखला (स्तरक्रम) के क्रमिक उद्घाटन से किया गया हो।"[27]

[27] थर्ड न्यू इंटरनैशनल डिक्शनरी; वेब्सटर

उपर्युक्त विवेचन से इस महत्वपूर्ण तथ्य का उद्घाटन होता है कि कथा को सुनते या पढ़ते समय श्रोता अथवा पाठक के मन में आगे आनेवाली घटनाओं को जानने की जिज्ञासा रहती है अर्थात् वह बार-बार यही पूछता या सोचता है कि फिर क्या हुआ, जबकि कथानक में वह ये प्रश्न भी उठाता है कि 'ऐसा क्यों हुआ ?' 'यह कैसे हुआ ?' आदि। अर्थात् आगे घटनेवाली घटनाओं को जानने की जिज्ञासा के साथ-साथ श्रोता अथवा पाठक घटनाओं के बीच कार्य-कारण-संबंध के प्रति भी सचेत रहता है। कथा गुहामानव की जिज्ञासा को शांत कर सकती है किंतु बुद्धिप्रवण व्यक्ति की तृप्ति कथानक के माध्यम से ही संभव है। अत: कहा जा सकता है, कथानक में समय की गति घटनावली को खोलती चलती है और इसके साथ ही उसका घटना संयोजन-विश्व के युक्तियुक्त संघटन के अनुरूप-तर्कसम्मत कार्य-कारण-अंत:संबंधों पर आधारित रहता है। इसीलिए उसमें आरंभ, मध्य और अंत, तीनों ही सुनिश्चित रहता है। 'आदम हव्वा' के आदि कथानक में इन तीनों सोपानों को स्पष्ट देखा जा सकता है; यथा, निषेध (प्राहिबिशन), उल्लंघन (ट्रांसग्रेशन) तथा दंड (पनिशमेंट)।

कथानक कला का साधन है, अत: भावोत्तेजना लाने के लिए उसमें जीवन की प्रत्ययजनक यर्थातता के साथ आकस्मिकता का तत्व भी आवश्यक है। इसीलिए कथानक की घटनाएँ यथार्थ घटनाओं की यथावत् अनुकृति मात्र न होकर, कला के स्वनिर्मित विधान के अनुसार संयोजित रहती हैं। कथानक देव दानव, अतिप्राकृत और अप्राकृत घटनाओं से भी निर्मित होते हैं किंतु उनका उक्त निर्माण परंपरा द्वारा स्वीकृत विधान तथा अभिप्रायों के अनुसार ही होता है। अत: अविश्वसनीय होते हुए भी वे विश्वसनीय होते हैं। कथानक की गतिशील घटनाएँ सीधी रेखा में नहीं चलतीं। उनमें उतार चढ़ाव आते हैं, भाग्य बदलता है, परिस्थितियाँ मनुष्य को कुछ से कुछ बना देती हैं अपने संगीसाथियों के साथ या बाह्य शक्तियों

अर्थात् अपनी परिस्थिति के विरुद्ध उसे प्राय: संघर्ष करना पड़ता है। कथानक में जीवन के इसी गतिमान संघर्षशील रूप की जीवंत अवतारणा की जाती है।

दलित कहानियों में सामाजिक परिवेशगत पीड़ाएं, शोषण के विविध आयाम खुल कर और तर्क संगत रूप से अभिव्यक्त हुए हैं। ग्रामीण जीवन में अशिक्षित दलित का जो शोषण होता रहा है, वह किसी भी देश और समाज के लिए गहरी शर्मिंदगी का सबब होना चाहिए था। 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' कहानी में इसी तरह के शोषण को जब पाठक पढ़ता है, तो वह समाज में व्याप्त शोषण की संस्कृति के प्रति गहरी निराशा से भर उठता है। ब्याज पर दिए जाने वाले हिसाब में किस तरह एक सम्पन्न व्यक्ति, एक गरीब दलित को ठगता है और एक झूठ को महिमा-मण्डित करता है, वह पाठक की संवेदना को झकजोर कर रख देता है।

दलित समुदाय के भीतर उनकी परम्पराओं को आलोचक की दृष्टि से देखते है और जहाँ आवश्यक होता है, उसकी खामियों की ओर ऊँगली उठाते हैं। 'हत्यारे' कहानी में उन्होनें दलितों में व्याप्त अन्धविश्वास को बखूबी रेखांकित किया है। अस्मितावाद से शुरू कर सार्वभौम मनुष्यता तक पहुँचना उनका गंतव्य है। 'सलाम', 'खानाबदोश', 'ब्रह्मास्त्र' कहानियों में द्विज पात्र दलितों का साथ देना चाहते हैं लेकिन आधी दूर चलकर ठहर जाते हैं। अभी उन्हें वैचारिक व भावात्मक रूप से पुख्ता होने में समय लगेगा। 'घुसपैठिए' कहानी में लेखक ने मेडिकल कॉलेज में दलित छात्र की दशा को रेखांकित किया है जहाँ वह शोषण के कारण आत्महत्या कर लेता है, जिसे लेखक हत्या के रूप में देखता है। इनकी कहानियों में दलित पात्रों में हीनता बोध गहराई से पैठा हुआ है, वे कई बार जाति छुपाकर जीवन यापन करते हैं। 'मैं ब्राह्मण नहीं हूँ' का मोहनलाल शर्मा अपनी जाति छुपाकर रह रहा है उसकी बेटे की शादी गुलज़ारी लाल शर्मा की बेटी से तय हो चुकी है। इसी बीच मोहनलाल की बहन में मय सा

जो समान के आकर भेद खोल देती है कि वह शर्मा नहीं मिरासी है। गुलज़ारी लाल को मौका मिलता है वे मोहनलाल को जी भरकर जलील करते हैं लेकिन उनकी खुद की असलियत यह है कि वे बढ़ई से ब्राह्मण बने हैं। इन दोनों परिवारों की नयी पीढ़ी इन पाखण्डों से मुक्त होना चाहती है। 'दिनेश पॉल जाटव उर्फ़ दिग्दर्शन' कहानी भी जाति-गोपन की कोशिशों के इर्द-गिर्द बुनी गयी है। 'कूड़ाघर' कहानी में अजब सिंह का परिवार किराए मकान से इसलिए बेदखल कर दिया जाता है, क्योंकि मकान मालिक को उसकी जाति का पता चल जाता है। 'प्रमोशन' कहानी में मजदूर संगठनों के बीच पसरे जातिवाद का खुलासा किया है। सुरेश स्वीपर से प्रमोट होकर मजदूर बन जाता है। वह 'लाल झण्डा यूनियन' का मेंबर बनकर उसकी गतिविधिओं में जोर-शोर से शामिल होता है। वह कामरेड सम्बोधन से रोमांचित होता है। मजदूर-मजदूर भाई-भाई के नारे का अर्थ उसे तब समझ में आता है जब उसके हाथ से बँटने वाले दूध को कोई लेने नहीं पहुँचता है। लोगों की नजर में वह आज भी स्वीपर है। यहाँ एक बात उल्लेखनीय है कि दलितों में भी परस्पर ऊँच-नीच की भावना व्याप्त है। अन्य दलित भंगी को अस्पृश्य मानते हैं, यह विडंबना है।

2.6 चरित्र-चित्रण

दलित नारी के चरित्र-चित्रण की बात है तो नारी तो दलितों में भी दलित है और विभिन्न मामलों में गैर दलित नारी से अधिक शोषित पीड़ित है। परन्तु यहाँ पर एन. सिंह दलित लेखकों का मत है कि *''दलित समाज में नारी पुरुष के कंधे से कन्धा मिलाकर चलती है। अतः हम कह सकते है कि दलित समाज में नारी को समानता का अधिकार प्राप्त है। वह*

भी खेत में अपने पति के साथ काम करती है, सड़क पर रोड़ी डालती है।"[28] लेकिन वस्तुस्थिति कुछ अलग है। समाजशास्त्रीय अध्ययन बताते हैं कि यह तो ठीक है कि दलित स्त्री की स्थिति सवर्ण स्त्रियों के मुकाबले कुछ मायने में बेहतर है। वह इस रूप में कि वहां प्रेम, विवाह, यौन सम्बन्ध, तलाक आदि के मामलों में अधिक स्वच्छंदता है, साथ ही आर्थिक रूप से भी वैसी पराधीनता नहीं है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि वे सामंती चेतना से युक्त समाज के शोषण से बच गयीं हैं। दलित समाज में सवर्णों की तरह ही सामंती मूल्य प्राप्त हैं। कुसुम मेघवाल लिखती हैं- *"....अपने ही मर्द द्वारा परपुरुषों के हवाले कर देना, शराब पीकर बुरी तरह पीटना, हत्या कर देना, देवदासी बना देना, वैश्यावृत्ति करवाना,... उसके साथ पशुवत व्यवहार करना जैसी अनेक त्रासदियां वह झेलती आ रही है। इन सभी कार्यों में उससे पूछना या उसकी स्वीकृति लेना भी आवश्यक नहीं समझा जाता। पुरुष अपनी मनमर्जी से उस पर हुकूमत करता है। उसे पांव की जूती से अधिक महत्त्व देना पुरुष को भी कभी गवारा नहीं होता। "*[29] स्त्रियों की समस्या पूरे भारतीय उपमहाद्वीप की समस्या है। इस क्षेत्र में दलित नारी के विविध चित्र खींचने होंगे।

'सपना' कहानी के दलित पात्र 'गौतम' के मंदिर में प्राण-प्रतिष्ठा के कार्यक्रम के दौरान पंडाल में रामास्वामी नटराजन और नागराजन द्वारा चप्पलों की रखवाली करने हेतु पंडाल में सबसे पीछे बैठने को विवश किया जाता है। ऋषिराज ब्राह्मण जाति से होते हुए भी नटराजन और नागराजन को लताड़ते हुए कहता है- *"तो यह बात है.... मिस्टर नटराजन यह ज्ञान आपको आज ही प्राप्त हुआ है कि गौतम एस. सी. है। जब वह दिन रात आपका खून पसीना*

---

[28] दलित साहित्य के प्रतिमान; डॉ. एन. सिंह; पृ-21

[29] हिंदी उपन्यास और दलित नारी; डॉ. कुसुम मेघवाल; पृ-52

बहा रहा था, इस मंदिर को खड़ा करने में तब आप नहीं जानते थे.... कि वह एस. सी. है।"[30] मिसेज़ चोपड़ा के घर लेट्रीन की सफाई करते हुए जब विनोद पानी डालने के बहाने अम्मा की कमर पकड़ता है तो वह शेरनी के समान पलटकर झाड़ू से वार करती है मिसेज़ चोपड़ा से कहती है- *"भैण जी इस हरामी की औलाद से कह देणा...हर एक औरत छिनाल न होवे है।"*[31]

2.7 देशकाल तथा वातावरण

कहानी देशकाल की उपज होती है, इसलिए हर देश की कहानी दूसरे देशों से भिन्न होती है। भारत में या इस देश के किसी भी भू-भाग में लिखी कहानियों का अपना वातावरण होता है, जिसकी संस्कृति, सभ्यता, रूढ़ि, संस्कार का प्रभाव उन पर स्वभाविक रूप से पड़ता है। यह अपने आप उपस्थिति हो जाता है। यह तो आधार है, जिस पर सारा कार्यकलाप होता है। लेखक घटना और पात्रों से सम्बन्धित परिस्थितियों का चित्रण सजीव रूप में करता है। सम्पूर्ण परिस्थितियों की योजना साभिप्राय और क्रमिक ढंग से की जाती है। प्रकृति, ऋतु, दृश्य आदि का अत्यन्त संक्षिप्त और सांकेतिक रूप में वर्णन करके किसी घटना अथवा परिणाम को सजीव एवं यथार्थ बना दिया जाता है। कहानी में घटना, स्थान, पात्र, पात्रों की भाषा- वेशभूषा इत्यादि देश और काल के ही अनुसार की जाती है। कहानी जब दृश्य एवं श्रव्य माध्यम से समाज के सामने आती है तो उस देश, काल, परिस्थिति, भाषा-शैली, पहनावा तथा रहन-सहन से भी परिचित हो जाते हैं। कहानी में देश-काल तथा वातावरण तत्त्व के

---

[30] सलाम; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-29

[31] वही; पृ-67

अंतर्गत उसकी उपर्युक्त पृष्ठभूमि के साथ ही सांस्कृतिक परम्पराओं, सामाजिक आचार-विचार, रहन-सहन तथा रीति-रिवाज आदि का भी चित्रण किया जाता है। और वहीं दलित कहानियों में देश-काल और वातावरण की स्थिति थोडी बदल जाती है। 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' कहानी का वातावरण ग्रामीण परिवेश को अपने में समेटे हुए है। जाति-पाति, ऊंच-नीच, अस्पृश्यता, छुआछूत की भावना, ईर्ष्या इत्यादि भी गांव में बनी हुई है। यह इस कहानी के परिवेश से पता चलता है। आज जबकि पूरी दुनिया दलित विमर्श कर रही है, ऐसे में अछूतों में अछूत की बात करना, दलित बच्चे का स्कूल में दाखिला एवं उसके प्रति भेदभाव कहीं ना कहीं आधुनिक परिवेश में एक सोच को दर्शाती है। ऐसे कहानी में व्याप्त ईर्ष्या, उपेक्षा, छुआछूत कहीं ना कहीं इसके वातावरण को गंभीर बनाती है।

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद दलितों के मन में यह आशा आकांक्षा थी कि अब रूढ़िवादी परंपरा का अंत होगा छुआछूत की भावना से हम मुक्त होंगे। संविधान के अनुसार शिक्षा तथा नौकरियों में हमें आरक्षण मिलेगा कुछ हद तक दलितों की स्थिति में सुधार हुआ है। दलित शिक्षित होने लगे, नौकरियां मिलने लगी, किन्तु समानता नहीं मिली। भेद - भाव की भावना आज भी हमें दिखाई देती है। इसीलिए तो दलित कहानी का सृजन अन्य हिंदी कहानी की तुलना में ज्यादा जोर पकड़े हुए है। सूरजपाल चैहान की 'साजिश' कहानी का नत्थू कठिनाई से बी.ए. की परीक्षा पास करके ट्रान्सपोर्ट के धन्धे के लिए बैंक से कर्जा लेना चाहता है, किन्तु बैंक मैनेजर रामसहाय शर्मा, नत्थू की दिशाभूल करके उसे सुअर पालने के लिए कर्ज देना इसीलिए पसंद करता है, क्योंकि नत्थू एक अछतू वर्ग का युवक है। मैनेजर शर्मा अपने हेडक्लर्क सतीश भरद्वाज से कहता है, "देख सतीश अगर ये अछूत अपना खानदानी धन्धा बन्द कर कोई नया धन्धा करने लगे, तो आने वाली पीढ़ियाँ हमारे घरों की

गन्दगी कैसे साफ करेगी। उस स्थिति में घर की गन्दगी क्या तुम खुद साफ करोगे ? इस प्रकार से साफ तौर पर यहाँ देश-काल और वातावरण को देखा जा सकता है।

प्राचीन काल से ही महिलाओं की उपेक्षा हुई है। आज के युग में महिलाएं असुरक्षित जान पड़ती है। लगभग रोज ही हमें समाचार पत्रों में पढ़ने को मिलता है कि महिलाओं पर कैसे अत्याचार हो रहे है। हमारे संतों ने भी महिला को ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी ये सब ताड़न के अधिकारी कहकर उपेक्षा की है। 'अपना गांव' कहानी में मोहनदास नैमिषराय ने ठाकुर के खेतों में कबूतरी काम करने से नकार देती है, तो ठाकुर का बेटा अपने साथियों के साथ उसे नंगा घुमाता है। पत्रकार को हरिया बताता है, *"म्हारी जात के औरतों को पैले से ही ठाकुरों के द्वारा नंगा किया जाता रहा है। उनकी बेइज्जती की जाती रही है। गाँव का रिवाज बन गया है ये।"*[32] यानि कि दलित महिलाओं की स्थिति बद से बद्तर है और कहानियों में भी दर्शाया जाता है।

उच्च शिक्षा हासिल करने के लिए भी दलितों को यातनाएँ दी जाती है। 'सुरंग' कहानी में दयानंद बटौही स्वयं एम.ए. द्वितीय क्लास में पास है। उन्हें आगे रिसर्च करना है, किन्तु वर्णवादी व्यवस्था उसे रिसर्च करने से रोकती है। कार्यकर्ता नेता से कहता है, *"यह हरिजन है, इन्हें हिन्दी में रिसर्च करने नहीं दिया जा रहा है, हम सभ्य कहलाने वालों के परिवार के थर्ड क्लास लड़के-लड़कियों को रिसर्च करने दिया जा रहा है, यूनियन के अध्यक्ष रघुनाथ की बहन एम.ए. में थर्ड क्लास लाई है, उसे हिन्दी में रिसर्च करने दिया गया है, जबकि हरिजन सेकेंड क्लास के है तथा हिन्दी प्रायः सभी पत्र-पत्रिकाओं में इनकी कहानियां, कविताएं और*

---

[32] अपना गांव; मोहनदास नैमिषराय; पृ-12

साहित्यिक निबंध लोग चाव से पढ़ते हैं।"[33] शिक्षा के स्तर पर भी दलितों को भोगना पडता ही है।

दलित कहानियों में दलितों के आँसुओं से उनके जीवन की दुखभरी गाथाएं दलित लेखकों ने प्रस्तुत की है। इन कहानियों द्वारा दलितों के वास्तविक जीवन, उनकी यातनाओं, पीड़ाओं और उनकी जो उपेक्षा हुई है, उसकी अभिव्यक्ति हुई है। यह समाज में हो रहे परिवर्तनों का परिणाम है। जिसकी प्रेरणा है समता, स्वतंत्रता, बधुता एवं अन्याय के विरूद्ध न्याय मिल सके। इस दलित कहानी से समाज में चेतना का निर्माण हो रहा है।

2.8 भाषा

भाषा को मनुष्य के बीच भावों-विचारों का आदान-प्रदान करने का माध्यम कहा जाता है। लेकिन दलित और गैर-दलित एक ही समाज का हिस्सा होने के बावजूद भी दोनों के बीच भाषा के संदर्भ में विविधता क्यों दिखाई देती है ? अलगाव क्यों दिखाई देता है ? दलित साहित्य की भाषा वर्णाश्रम व्यवस्था और जातिप्रथा के खिलाफ गुस्सा, आक्रोश और आग क्यों उगलती है ? यह भाषा अन्याय-अत्याचार के खिलाफ सरेआम संघर्ष घोषित क्यों करती है ? यह भाषा मानव विरोधी परम्पराओ पर सवाल क्यों उठाती है ? क्योंकि दलित कहानी की भाषा सामाजिक न्याय की भाषा है। दलित कहानी की ब्राह्मणवादी, सामंती और अभिजात्य विचारों व संस्कारों से मुक्ति की भाषा है। सामाजिक न्याय की यह भाषा समता, भाईचारा और व्यक्ति स्वतंत्रता के पक्ष में तटस्थ और निष्पक्ष अभिव्यक्ति की लोकतांत्रिक संस्कृति से जुड़ी हुई है।

---

[33] सुरंग; दयानंद बटौही; पृ-19

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में वह उत्पन्न होता है, और वहीं रहते हुए मृत्यु को प्राप्त होता है। वही उसका अस्तित्व बनता है, समाज में रहने के कारण मनुष्य को एक दूसरे के साथ हमेशा ही विचारों का आदान-प्रदान करना पड़ता है। कभी उसे अपने विचारों को प्रकट करने के लिए शब्दों या वाक्यों की आवश्यकता पड़ती है, और कभी संकेत से भी काम चला लेता है। हाथ से संकेत 'करतल ध्वनि', आंखें टेढ़ी करना आंख मारना या दबाना, खांसना, मुंह बिचकाया, गहरी सांस लेना आदि अनेक प्रकार के साधनों से अपनी अभिव्यक्ति करता है। इसी प्रकार से गंध इंद्रिय, नेत्र इंद्रिय तथा कर्ण इंद्रिय इन पांचों ज्ञानेंद्रियों में से किसी भी माध्यम से अपनी बात कही जा सकती है।

अपने व्यापक रूप में तो भाषा वह साधन है, जिसके द्वारा अथवा जिसके माध्यम से मनुष्य अपने विचारों को व्यक्त करता हैं, किंतु भाषा विज्ञान में भाषा का अध्ययन एवं विश्लेषण करते हैं तो वह इतनी व्यापक नहीं होती, उनमें हम उन साधनों को नहीं व्यक्त करते हैं और ना उनके द्वारा लिया जाता है, जिसके द्वारा हम सोचते हैं। भाषा उसे कहते हैं जो बोली और सुनी जाती है और बोलना पशु पक्षियों का नहीं केवल मनुष्यों का ही है। भाषा शब्द 'भाष' धातु के संयोग से बना है। जिसका अर्थ है बोलना या कहना, अर्थात भाषा वह है जो बोली और कही जा सके, उसमें ध्वन्यात्मक हो। दार्शनिकों ने भाषा की अनेक परिभाषाएं दी है-

महान दार्शनिक **प्लेटो** ने 'सोफिष्ट' में विचार और भाषा के समन्वय में लिखते हुए कहा है कि *"भाषा और विचार में थोड़ा सा अंतर है, विचार आत्मा की मुक या ध्वन्यात्मक बातचीत है, पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा दी जाती है।"*

स्वीट के अनुसार, *"ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा प्रकट करना ही भाषा है।"*

बोन्द्रिय के अनुसार, *"भाषा एक तरह का संकेत है, संकेत से आशय उस प्रतीक चिन्हों से हैं जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचारों को प्रकट करता है, जैसे – कर्ण ग्राह्य , नेत्र ग्राह्य, स्पर्श ग्राह्य। वस्तुतः भाषा की दृष्टि से कर्ण ग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ है। प्रतीक वह वस्तु है जो किसी व्याख्यात अन्य वस्तु के स्थान पर प्रयुक्त होती है।"*

ब्लॉक एवं ड्रैगन के अनुसार, *"भाषा मानव ज्ञानेंद्रियों से उच्चारित यादृच्छिक रूढ़ एवं प्रतीकों या ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा एक मनुष्य समुदाय के लोग परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं |"*

ए एच गार्डिनर के अनुसार, *"विचारों की अभिव्यक्ति के लिए व्यक्त, ध्वनि संकेतों के व्यवहार को भाषा कहते हैं।"*

हेनरी स्वीट के अनुसार, *"व्यक्त ध्वनियों द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति को भाषा कहते हैं।"*

मैरियो रूपे एवं फ्रैंक ग्रेनर के अनुसार, *"मनुष्यों के वर्ग में आपसी व्यवहार के लिए प्रयुक्त वे ध्वनि संकेत जिनका अर्थ पूर्व निर्धारित एवं परंपरागत तथा जिनका आदान-प्रदान जीभ और कान के माध्यम से होता है, उसे भाषा कहते हैं |"*

भाषा ध्वनि व प्रतीकों की व्यवस्था है। पशु पक्षी जो बोलते हैं, क्या वह भाषा है या नहीं? वह भाषा नहीं है, बल्कि ध्वनि की प्रतिध्वनी है। भाषा के कुछ उदाहरण देखें-

ओमप्रकाश वाल्मीकि ने भाषा की ओर गंभीरता से ध्यान दिया है। उनकी अधिसंख्य कहानियों के कला-पक्ष में भाषागत नवीनता देखने को मिलती है। पात्रों के अनुकूल भाषा की मौलिकता उनकी विशेषता है।

नमूने के तौर पर- *"उसने कंडक्टर का तोंदियल शरीर कपड़े फाड़कर बाहर आने को छटपटा रहा था । बनैले सुअर की तरह उसके चेहरे पर पान से रंगे दांत, उसकी भव्यता में इजाफा कर रहे थे । सुदीप को लगा जंगली सुअर बस की भीड़ में घुस आया है ।"*[34]

"एक दूसरे को जब तक नहीं जानते तब तक खूब गोल-गोल बातें होती हैं, लेकिन ज्यांही जाति की गंध लोगों को मिलती है लोग सुअर जैसा मुंह निपोरने लगते हैं ।"[35]

उक्त कथनों में कहानीकारों ने अपने परिवेश से मौलिक सटीक मुहावरों, उपमाओं और उपमानों के प्रयोग से भाषा में नवीनता उत्पन्न कर दी है । इन नए प्रयोगों से साहित्यिक के क्षेत्र में नया रास्ता प्रशस्त हुआ है ।

वहीं जयप्रकाश कर्दम की कहानियाँ चिंता और चिंतन जागृत करती है । कर्दम के कहानियों की भाषा से दलित समाज में आत्मबोध, आत्मशोध और उन्हे संघर्ष के लिए प्रेरित करती है । जयप्रकाश कर्दम की कहानियों में अपने आस-पास रहनेवाले पात्रों की भाषा है । साथ ही साथ दलित समाज की जो भाषा होती है, वैसी भाषा उन्होंने अपनी कहानियों में प्रयुक्त की है । डॉ. कर्दम की कहानियों में ग्राम्य भाषा के साथ ही शहरी जीवन व्यतीत करनेवाले पात्रों की शुद्ध हिंदी भाषा का प्रयोग भी मिलता है । शहरी भाषा का प्रभाव इनकी कहानियों में बड़ी मात्रा में दिखाई देता है । तत्सम, तद्भव, देशी, विदेशी शब्दों का भी प्रमाण प्रचुर मात्रा में दिखाई देता है । कहीं पर तो पूरे वाक्य अंग्रेजी भाषा में है । यही कि सुशिक्षित पात्रों के मुँह में अंग्रेजी शब्दों का प्राबल्य अधिक है ।

---

[34] सलाम; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-52

[35] सुरंग; दयानंद बटौही; पृ-19

'नो बार' कहानी की नायिका अनिता अपने पिता से कहती है- *"आई कान्ट से पापा।"*[36]

उन्होंने कहीं-कहीं मिश्रित भाषा का प्रयोग भी किया है। *"उसकी नेचर बहुत अच्छी है। उसे एटीकेटस् आते हैं और वह स्मोकिंग तक नहीं करता।"*[37]

कर्दम की भाषा अपने परिवेश के साथ-साथ पात्रों को भी केंद्र में रखती है। उनके साहित्य का अध्ययन करने से पता चलता है कि लेखक पर ग्रामीण से शहरी जीवन का ज्यादा प्रभाव दिखाई देता है। क्योंकि कहीं-कहीं पर अनपढ़ पात्रों के मुख से शुद्ध हिंदी का प्रयोग मिलता है। इतना सारा होकर भी लेखक की भाषा संवादनीय और संप्रेषणीयता पूर्ण है। इसलिए उनके कहानियों की भाषा दलित समाज या पाठक को अपने आस-पास की भाषा और घटनाएँ लगती है।

दलित कहानियों की भाषा ललित कहानियों से भिन्न होती है। अपमानित, प्रताड़ित और वंचित पात्रों की भाषा में माधुर्य नहीं खोजा जा सकता। जिस प्रकार समकालीन कविता का मूल्यांकन मात्र रस, छंद और अलंकार के आधार पर नहीं किया जा सकता उसी प्रकार दलित कहानियों का मूल्यांकन भी साहित्य के परम्परागत मानदंडों के आधार पर नहीं हो सकता। इन कहानियों से खड़ा होने वाला शोषण और दमन का बिम्ब प्रेमचंद, निराला, नागार्जुन, मुक्तिबोध की कहानियों में मिलने वाले बिम्ब का पूरक है न कि विरोधी। इन कहानियों में प्रयुक्त मिथक और प्रतीक परम्परागत अर्थ से हटकर नए अर्थ की अभिव्यक्ति कर रहे हैं। दलित कहानियों के संदर्भ में हरिनारायण ठाकुर का कहना है कि- *"यह सच है*

---

[36] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-45

[37] वही; पृ-45

कि दलित कथाकारों में साहित्य की शास्त्रीय धारा के अनुरूप कहानी-कला का अभाव है। किंतु चेतना कि सार्थक अभिव्यक्ति, संवेदनाओं की मार्मिकता और सामाजिक सरकारों के संघर्षशील तेवर दलित कथाकारों की रचनाओं में ही देखने को मिलते हैं। दलित कहानियों का मूल स्वर दलित जीवन के भोगे हुए यथार्थ के चित्रण द्वारा दलित जीवन की कथा-व्यथा, सामंती आतंक और मनुवादी व्यवस्था के विरुद्ध तीव्र आक्रोश और विरोध दर्ज कराना है।"[38] ये कहानियाँ सदियों से शोषित और समाज के हासिये पर पड़े वर्ग के दर्द के चित्रण में सफल रही है।

निष्कर्ष

दरअसल दलित कहानियों में लेखकों ने दलित समाज की बुनियादी समस्याओं को कहानी का केन्द्रीय विषय बनाया है। जाहिर है, इन बुनियादी समस्याओं में भारतीय समाज में मौजूद वर्ण और जाति का सवाल सबसे बड़ी समस्या के रूप में कहानियों में चित्रित हुआ है। दलित कहानीकारों का मानना है कि वर्ण और जाति के कारण ही उन्हें भारतीय समाज में ज्ञान और सम्पत्ति से वंचित रहना पड़ा। उनके साथ अस्पृश्य जैसा व्यवहार किया गया। दलित समाज की गरीबी का सबसे बड़ा कारण भी यही है। उनका मानना है कि दलित होने की पीड़ा की अनुभूति कोई दूसरा नहीं कर सकता है और न ही उसका बयान। इसलिए दलित उत्पीड़न का बयान भी स्वयं वे ही कर सकते हैं। इसलिए दलित कहानियों में प्रतिरोध की जो चेतना दिखलाई पड़ती है, उसका एक बड़ा कारण भी यही है कि गैर दलित चिन्तक अपनी व्याख्याओं में दलित समाज की इस मनोदशा को नहीं समझ पाते हैं। दलित लेखक इन

[38] दलित साहित्य का समाजशास्त्र; हरिनारायण ठाकुर; पृ-32

सवालों से टकराते हैं तथा दलित जीवन के मूल सवालों और समस्याओं को कहानी का हिस्सा बनाते हैं। इसलिए विचार और साहित्य की दुनिया में दलित कहानियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनका अध्ययन एक नए समाज की वास्तविक जिन्दगी को जानने का भी अनुभव है, इसमें सन्देह नहीं ! आगे के अध्याय में संरचनापरक विश्लेषण के द्वारा संज्ञा, विशेषण, क्रिया के प्रयोगों में विचलन, संज्ञा का क्रिया रूप और क्रिया का संज्ञा रूप में प्रयोग, विशिष्ट विशेषण और विशेषण पदबंध दलित कहानियों में देखेंगे।

तृतीय अध्याय

दलित कहानियों का संरचनापरक विश्लेषण

संरचना पर सस्यूर का कहना है कि संरचना एक से अधिक घटकों के अंतःसंबंध का नाम है। अतः यदि एक ही तत्व हो तो संरचना नहीं होगी। संरचना में तत्व होते हैं और उनके बीच संबंध होते हैं। भाषा की संरचना से तात्पर्य है- भाषा की इकाइयाँ और उनके बीच प्राप्त संबंध। संरचना एक अमूर्त अवधारणा है। भाषाविद् सरल शब्दों के बीच भेद करते हैं, जैसे जल्द ही, जिसमें वाक्य के अलावा कोई आंतरिक संरचना नहीं होती है, और जटिल शब्द, जैसे जल्द ही, जिन्हें अर्थपूर्ण घटकों में तोड़ा जा सकता है। सरल शब्दों में शब्द के अलावा कोई आंतरिक संरचना नहीं होती। जटिल शब्दों को सार्थक भागों में तोड़ा जा सकता है। दुनिया की भाषाओं के आकारिकी की जटिलताएं एक दूसरे से बहुत अलग हैं। एक तरफ कहानियों में ऐसी भाषाओं का प्रयोग होता है, जिनमें जटिल शब्दों को उत्पन्न करने के लिए अपेक्षाकृत कम विधियाँ हैं। दूसरी ओर, दलित कहानियों में ऐसी भाषाओं में बहुत लंबे शब्द हो सकते हैं जो एक के बाद एक कई प्रत्ययों को जोड़कर बनाए जाते हैं और पूर्ण वाक्यों के समान अर्थ रखते हैं। तंत्र जो जटिल शब्दों को उत्पन्न करने के लिए कार्यरत हैं और जो कार्य इस जटिलता को पूरा करते हैं वे सभी भाषाओं में समान नहीं हैं।

संरचनापरक विश्लेषण के अंतर्गत कहानियों में प्रयुक्त हिंदी भाषा की व्याकरणिक इकाईयों के प्रयोग का विश्लेषण किया जाएगा। इस स्तर पर वाक्य के विभिन्न घटकों (शब्दों)

की संरचनात्मक कोटियों का निर्धारण किया जाता है, जैसे संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रियाविशेषण, क्रिया आदि। तो आगे चयनित दलित कहानियों का संरचनापरक विश्लेषण करते हैं।

3.1 संज्ञा

संज्ञा हिंदी व्याकरण का अति महत्त्वपूर्ण अध्याय है, क्योंकि हिंदी व्याकरण के लगभग प्रत्येक अध्याय में संज्ञा की भूमिका रहती है। संज्ञा विशेष रूप से एक विकारी शब्द है, जिसका अर्थ नाम होता है। इस संसार की प्रत्येक वस्तु या व्यक्ति का नाम संज्ञा होता है। किसी व्यक्ति, वस्तु, प्राणी, गुण, भाव या स्थान के नाम के घोतक शब्द को **संज्ञा** कहते हैं। संज्ञा का अर्थ नाम होता है, क्योंकि संज्ञा किसी व्यक्ति, वस्तु, प्राणी, गुण, भाव या स्थान के नाम को दर्शाती है। संज्ञा एक विकारी शब्द है।

वासुदेवनंदन प्रसाद के अनुसार, *"संज्ञा उस विकारी शब्द को कहते हैं, जिससे किसी विशेष वस्तु, भाव और जीव के नाम का बोध हो।"*[39]

यहाँ 'वस्तु' शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में हुआ है, जो केवल वाणी और पदार्थ का वाचक नहीं, वरन उनके धर्मों का भी सूचक है। साधारण अर्थ में 'वस्तु' का प्रयोग इस अर्थ में नहीं होता। अत: वस्तु के अंतर्गत प्राणी, पदार्थ और धर्म आते हैं। इन्हीं के आधार पर संज्ञा के भेद किए गए हैं।

[39] आधुनिक हिंदी व्याकरण और रचना; वासुदेवनंदन प्रसाद; पृ-72

संज्ञा शब्द का उपयोग किसी **वस्तु, प्राणी, व्यक्ति, गुण, भाव** या **स्थान** के लिए नहीं किया जाता, बल्कि किसी **वस्तु, व्यक्ति, प्राणी, गुण, भाव** या **स्थान** के **'नाम'** के लिए किया जाता है।

जैसे:- **मोहन जाता है।** इसमें मोहन नामक व्यक्ति संज्ञा नहीं है, बल्कि उस व्यक्ति का नाम **'मोहन' संज्ञा है।**

उदाहरण के लिए ('अब्बुराम का बाग' कहानी से) जो-जो शब्द संज्ञा को दर्शा रहे हैं वो इस प्रकार हैं :-

*"**तिरिपिगोडु** पुरानी **खटिया** पर **सिर** छिपाए सो रहा है। **आकाश** और **धरती** के बीच काजल जैसा **अंधेरा** है। **आइने** के टुकड़े की तरह **सितारे** चमक रहें हैं। **पीपल** के **पेड़** के नीचे **मेंढक** टर-टर्रा रहे हैं। **पानी** में निवास करने वाले **साँप** ने **मेंढक** को **मुँह** दबोच लिया है, जिससे उसे सांस लेने में कठिनाई हो रही है।"*[40]

उदाहरण के लिए ('शवयात्रा' कहानी से) :-

*"**रामजीलाल** की **आँखें** फटी की फटी रह गई। अपने भीतर उठते **ईर्ष्या-द्वेष** को दबाकर उसने कहा, 'ये तो चोखी बात है **सुरजा**...पर पक्का **मकान** बणवाने से पहले **परधानजी** से तो पूछ लिया था या नहीं ?"*[41]

संज्ञा के पाँच भेद होते हैं-

- व्यक्तिवाचक संज्ञा

[40] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-45

[41] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-38

- जातिवाचक संज्ञा
- भाववाचक संज्ञा
- समूहवाचक संज्ञा
- द्रव्यवाचक संज्ञा

3.1.1 व्यक्तिवाचक संज्ञा

किसी व्यक्ति विशेष, स्थान विशेष और किसी वस्तु विशेष के नाम के घोतक शब्द को व्यक्तिवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे:- रवि या जयपुर, यहाँ रवि नाम प्रत्येक व्यक्ति का नाम नहीं हो सकता, किसी एक का ही होगा। जयपुर देश या दुनिया के प्रत्येक शहर का नाम नहीं हो सकता। व्यक्तिवाचक संज्ञा शब्द सदैव एक वचन में ही प्रयुक्त होते हैं। इनका बहुवचन जातिवाचक संज्ञा शब्द बन जाता है।

उदाहरण के लिए ('मोहरे' कहानी से) :-

*"**सत्यप्रकाश** ने **मनोज** को चांटा बहुत जोर से नहीं मारा था और न ही उसकी बाँह को किसी तरह मरोड़ा या ऐंठा था कि उससे **मनोज** को बहुत तकलीफ हुई हो। लेकिन **सत्यप्रकाश** की स्कूल में प्रतिष्ठा और छात्रों के बीच इज्जत से चिड़ने वाले एक अध्यापक **रामदेव त्रिपाठी** ने उस लड़के के घर जाकर उसके पिता को जा भड़काया।"*[42]

उदाहरण के लिए ('प्रस्थान' कहानी से) :-

[42] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-53

*"निम्न वर्ग में सामान्य लोग भी हैं और कुछ अस्पृश्य भी हैं। अस्पृश्य वर्ग में **'माला'** और **'मादिगा'** नाम की दो जातियाँ हैं। इसमें गरीब पुरूष और स्त्रियाँ हैं। स्त्रियाँ, पुरूष के अधीन हैं। मालच्छी का जीवन भी ऐसा ही था।"*[43]

यहाँ पर माला और मादिगा जाति व्यक्तिवाचक संज्ञा को दर्शा रहे हैं।

3.1.2 जातिवाचक संज्ञा

किसी व्यक्ति विशेष, स्थान विशेष और किसी वस्तु विशेष की जाति बताने वाले शब्द को जातिवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे:- पशु, कवि, कुत्ता, बिल्ली, नदी, पहाड़, महासागर, महाद्वीप इत्यादि। यदि किसी विशेषण शब्द तथा क्रियावाचक शब्द को ओकारान्त बहुवचन में लिख दिया जाता है तो उसे जातिवाचक शब्द माना जाता है। जैसे:- छोटा का छोटों, बड़ा का बड़ों आदि।

उदाहरण के लिए ('प्रमोशन' कहानी से) :-

*"**स्वीपर** से अकुशल कामगार के पद पर पदोन्नति पाकर उसके पाँव जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। वह जैसे भारविहीन होकर हवा में तैर रहा था। एक लम्बे अरसे से वह बदलाव के लिए छटपटा रहा था।"*[44]

- शेर, गाय, ऊँट, हाथी और खरगोश सभी अलग-अलग हैं, लेकिन इन सभी को एक जाति से संबोधित किया जा सकता है और उस जाति का नाम 'जानवर' है।

---

[43] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-37

[44] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-44

- यहाँ **जानवर** शब्द किसी एक विशेष **जानवर** के बारे में नहीं बता रहा है क्योंकि **जानवर** शब्द से किसी एक जानवर के बारे में पता चलने के बजाय संपूर्ण **जाति (जानवर)** के बारे में पता चलता है। अतः **'जानवर'** जातिवाचक संज्ञा है। इसी प्रकार शहर, बालक, गाँव आदि जातिवाचक संज्ञा है।

और देखते हैं उदाहरण ('कूड़ाघर' कहानी से) :-

*"रात 10.30 बजे अजब सिंह को **बस** मिली थी। देहरादून जाने के लिए यह आखिरी **बस** थी। **बस** में ज्यादा भीड़ नहीं थी। उसे **खिड़की** के पास जगह मिल गई थी। सीट पर बैठते ही उसे थकान महसूस हुई।"*[45]

यहाँ पर हम उदाहरण के जरिए जातिवाचक संज्ञा देख सकते हैं।

3.1.3 भाववाचक संज्ञा

किसी भाव, गुण, दशा और अवस्था का ज्ञान करवाने वाले शब्द को भाववाचक संज्ञा कहते हैं।

जैसे:- क्रोध, प्रसन्नता, प्रेम, आश्चर्य, लालच, जवानी इत्यादि। भाववाचक संज्ञा शब्द सदैव एक वचन में ही प्रयुक्त होते हैं। इनका बहुवचन जातिवाचक संज्ञा का बोध करवाता है। जैसे:- दूरी – दूरियाँ, चोरी – चोरियाँ आदि। भाववाचक संज्ञा शब्दों का निर्माण किसी जातिवाचक संज्ञा / सर्वनाम / विशेषण / क्रिया या अव्यय शब्दों में प्रत्यय जुड़ने से होता है। उदाहरण के रूप में ('जरूरत' कहानी से) :-

---

[45] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-53

*''जैसे ही संगीता ने मकान के अंदर प्रवेश किया उसकी नजरें मुझसे **टकराई** । नजरें मिलते ही पहले तो वह पूर्व की भांति **मुस्कुराई** और फिर फूल मेरी ओर बढा दिया, 'लीजिए फिलासफर साहब' ।''*[46]

- **क्रोध, प्रसन्नता, प्रेम, आश्चर्य** – यहाँ शब्द **भाव** का बोध करवा रहे हैं। अतः **क्रोध, प्रसन्नता, प्रेम** एवं **आश्चर्य** भाववाचक संज्ञा हैं।
- **सुन्दरता, ईमानदारी** – यहाँ दोनों शब्द **गुण** को दर्शाते हैं । अतः **सुन्दरता** एवं **ईमानदारी** भाववाचक संज्ञा हैं।
- **बुढ़ापा, बचपन, सुख** – यहाँ शब्द **अवस्था** को दर्शाते हैं । अतः **बुढ़ापा, बचपन** एवं **सुख** भाववाचक संज्ञा हैं।

3.1.4 समूहवाचक संज्ञा

वे संज्ञा शब्द, जो किसी समूह या समुदाय विशेष की स्थिति को प्रकट करते हैं उन्हें समूहवाचक संज्ञा या समुदाय वाचक संज्ञा कहते हैं।

जैसे:- कक्षा, संसद, भीड़, ढेर, दल, सेना, सभा, परिवार, कक्षा, मेला, सेना, पुलिस इत्यादि। यहाँ सभी शब्द एक समूह का बोध करवाते हैं। अतः संसद, भीड़, ढेर, दल, सेना, सभा, परिवार, कक्षा, मेला, सेना, पुलिस आदि समूहवाचक संज्ञा है।

उदाहरण के रूप में ('गंवार' कहानी से) :-

---

[46] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-102

*''उसके बात करने की शैली और सादगी आभा को इतनी अच्छी लगती थी कि **समिति** की बैठक समाप्त हो जाने के बाद भी वह बहुत देर तक उससे बातें करती रहती थी।''*[47]

3.1.5 द्रव्यवाचक संज्ञा

किसी द्रव्य, पदार्थ, धातु तथा अधातु का बोध करवाने वाले शब्द को द्रव्यवाचक संज्ञा कहते हैं।

- ठोस अवस्था – सोना, चाँदी, लोहा आदि शब्द अलग-अलग धातु को दर्शाते हैं। अतः सोना, चाँदी, लोहा द्रव्यवाचक संज्ञा है।
- द्रव अवस्था – पानी, दूध आदि शब्द द्रव को दर्शाते हैं। अतः पानी, दूध द्रव्यवाचक संज्ञा है।
- गैस अवस्था – ऑक्सीजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन इत्यादि।

उदाहरण के रूप में ('कूड़ाघर' कहानी से) :-

*''साँस रोककर उसने रास्ता पार किया था **शराब** गोदाम के सामने से। **शराब** का यह गोदाम उतना ही पुराना था जितना यह शहर। सुबह की ताजा हवा में **शराब** की गंध तेज धारवाले किसी औजार की तरह उसे छील रही थी।''*[48]

---

[47] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-128

[48] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-55

3.2 विशेषण

संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बतलाने वाले शब्दों को विशेषण कहते है। विशेषण का शाब्दिक अर्थ है – विशेषता बताना। विशेषण एक विकारी शब्द है। विशेषण शब्द वह विकारी शब्द है, जिससे संज्ञा या सर्वनाम शब्दों की विशेषता पता चलती है। जिस प्रकार से हम किसी भी व्यक्ति या वस्तु का नाम लेने से पहले उस वस्तु के बारे मे कुछ विशेष बात करते है, तो वह उसकी विशेषता हुई। सरल शब्दों मे समझें कि किसी भी व्यक्ति,वस्तु क़ो उसकी विशेष बात से दर्शाना या उसकी विशेषता बताना विशेषण कहलाता है।

उदाहरण के रूप में ('तलाश' कहानी से) :-

"रामवीर सिंह एक सरकारी अधिकारी थे। बहुत से लोगों के साथ उनका रोज सम्पर्क होता था। ऐसे में कोई उन्हें ढाबे पर खाना खाते देखेगा तो क्या सोचेगा।"[49]

यहाँ पर 'सरकारी' शब्द 'अधिकारी' की विशेषता बता रहे हैं इसलिए ये शब्द विशेषण हैं। इसका अर्थ यह है कि विशेषणरहित संज्ञा से जिस वस्तु का बोध होता है, विशेषण लगने पर उसका अर्थ सिमित हो जाता है।

उदाहरण के रूप में ('यह अंत नहीं) :-

"सचींदर ने तेजी से आगे बढ़कर उसका रास्ता रोक लिया। बेहयायी से बोला, 'सिर पर इतना बोझ है, थक गई होगी। थोड़ा सा सुस्ता ले...' बिरमा ने आग्नेय नेत्रों से उसे घूरा।"[50]

[49] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-19

[50] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-22

यहाँ 'आग्नेय' विशेषण से 'नेत्र' संज्ञा की व्याप्ति मर्यादित (सिमित) हो गयी है। कुछ वैयाकरणों ने विशेषण को संज्ञा का एक उपभेद माना है; क्योंकि विशेषण भी वस्तु का परोक्ष नाम है। लेकिन, ऐसा मानना ठीक नहीं; क्योंकि विशेषण का उपयोग संज्ञा के बिना नहीं हो सकता। विशेषण वस्तु का स्वरूप स्पष्ट करता है। इसका प्रयोग वस्तु को सजीव एवं मूर्तिमत करता है। विशेषण संज्ञा के आभूषण हैं। सटीक विशेषणों के प्रयोग से संज्ञा उसी प्रकार विभूषित होती है, जिस प्रकार आभूषणों के प्रयोग से कोई रूपसी। विशेषण भाषा को सजीव, प्रवाहमय एवं प्रभावशाली बनाने के बड़े ही समर्थ उपकरण है।

विशेष्य- विशेषण शब्द जिस संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताते हैं, वे विशेष्य कहलाते हैं।

दूसरे शब्दों में- विशेषण से जिस शब्द की विशेषता प्रकट की जाती है, उसे विशेष्य कहते है।

उदाहरण के रूप में ('शवयात्रा' कहानी से) :-

''कल्लन की शादी भी रेलवे कालोनी में ही हो गई थी। उसके ससुर भी रेलवे में ही थे। उसे पढ़ी-लिखी पत्नी मिली थी, जिसके कारण उसके रहन-सहन में फर्क आ गया था। उसके जीवन का ढर्रा ही बदल गया था।''[51]

यहाँ पर 'पत्नी' विशेष्य है क्योंकि 'पढ़ी-लिखी' विशेषण इसी की विशेषता बता रहा है।

प्रविशेषण- जो शब्द विशेषण की विशेषता बताते है, वे प्रविशेषण कहलाते है।

[51] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-36

उदाहरण के रूप में ('प्रस्थान' कहानी से) :-

"खेत में जब लहलहाती अच्छी फसल पकती, तब लच्छरसु और भी व्यस्त रहता। कभी-कभार तो खेत की रखवाली के कारण वह रात भी खेत में गुजारता था। सवेरे जो भी नाश्ता ज़मींदार देते, लच्छरसु वही खाकर फिर काम में व्यस्त हो जाता देर रात वह घर लौटता था।"[52]

यहाँ पर 'लहलहाती' शब्द 'अच्छी' की विशेषता बता रहे हैं, इसलिए ये शब्द प्रविशेषण हैं।

विशेषण के प्रकार

विशेषण निम्नलिखित चार प्रकार होते है -

(1) गुणवाचक विशेषण

(2) संख्यावाचक विशेषण

(3) परिमाणवाचक विशेषण

(4) संकेतवाचक या सार्वनामिक विशेषण

3.2.1 गुणवाचक विशेषण :- वे विशेषण शब्द जो संज्ञा या सर्वनाम शब्द के गुण-दोष, रूप-रंग, आकार, स्वाद, दशा, अवस्था, स्थान आदि की विशेषता प्रकट करते हैं, गुणवाचक विशेषण कहलाते है।

[52] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-39

उदाहरण के रूप में ('खुला' कहानी से) :-

गुण- *'फकीर के मां-बाप की अन्य संतानें जीवित न रहने के कारण ही उन्होनें फकीर नाम रखा था। वास्तव में वह फकीर ही था।'*

रंग- *'वो काला टोपी पहन और लाल रुमाल लिए साइकिल से जाता था।'*

आकार- *'फकीर का चेहरा गोल और मासूम सा है।'*

अवस्था- *'जो भी आमदनी आती उससे एक दिन भर पेट भोजन तो दो दिन उपवास करने पड़ते थे।'*

गुणवाचक विशेषण में विशेष्य के साथ कैसा/कैसी लगाकर प्रश्न करने पर उत्तर प्राप्त किया जाता है, जो विशेषण होता है।

विशेषणों में इनकी संख्या सबसे अधिक है। इनके कुछ मुख्य रूप इस प्रकार हैं।

गुण- भला, उचित, अच्छा, ईमानदार, सरल, विनम्र, बुद्धिमानी, सच्चा, दानी, न्यायी, सीधा, शान्त आदि। ('प्रमोशन' कहानी से)

दोष- बुरा, अनुचित, झूठा, क्रूर, कठोर, घमंडी, बेईमान, पापी, दुष्ट आदि। ('लाठी' कहानी से)

रूप/रंग- लाल, पीला, नीला, हरा, सफेद, काला, बैंगनी, सुनहरा, चमकीला, धुँधला, फीका। ('स्वाति बूंद' कहानी से)

आकार- गोल, चौकोर, सुडौल। ('षड्यंत्र' कहानी से)

समान, पीला, सुन्दर, नुकीला। ('जहर' कहानी से)

लम्बा, चौड़ा, सीधा, तिरछा। ('खुला' कहानी से)

बड़ा, छोटा, चपटा, ऊँचा, मोटा, पतला आदि। ('जेल' कहानी से)

स्वाद- मीठा, कड़वा। ('खुला' कहानी से)

नमकीन, तीखा, खट्टा, सुगंधित आदि। ('कूड़ाघर' कहानी से)

दशा/अवस्था- दुबला, पतला, मोटा। ('बिट्टन मर गई' कहानी से)

भारी, पिघला, गाढ़ा, गीला, सूखा। ('यह अंत नहीं' कहानी से)

घना, गरीब, उद्यमी, पालतू। ('अब्बुराम का बाग' कहानी से)

रोगी, स्वस्थ, कमजोर, हल्का, बूढ़ा आदि। ('मुम्बई कांड' कहानी से)

स्थान- उजाड़, चौरस, भीतरी, बाहरी, उपरी। ('अब्बुराम का बाग' कहानी से)

सतही, पूरबी, पछियाँ, दायाँ, बायाँ। ('मैं ब्राहमण नहीं हूँ !' कहानी से

स्थानीय, देशीय, क्षेत्रीय, विदेशी, ग्रामीण आदि। ('नो बार' कहानी से)

काल- नया, पुराना, ताजा। ('यह अंत नहीं' कहानी से)

भविष्य, प्राचीन, अगला, पिछला। ('सांग' कहानी से)

आगामी, टिकाऊ, नवीन, सायंकाल, आधुनिक, आदि। ('कामरेड का घर' कहानी से)

स्थिति/दिशा- निचला, ऊपरी, पूर्वी आदि। ('मूवमेंट' कहानी से)

स्पर्श- मुलायम, सख्त, ठंडा, गर्म, कोमल, आदि। ('तीन झूठ' कहानी से)

स्वभाव- चिड़चिड़ा, मिलनसार। ('रिहाई' कहानी से)

गंध- सुगंधित, दुर्गंध । ('शवयात्रा' कहानी से)

व्यवसाय- व्यापारी, शौक्षणिक, प्राविधिक आदि। ('खुला' कहानी से)

पदार्थ- सूती, रेशमी, ऊनी, कागजी, फौलादी, लौह आदि। ('प्रमोशन' कहानी से)

समय- अगला, पिछला, नजदीकी आदि। ('ब्रह्मास्त्र' कहानी से)

ध्वनि- मधुर, कर्कश । ('बिट्टन मर गई' कहानी से)

भार- हल्का, भारी । ('गिरवी' कहानी से)

3.2.2 संख्यावाचक विशेषण :- वे विशेषण शब्द जो संज्ञा अथवा सर्वनाम की संख्या का बोध कराते हैं, संख्यावाचक विशेषण कहलाते हैं ।

दूसरे शब्दों में- वह विशेषण, जो अपने विशेष्यों की निश्चित या अनिश्चित संख्याओं का बोध कराए, 'संख्यावाचक विशेषण' कहलाता है ।

उदाहरण के लिए ('गिरवी' कहानी से) :-

"'नहीं, मैं कुछ न कुछ जरूर दूंगा, पर गिरवी क्या रखूं' – शास्त्री ने सोचा ।

'तुम्हरी एक जनेऊ !!!'

'जनेऊ ???' शास्त्री स्तब्ध रह गया । उसने जनेऊ को स्पर्श किया । ओबिलेसु का चेहरा देखा ।"[53]

इस वाक्य में 'एक' संख्यावाचक विशेषण हैं, क्योंकि इससे जनेऊ की संख्या संबंधी विशेषता का ज्ञान होता है ।

संख्यावाचक विशेषण के भेद

संख्यावाचक विशेषण के दो भेद होते है-

(अ) निश्चित संख्यावाचक विशेषण

(आ) अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण

[53] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-27

3.2.2.1 निश्चित संख्यावाचक विशेषण :- वे विशेषण शब्द जो विशेष्य की निश्चित संख्या का बोध कराते हैं,

निश्चित संख्यावाचक विशेषण कहलाते हैं।

सरल शब्दों में- जिससे किसी निश्चित संख्या का ज्ञान हो, वह निश्चित संख्यावाचक विशेषण है।

जैसे- एक, दो आठ, चौगुना, सातवाँ आदि।

उदाहरण के रूप में ('तलाश' कहानी से) :-

"एक सप्ताह से रामवीर सिंह अपने लिए एक सुविधाजनक मकान किराए पर ढूंढ रहे थे। ऐसा मकान जो ज्यादा बड़ा न हो किंतु दो कमरों का सैट जरूर हो। जिनमें एक कमरा बेडरूम और दूसरा ड्राइंग रूम के रूप में काम आ सके।"[54]

यहाँ पर हम निश्चित संख्या देख सकते हैं।

3.2.2.2 अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण :- वे विशेषण शब्द जो विशेष्य की निश्चित संख्या का बोध न कराते हों, वे अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण कहलाते हैं।

दूसरे शब्दों में- जिस विशेषण से संख्या निश्चित रूप से नहीं जानी जा सके, वह अनिश्चित विशेषण है।

जैसे- कई, कुछ, सब, थोड़ा, सैकड़ों, अरबों आदि।

---

[54] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-19

उदाहरण के रूप में ('मिट्टी भोजन' कहानी से) :-

''क्या घर में कुछ दाना है ? बच्चे भूख से तड़प रहे हैं, मैं भी भूखी हूँ और आप भी। इतना सब कुछ होते हुए भी तुम पीकर आते हो।''[55]

यहाँ पर विशेष्य की निश्चित संख्या का बोध नहीं हो रहा है इसलिए इसे अनिश्चित कहेंगे।

3.2.3 परिमाणवाचक विशेषण :- जिन विशेषण शब्दों से किसी वस्तु के माप-तौल संबंधी विशेषता का बोध होता है, वे परिमाणवाचक विशेषण कहलाते हैं।

दूसरे शब्दों में- वह विशेषण जो अपने विशेष्यों की निश्चित अथवा अनिश्चित मात्रा (परिमाण) का बोध कराए, परिमाणवाचक विशेषण कहलाता है।

यह किसी वस्तु की नाप या तौल का बोध कराता है।

जैसे- 'सेर' भर दूध, 'तोला' भर सोना, 'थोड़ा' पानी, 'कुछ' पानी, 'सब' धन, 'और' घी लाओ, 'दो' लीटर दूध, 'बहुत' चीनी इत्यादि।

इस विशेषण का एकमात्र विशेष्य द्रव्यवाचक संज्ञा है।

जैसे ('स्वाति बूंद' कहानी से) :-

''मुझे थोड़ा दूध चाहिए, बच्चे भूखे हैं। बारात भी आ गई है। बारात को खिलाने के लिए चार क्विंटल चावल चाहिए।''[56]

उपर्युक्त उदाहरणों में 'थोड़ा' अनिश्चित एवं 'चार क्विंटल' निश्चित मात्रा का बोधक है।

परिमाणवाचक से भिन्न संज्ञा शब्द भी परिमाणवाचक की भाँति प्रयुक्त होते हैं।

---

[55] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-101

[56] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-87

जैसे ('षड्यंत्र' कहानी से) :-

"चुल्लूभर पानी में डूब मरो। यहाँ की बाढ़ में सड़कों पर छाती भर पानी हो गया था।"[57]

परिमाणवाचक विशेषण के भेद

परिमाणवाचक विशेषण के दो भेद होते है-

(i) निश्चित परिमाणवाचक

(ii) अनिश्चित परिमाणवाचक

3.2.3.1 निश्चित परिमाणवाचक :- जो विशेषण शब्द किसी वस्तु की निश्चित मात्रा अथवा माप-तौल का बोध कराते हैं, वे निश्चित परिमाणवाचक विशेषण कहलाते है।

जैसे ('मुम्बई कांड' कहानी से) :-

"सुबह से ही कुछ न कुछ ऐसा घटित हो रहा था जिसने उसे तनावग्रस्त कर रखा था। दफ्तर जाते ही गुप्ता से झड़प हो गई थी। वह तो चुप ही था लेकिन गुप्ता ने ही बोला चार किलो चावल तो देना ही होगा इसलिए वह आपे से बाहर हो गया था। दफ्तर न होता तो शायद मारपीट हो जाती।"[58]

3.2.3.2 अनिश्चित परिमाणवाचक :- जो विशेषण शब्द किसी वस्तु की निश्चित मात्रा अथवा माप-तौल का बोध नहीं कराते हैं, वे अनिश्चित परिमाणवाचक विशेषण कहलाते है।

जैसे ('मिट्टी भोजन' कहानी से) :-

---

[57] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-66

[58] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-30

"जैसे ही घर में दाखिल हुई, देखा तो माँ खाना बना रही थी। भैय्या, बहन, माँ भी खाना बनने के इंतजार में चूल्हे के आस-पास बैठे थे। खाने में माँ थोड़े चावल और कुछ साग पका रही थी। पर मैं पानी के मटके के पास गई, थोड़ा पानी पिया, चावल की पतीली देखी और माँ के समीप जाकर जमीन पर सो गई।"[59]

3.2.4 संकेतवाचक या सार्वनामिक विशेषण :- जो शब्द संज्ञा या सर्वनाम की ओर संकेत करते है या जो शब्द सर्वनाम होते हुए भी किसी संज्ञा से पहले आकर उसकी विशेषता को प्रकट करें, उन्हें संकेतवाचक या सार्वनामिक विशेषण कहते है।

दूसरे शब्दों में- (मैं, तू, वह) के सिवा अन्य सर्वनाम जब किसी संज्ञा के पहले आते हैं, तब वे 'संकेतवाचक' या 'सार्वनामिक विशेषण' कहलाते हैं।

सरल शब्दों में- वे सर्वनाम जो संज्ञा से पूर्व प्रयुक्त होकर उसकी ओर संकेत करते हुए विशेषण के रूप में प्रयुक्त होते हैं, 'संकेतवाचक विशेषण' कहलाते हैं।

जैसे ('शवयात्रा' कहानी से) :-

"गाँव वह यदाकदा ही आता था। लेकिन जब भी वह गाँव आता, चमार उसे अजीब-सी नजरों से देखते थे। कल्लू से कल्लन हो जाने को वे स्वीकार नहीं कर पा रहे थे। उनकी दृष्टि में वह अभी भी बल्हार ही था, समाज-व्यवस्था में सबसे नीचे यानी अछूतों में भी अछूत।"[60]

उक्त वाक्यों में 'वह' सर्वनाम 'कल्लन' संज्ञा से पहले आकर उसकी ओर संकेत कर रहा है। ये सर्वनाम विशेषण की तरह प्रयुक्त हुए हैं, अतः इन्हें संकेतवाचक या सार्वनामिक विशेषण कहते हैं।

---

[59] श्रेष्ठ दलित कहानियांक; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-103

[60] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-36

ये लड़के, कोई स्त्री, कौन-सा फूल, वे कुर्सियाँ आदि में ये, कोई, कौन-सा, वे- सार्वनामिक विशेषण हैं।

सार्वनामिक विशेषण के भेद

व्युत्पत्ति के अनुसार सार्वनामिक विशेषण के भी दो भेद है-

(i) मौलिक सार्वनामिक विशेषण

(ii) यौगिक सार्वनामिक विशेषण

3.2.4.1 मौलिक सार्वनामिक विशेषण- जो बिना रूपान्तर के संज्ञा के पहले आता हैं।

जैसे- 'यह' घर; वह लड़का; 'कोई' नौकर इत्यादि। ('मूवमेंट' कहानी से)

3.2.4.2 यौगिक सार्वनामिक विशेषण- जो मूल सर्वनामों में प्रत्यय लगाने से बनते हैं।

जैसे- 'ऐसा' आदमी; 'कैसा' घर; 'जैसा' देश इत्यादि। ('कुंए का मेंढक' कहानी से)

3.2.5 व्यक्तिवाचक विशेषण :- जिन विशेषण शब्दों की रचना व्यक्तिवाचक संज्ञा से होती है, उन्हें व्यक्तिवाचक विशेषण कहते है।

दूसरे शब्दों में- ऐसे शब्द जो असल में संज्ञा के भेद व्यक्तिवाचक संज्ञा से बने होते हैं एवं विशेषण शब्दों की रचना करते हैं, वे व्यक्तिवाचक विशेषण कहलाते हैं।

व्यक्तिवाचक विशेषण के उदाहरण-:

***'मुझे भारतीय खाना बहुत पसंद है।'* ('नो बार' कहानी से)**

ऊपर दिए गए उदाहरण में आप देख सकते हैं **भारतीय** शब्द असल में तो व्यक्तिवाचक संज्ञा से बना **भारत** शब्द लेकिन अब भारतीय शब्द विशेषण की रचना कर रहा है। इस

वाक्य में यह शब्द खाने की विशेषता बता रहा है। अतः यह उदाहरण व्यक्तिवाचक विशेषण के अंतर्गत आयेंगे।

***'सभी साड़ियों में से मुझे बनारसी साड़ी सबसे ज्यादा पसंद है।'* ('एम.पी.टी.सी. रेणुका' कहानी से)**

जैसा कि आप ऊपर दिए गए उदाहरण में देख सकते हैं कि **बनारसी** शब्द का प्रयोग किया गया है। यह शब्द **बनारस** शब्द से बना है जो एक व्यक्तिवाचक संज्ञा है लेकिन अब यह बनारसी बनने के बाद यह विशेषण कि तरह प्रयोग हो रहा है। अतः यह उदाहरण व्यक्तिवाचक विशेषण के अंतर्गत आएगा।

3.3 क्रिया के प्रयोगों में विचलन

भाषाविज्ञान, जिसे अक्सर भाषा की संरचना के वैज्ञानिक अध्ययन के रूप में जाना जाता है, कई उपक्षेत्रों में विभाजित है, जिनमें से एक रूप विज्ञान है। रूप विज्ञान भाषा विज्ञान का एक अनिवार्य अंग है। भाषाविज्ञान के अन्य उप-क्षेत्रों के साथ रूप विज्ञान की विषय वस्तु की तुलना करना इसकी विषय वस्तु की समझ हासिल करने का एक प्रभावी तरीका हो सकता है। जिस तरह से एक वाक्य का उच्चारण किया जाता है, या उसकी ध्वनि संरचना, वाक्य के निर्माण का एक महत्वपूर्ण पहलू है। किसी दिए गए शब्द को जिस तरह से प्रयोग किया जाता है, वह शब्द की मूल संरचना का एक अनिवार्य घटक होता है। और बिना किसी संदेह के, किसी भाषा का सही प्रयोग करना उसके इतिहास के दौरान बदलाव के लिए अतिसंवेदनशील होती है।

जिस शब्द के द्वारा किसी कार्य के करने या होने का बोध होता है उसे **क्रिया** कहा जाता है। संस्कृत में क्रिया रूप को धातु कहते हैं। हिंदी में इन धातुओं के साथ 'ना' लगता है। जैसे- खाना, पीना, पढ़ना।

क्रिया का अर्थ होता है कार्य करना। प्रत्येक भाषा के वाक्य में क्रिया का बहुत महत्व होता है। प्रत्येक वाक्य को पूरा करने में क्रिया का होना बहुत ही जरूरी है। क्रिया किसी कार्य के करने या उसके होने की बारे में दर्शाती है। क्रिया को करने वाला कर्ता कहलाता है।

उदाहरण के रूप,

"संध्या की सुरमई चादर चारों ओर फैलने लगी थी।" ('सांग' कहानी से, पृ-29)

"दो-तीन बार उसने इस विज्ञापन को पढ़ा और पेन से उस पर एक निशान लगाने के बाद वह कुछ देर तक पेन को अपनी अंगुलियों में नचाता रहा।" ('नो बार' कहानी से, पृ-36)

"पहले हाजिरी लगाने के प्रयास में वे एक-दूसरे के साथ हाजिरी रजिस्टर की छीना-झपटी-सी कर रहे थे।" ('मोहरे' कहानी से, पृ-46)

"हालांकि सब जानते थे कि वह ट्रांसफर के लिए प्रयास कर रहा था।" ('बिट्टन मर गई' कहानी से, पृ- 58)

"शास्त्री, क्लास से बाहर निकल गया। स्टाफ रूम में ओबिलेसु निस्तब्ध बैठा रहा।" ('गिरवी' कहानी से, पृ-23)

"तिरिपिगोडु पुरानी खटिया पर सिर छिपाए सो रहा है।" ('अब्बुराम का बाग' कहानी से, पृ- 45)

"सूरज सोयी हुई जनता को जगाने के लिए उग रह था।" ('षड्यंत्र' कहानी से, पृ-61)

"सुमेर उसका इशारा समझ गया था । जब से प्रदेश में उसकी जाति की मुख्यमंत्री बनी है, गुप्ता इसी तरह की भाषा बोलता है ।" ('मुम्बई कांड' कहानी से, पृ-30)

"वह जैसे भारविहीन होकर हवा में तैर रहा था । एक लम्बे अरसे से वह बदलाव के लिए छटपटा रहा था ।" ('प्रमोशन' कहानी से, पृ-44)

"सवालिया नजरों से उसकी ओर देखते हुए कहा, 'जोशीजी ने देखा है यह मैटर ?' कागज पर उभरे काले स्याह अक्षर शर्मा की आँखों में कांटों की तरह गड़ रहे थे ।" ('दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन' कहानी से, पृ-67)

ऊपर दिए गए वाक्यों में 'फैलने लगी', 'नचाता रहा', 'प्रयास करना', 'बैठा रहा', 'उग रहा', 'बोलना' शब्दों से कार्य-व्यापार का बोध हो रहा है। इन सभी शब्दों से किसी कार्य के करने अथवा होने का बोध हो रहा है। अत: ये क्रियाएं हैं।

क्रिया के बारे में कुछ मुख्य बिंदु –

- क्रिया सार्थक शब्दों के आठ भेदों में एक भेद है।
- व्याकरण में क्रिया एक विकारी शब्द है।
- क्रिया के भी कई रूप होते हैं जो प्रत्यय और सहायक क्रियाओं द्वारा बदले जाते हैं।
- क्रिया के रूप में उसके विषय संज्ञा या सर्वनाम के लिंग और वचन का भी पता चल जाता है।
- क्रिया वह विकारी शब्द है जिससे किसी पदार्थ या प्राणी के विषय में कुछ विधान किया जाता है।

- जिस विकारी शब्द के प्रयोग से हम किसी वस्तु के विषय में कुछ विधान करते हैं, उसे क्रिया कहते हैं।

क्रिया के भेद- क्रिया के दो भेद हैं

3.3.1 सकर्मक क्रिया- सकर्मक क्रिया उसे कहते हैं, जिसका कर्म हो या जिसके साथ कर्म की सम्भावना हो अर्थात जिस क्रिया के व्यापार का संचालन तो कर्ता से हो पर जिसका फल या प्रभाव किसी दूसरे व्यक्ति या वस्तु अर्थात कर्म पर पड़े।

उदाहरण के रूप में ('रिहाई' कहानी से) :-

"सुगनी रोज साग-सब्जी उगाती थी।"[61]

इस वाक्य में 'सुगनी' कर्ता है, 'उगाने' के साथ उसका कर्तृरूप से सम्बंध है। प्रश्न होता है, क्या उगाता है ? उत्तर है- साग-सब्जी। इस तरह 'साग-सब्जी' का 'उगाने' से सीधा सम्बंध है। अत: 'साग-सब्जी' कर्मकारक है। यहाँ सुगनी का उगाना का सम्बंध 'साग-सब्जी' अर्थात कर्म पर पड़ता है। इसलिए 'उगाना' क्रिया सकर्मक है।

3.3.2 अकर्मक क्रिया- जिन क्रियाओं का व्यापार और फल कर्ता पर हो, वे अकर्मक कहलाती है। अकर्मक क्रियाओं का 'कर्म' नहीं होता। क्रिया का व्यापार और फल दूसरे पर न पड़कर कर्ता पर पड़ता है।

उदाहरण के रूप में ('षड्यंत्र' कहानी से) :-

---

[61] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-74

"शास्त्री हँसने लगा।"[62]

इसमें 'हँसना' क्रिया अकर्मक है। 'शास्त्री' कर्ता है, 'हँसना' की क्रिया उसी के द्वारा पूरी होती है। अत: 'हँसने' का फल भी उसी पर पड़ता है। इसलिए 'हँसना' क्रिया अकर्मक है।

क्रिया के प्रयोगों में विचलन किया जाता है। यह विचलन व्याकरणिक (व्याकरण के सामान्य नियमों से) होता है। यह विचलन सोदेश्य होता है। इसमें लेखक का उद्देश्य अपनी बात को अग्रप्रस्तुत करने का होता है। इस संदर्भ में व्याकरणिक त्रुटि और व्याकरणिक विचलन दो बातें हैं। व्याकरणिक त्रुटि नियमों की जानकारी के अभाव में होती है। साहित्यकार विचलन अपने उद्देश्य के अनुसार जानबूझकर करता है। किसी प्रयोग में त्रुटि और विचलन के निर्धारण के लिए हम यह देखते हैं कि जो प्रयोग है, क्या वह किसी विशेष प्रभाव को उत्पन्न करने के लिए किया गया है या नहीं ? इसे समझने के लिए कहानी में विचलन के उदाहरण देखे जा सकते हैं।

उदाहरण के रूप में ('मिट्टी भोजन' कहानी से) :-

"रेखाएँ बनाती रही, फिर इधर-उधर देखा, कोई मुझे देख तो नहीं रहा, जब निश्चिंत हो गई, तो मिट्टी हाथ में ले, छान-बारिक कर सूंघा, खूब सोंधी खुश्बू आ रही थी और निगल ली।"[63]

यहाँ पर 'निगल लिया' का क्रिया में विचलन दिखता है, जो सामान्य भाषा व्यवहार से हटकर या विचलित प्रयोग है। एक दूसरे संदर्भ में सामान्य धारणा है कि 'मिट्टी खा लिया है'। यहाँ

---

[62] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-63

[63] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-103

उससे भी विचलन है कि वह 'खा नहीं लिया' है, बल्कि 'निगल लिया' है। अतः नई बात होने के कारण यह हमें आकर्षित करती है। भाषा के प्रति हमारी जड़ता का कारण यह है कि इसका प्रयोग करते-करते भाषा के प्रति संवेदनहीन हो जाते हैं। इतना प्रयोग होता हैं कि अपनी बातचीत में भाषा का ध्यान ही नहीं आता। क्रिया का आम बोलचाल में प्रयोग के कारण हम भाषा पर ध्यान नहीं देते, और वहाँ विचलन की स्थिति पैदा होती है।

3.3.3 संज्ञा का क्रियारूप प्रयोग

संज्ञा, सर्वनाम तथा विशेषण शब्दों के अंत में प्रत्यय लगाकर जो क्रिया बनती है, वही पर संज्ञा का क्रियारूप प्रयोग देखा जा सकता है और उसे नामधातु क्रिया कहते हैं। यदि आप जो कर रहे हैं उसका वर्णन करने के लिए आपको कोई मौजूदा क्रिया नहीं मिल रही है, तो बस निकटतम संज्ञा को सत्यापित करें। क्रिया का उद्देश्य यह है कि हम जो कहते हैं उसे तत्काल और टू-द-पॉइंट बनाते हैं। अपने भोजन में नमक डाल सकते हैं और अपने पौधों को पानी दे सकते हैं। विशेष रूप से प्रौद्योगिकी के विकास के क्षेत्र में, नए प्रयोग आम हैं, और यहाँ तक कि संज्ञाएं जो कभी क्रिया नहीं हुआ करती थीं, उन्होंने भी नई भूमिकाएं ले ली हैं। जो क्रिया संज्ञा में 'ना' प्रत्यय जोड़कर बनती है वहीं पर इसका प्रयोग देखा जाता है।

उदाहरण के रूप में,

गाली से गरियाना ('खुला' कहानी से, पृ-53)

लात से लतियाना ('जेल' कहानी से, पृ-115)

गरम से गरमाना ('मिट्टी भोजन' कहानी से, पृ-102)

ठण्ड से ठण्डाना ('शीत लहर' कहानी से, पृ-137)

बात से बताना ('तलाश' कहानी से, पृ-20)

लज्जा से लजाना ('बिट्टन मर गई' कहानी से, पृ-60)

खेल से खेलना ('सांग' कहानी से, पृ-31)

हँस से हँसना ('जरूरत' कहानी से, पृ-97)

3.3.4 क्रिया का संज्ञारूप प्रयोग

क्रिया को संज्ञा में बदलने के लिए, पहले वाक्य में क्रिया या क्रिया शब्द का पता लगाकर इसे संज्ञा बनाने के लिए क्रिया में निर्धारक शब्द जोड़ें। और फिर वाक्य को फिर से लिखकर या पुनर्व्यवस्थित करने से यह समझ आ जाता है।

दूसरे शब्दों में, क्रिया का अर्थ देने वाली वह संज्ञा जो क्रिया के मूल रूप में होती है अर्थात क्रिया का अर्थ देने वाला शब्द क्रिया के रूप में होते हुए भी संज्ञा का अर्थ देता है। अर्थात जब क्रिया संज्ञा की तरह व्यवहार में आए तब उसे क्रिया का संज्ञारूप प्रयोग या क्रियार्थक संज्ञा कहते हैं।

उदाहरण के रूप में,

'चलना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है।' ('नो बार' कहानी से, पृ-37)

'पढ़ाई करने से व्यक्ति में अच्छे चरित्र का निर्माण होता है।' ('यह अंत नहीं' कहानी से, पृ-22)

'चलने से ही दूरी तय होगी।' ('कूड़ाघर' कहानी से, पृ-52)

'बोलने से ज्ञान का संचार होता है।' ('घुसपैठिये' कहानी से, पृ-15)

'घूमना उसे लफंगा बना देगा।' ('हत्यारे' कहानी से, पृ-90)

3.4 विशिष्ट विशेषण

विशिष्ट विशेषण वे हैं ऐसी गुणवत्ता को इंगित करें जो दूसरों से संदर्भित संज्ञा को अलग करता है। उदाहरण वे विशेषण हैं जो रंग या आकार को इंगित करते हैं। इसे ही विशिष्ट या प्रतिबंधित विशेषण कहते हैं।

उदाहरण के रूप में,

<u>कहानियों में प्रयुक्त हुए विशिष्ट विशेषण</u>

काला ('शवयात्रा' कहानी से, पृ-40)	फीका ('जंगल की रानी' कहानी से, पृ-97)	सुनहरा ('जंगल की रानी' कहानी से, पृ-97)
गोरा ('मैं ब्राहमण नहीं हूँ !' कहानी से, पृ-59)	चमकीला ('स्वाति बूंद' कहानी से, पृ-85)	हरा ('स्वाति बूंद' कहानी से, पृ-85)
बड़ा ('जेल' कहानी से, पृ-114)	पतला ('जेल' कहानी से, पृ-116)	सांवला ('बिट्टन मर गई' कहानी से, पृ-60)
छोटा ('जेल' कहानी से, पृ-114)	मोटा ('जेल' कहानी से, पृ-116)	सपाट ('बिट्टन मर गई' कहानी से, पृ-62)

टेढ़ा-मेढ़ा (‘लाठी’ कहानी से, पृ-100)	चपटा (‘जेल’ कहानी से, पृ-115)	बैंगनी (‘स्वाति बूंद’ कहानी से, पृ-86)
कुरूप (‘मैं ब्राहमण नहीं हूँ !’ कहानी से, पृ-63)	चौड़ा (‘खुला’ कहानी से, पृ-53)	नीला (‘स्वाति बूंद’ कहानी से, पृ-86)
सुडौल (‘षड्यंत्र’ कहानी से, पृ-62)	लम्बा (‘खुला’ कहानी से, पृ-53)	गेहूंआ (‘शवयात्रा’ कहानी से, पृ-40)
गोल (‘षड्यंत्र’ कहानी से, पृ-61)	चकोर (‘षड्यंत्र’ कहानी से, पृ-61)	अण्डाकार (‘प्रस्थान’ कहानी से, पृ-39)
समान (‘जहर’ कहानी से, पृ-107)	नुकीला (‘जहर’ कहानी से, पृ-108)	सुंदर (‘जहर’ कहानी से, पृ-107)
सीधा (‘खुला’ कहानी से, पृ-54)	तिरछा (‘खुला’ कहानी से, पृ-54)	काजल (‘जंगल की रानी’ कहानी से, पृ-99)

3.5 विशेषण पदबंध

जिस पदबंध का कार्य विशेषण का होता है उसे विशेषण पदबंध कहते हैं। जैस- सुंदर रूप-रंगवाली स्त्रियां सबको अच्छी लगती हैं। इस वाक्य में सुंदर रूप-रंग वाली विशेषण पदबंध है। अन्य शब्दों में, जो पदबंध संज्ञा या सर्वनाम के विशेषण के रूप में प्रयुक्त होते हैं उन्हें विशेषण पदबंध कहा जाता है। विशेषण पदबंध में एक पदबंध शीर्ष पद पर स्थित होता है तथा शेष पद प्रविशेषण बनकर प्रयुक्त होते हैं। जैसे – कपिल बहुत अच्छा खिलाड़ी है। यहाँ 'बहुत अच्छा' विशेषण पदबंध है क्योंकि यह खिलाड़ी की विशेषता प्रकट करता है। 'अच्छा' शीर्ष पद है तथा 'बहुत' प्रविशेषण 'अच्छा' की विशेषता प्रकट कर रहा है।

वह पद-समूह या वाक्य में जो विशेषण की तरह काम करे या किसी संज्ञा अथवा सर्वनाम की विशेषता बताने के लिए प्रयुक्त हो, 'विशेषण पदबंध' कहलाता है।

उदाहरण के रूप में,

"तेज चलने वाली गाड़ियाँ प्रायः देर से पहुँचती हैं।" ('मोहरे' कहानी से, पृ-47)

"आप मेरे लिए एक सचित्र-सुन्दर और सामाजिक किताब लेते आइएगा।" ('प्रस्थान' कहानी से, पृ-39)

"गुलाब के फूल-जैसा सुडौल शरीर किसे मुग्ध नहीं करता ?" ('जेल' कहानी से, पृ-115)

"दो गिलास भर पानी आंदोलन के लिए काफी है।" ('मूवमेंट' कहानी से, पृ-80)

"न जाने कितने क्रांतिकारी लोग इस मिट्टी में समा गए।" ('कूड़ाघर' कहानी से, पृ-53)

"जोर-जोर से चिल्लाने वाले तुम अब चुप क्यों हो ?" ('खुला' कहानी से, पृ-60)

"तुम उसे काम चोर कहते हों।" ('मुम्बई कांड' कहानी से, पृ-32)

"सस्ता मिलने वाला ज्ञान नहीं होता।" ('प्रमोशन' कहानी से, पृ-49)

"बिना मेहनत के आरक्षण से आए हो।" ('घुसपैठिये' कहानी से, पृ-19)

"उस घर के कोने में बैठा हुआ आदमी मादिगा जाति का है।" ('तीन झूठ' कहानी से, पृ-70)

इनके कुछ मुख्य भेद होते हैं—

3.5.1 तुलनात्मक/ सादृश्यात्मक — इसके अंतर्गत तुलना करते हुए वाक्य को लिखा जाता है और उन्हें उसी हिसाब से समझा भी जाता है।

उदाहरण के रूप में,

- हाथी से अत्यधिक बलवान शेर होता है। ('तीन झूठ' कहानी से, पृ-70)
- सोने की कीमत चांदी से ज्यादा होती है। ('प्रमोशन' कहानी से, पृ-46)
- मैं अपनी बहन से बहुत होशियार हूँ। ('प्रस्थान' कहानी से, पृ-39)

3.5.2 प्रविशेषण — इसके अंतर्गत कुछ ऐसी शब्दों का उपयोग किया जाता है, जो सामान्य रूप से बोलचाल की भाषा में इस्तेमाल किए जाते हैं|

उदाहरण के रूप में,

- बहुत सुंदर ('जरूरत' कहानी से, पृ-98)
- थोड़ा थोड़ा नमकीन ('जेल' कहानी से, पृ-115)
- कुछ कुछ खट्टा, कुछ कुछ मीठा ('रिहाई' कहानी से, पृ-76)

- कुछ एक लाख रुपए ('शीत लहर' कहानी से, पृ-143)

3.6 सादृश्यमूलक विशेषण

सादृश्यता का अर्थ है कि दो या दो से अधिक वस्तुओं में समानता है। वो विशेषण जिसके प्रयोग से पहला और दूसरा विशेषण मिलकर समानता के आधार पर निष्कर्ष निकालता है। जैसे - पृथ्वी और मंगल ग्रह के कुछ बातो में समानता के आधार पर अनुमान लगाते है कि शायद मंगल पर जीवन होगा। इस प्रकार सादृश्यमूलक विशेषण एक सम्भाव्य अनुमान है जिसमे दो विशेषणों की समानता के आधार पर एक संभावित निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

कुछ महत्वपूर्ण बिंदुएँ –

- सबसे पहले उन लक्षणों या विशेषणों को संदर्भित करना चाहिए जो दो या दो से अधिक चीजें साझा करते हैं।
- दूसरा तुलना की जा रही वस्तुओं में एक नई विशेषता की पहचान करनी चाहिए।
- तीसरा यह निष्कर्ष निकलता है कि शायद तुलना की जा रही अन्य वस्तु में भी नई विशेषता है।
- इस पराकार यह निर्भर करता है कि जो चीजें कुछ मायनों में समान हैं उनके अन्य तरीकों से भी समान होने की सम्भावना है।

उदाहरण के रूप में,

"बिना किसी उड़ान वाला पायलट, रंगलैप के बगैर कलाकार की तरह होता है।" ('षड्यंत्र' कहानी से, पृ-63)

"बिना सिर पैर की बातें मायने नहीं रखती।" ('शीत लहर' कहानी से, पृ-138)

निष्कर्ष

दलित कहानियों का संरचनापरक विश्लेषण करते हुए संज्ञा, विशेषण , क्रिया के प्रयोगों में विचलन, विशिष्ट विशेषण, विशेषण पदबंध और सादृश्यमूलक विशेषण को स्पष्ट किया है। संज्ञाएँ हमारी शब्दावली में सबसे बुनियादी और आवश्यक शब्दों में से हैं, और उनका उपयोग लगभग हर वाक्य में किया जाता है जो हम लिखते या बोलते हैं। संज्ञा व्याकरण का एक मूलभूत हिस्सा है, जिसका उपयोग लोगों, स्थानों, चीजों और विचारों के नाम के लिए किया जाता है। संज्ञाएँ संरचना की एक आवश्यक परत प्रदान करती हैं जो हमें अपनी अवधारणाओं को नाम देकर अधिक प्रभावी ढंग से संवाद करने की अनुमति देती हैं। विशेषण व्याकरण का एक अभिन्न अंग है। संज्ञा और सर्वनाम, के बाद विशेषण का अध्ययन व्याकरण में किया जाता है क्योंकि संज्ञा के अंतर्गत नाम की प्रधानता होती है। नाम के अतिरिक्त जिन शब्दों का प्रयोग किया जाता है उन्हें सर्वनाम के अंतर्गत रखा जाता है। तथा इन दोनों की विशेषता को बताने वाले शब्दों को हम विशेषण के अंतर्गत अध्ययन करते हैं। विशिष्ट विशेषण और सादृश्यमूलक विशेषण के जरिए भी दलित कहानियों का विश्लेषण किया गया है और साथ ही क्रिया को समझकर उसके विचलन की बात भी हुई है। दलित कहानी की संरचनापरक विश्लेषण को समझकर आगे और विश्लेषण के तौर पर शब्दपरक विश्लेषण किया

गया है जिसमें शब्द-चयन, तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी, आंचलिक, अनूदित, पारिभाषिक सभी वर्गों के अंतर्गत दलित कहानियों की परिपाटी को समझना है।

चतुर्थ अध्याय

दलित कहानियों का शब्दपरक विश्लेषण

समय के साथ-साथ भाषा में नए शब्द जुड़ते रहते हैं और पुराने शब्द अप्रचलित हो जाते हैं या रूप बदल लेते हैं। भाषा में समय के साथ परिवर्तन अवश्य होता है, परंतु यह परिवर्तन बहुत ही धीरे-धीरे होता है। साहित्य के कार्यों में, लेखक की पसंद ही पसंद पाठक को एक निश्चित मनोदशा, स्वर और वातावरण को चित्रित करने में मदद करती है। किसी साहित्यिक कार्य की विषय-वस्तु पर पाठक के दृष्टिकोण को कार्य में प्रयुक्त वर्णनात्मक शब्दावली के चुनाव द्वारा महत्वपूर्ण रूप को बदला जा सकता है। शब्दावली का यह विकल्प लेखक द्वारा बनाए गए तैयार उत्पाद के बारे में उसकी सामान्य भावनाओं के बारे में भी बहुत कुछ बता सकता है। कुछ प्रकार के गद्य औपचारिक और अनौपचारिक भाषा के मिश्रण का उपयोग कर सकते हैं, हालांकि यह किस हद तक घटित होता है, भिन्न हो सकता है। कहानी लिखते समय, एक विशेष शैली के उच्चारण को नियोजित करना आम बात है, जो ऐसे शब्द पैटर्न के उत्पादन की अनुमति देता है जो गद्य लेखन या बोली जाने वाली भाषा में नहीं पाए जाते हैं। साहित्य के कार्यों में किए गए शब्दावली विकल्प या तो उनके द्वारा उपयोग किए जाने वाले वर्णनात्मक शब्दों के संबंध में सामान्य या विशिष्ट हो सकते हैं। कुछ लेखक ऐसी शब्दावली का उपयोग करना पसंद करते हैं जो सामान्य हों, जबकि अन्य लेखक विभिन्न प्रकार के शब्दों का उपयोग करना पसंद करते हैं जो वर्णनात्मक हों।

4.1 शब्द – चयन

साहित्यिक कार्यों में उच्चारण को समझने की क्षमता को अक्सर लेखकों और पाठकों के बीच संचार प्रक्रिया के एक आवश्यक घटक के रूप में देखा जाता है। यह संभव है कि कई लगभग समान शब्दों का सामान्य रूप से समान अर्थ हो, लेकिन एक ही विचार के बारे में नाटकीय रूप से अलग-अलग निहितार्थ हों। एक कथा या कहानी के भीतर शब्दों का चयन बहुत जल्दी हास्य, गम्भीरता, या किसी अन्य भावना को व्यक्त कर सकता है जो बीच में कहीं गिरती है। सामान्य तौर पर, अधिक अनुभवी लेखक अपने काम की शुरुआती पंक्तियों या पैराग्राफों में शब्द-चयन के महत्व के बारे में जानते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि इन आरंभिक अंशों में लेखक द्वारा भाषा के उपयोग पर पाठक की प्रतिक्रिया कभी-कभी यह निर्धारित कर सकती है कि पाठक लेखक के काम को पढ़ना जारी रखता है या नहीं या किसी और चीज़ पर जाता है। लिखित कार्यों में, मूड और टोन को शब्द-चयन के माध्यम से संप्रेषित किया जा सकता है। साहित्यिक कृति का एक टुकड़ा लिखते समय, विभिन्न प्रकार की शब्दावली को संयोजित करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है। विशिष्ट प्रकार के पात्रों की विशेषता वाले कुछ आख्यानों में अनौपचारिक और औपचारिक भाषा का संयोजन सफल हो सकता है, फिर भी, अन्य परिस्थितियों में, यह लेखन की समग्र गुणवत्ता के लिए हानिकारक हो सकता है। कुछ लेखक भाषा की एक ही शैली का उपयोग करके अपने विचारों को संप्रेषित करने का विकल्प चुनते हैं क्योंकि अनुसंधान ने दिखाया है कि ऐसा करने का यह सबसे प्रभावी तरीका है। दूसरे लोग विविध प्रकार के विषयों की खोज करना चाहते हैं, जिसके बदले में उन्हें कई प्रकार की उच्चारण शैलियों को अपनाने की आवश्यकता होती है। एक

और समस्या जो कभी-कभी लेखकों द्वारा की जाती है वह है स्थानीय भाषा की शब्दावली का अति प्रयोग। यह आमतौर पर मामला है क्योंकि केवल एक विशिष्ट पाठक ही इन शर्तों से संबंधित हो सकता है। कुछ साहित्यिक आलोचक विशेषणों के अत्यधिक उपयोग को एक शब्द-विन्यास के मुद्दे के रूप में मानते हैं। यह परिप्रेक्ष्य कुछ साहित्यिक आलोचकों द्वारा आयोजित किया जाता है। तथ्य यह है कि शब्द-चयन की इतनी सारी अलग-अलग किस्में हैं। शब्द-चयन की अनुकूलन क्षमता की और सराहना करने के लिए, विभिन्न श्रेणियों को निम्नलिखित उदाहरणों द्वारा देख सकते हैं -

1. औपचारिक भाषा में ऐसे शब्दों का प्रयोग होता है जिसे अधिकतर सरकारी कामकाज में देखा जाता है।

उदाहरण के लिए ('जंगल की रानी' कहानी से) -:

"'डिप्टी साहब दौरे पर गए थे स्कूल का मुआयना करने। कमली को देखकार काफी प्रभावित हुए थे। बहुत देर तक कमली से पूछताछ करते रहे थे। उनके कहने पर ही कमली को 'ग्रामीण महिला प्रशिक्षण शिविर' में भेजा था,' हेडमास्टर ने थके-थके स्वर में बताया था।"[64]

यहाँ पर हेडमास्टर के डिप्टी साहब के बारे में बताने की औपचारिकता को साफ तौर पर देखा जा सकता है।

2. इसके विपरीत अनौपचारिक भाषा है, जिसका अर्थ है कि दोनों परस्पर विनिमय नहीं कर सकते हैं। यह बोलचाल की भाषा के समान है जिसमें यह कम औपचारिक और अधिक संवादी भाषा का उपयोग करता है। प्रमुख संस्कृति को बनाने वाले तत्वों के बारे में लेखक का दृष्टिकोण शायद इस भेदभाव के निर्माण का कारण बना है।

[64] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 97

उदाहरण के रूप में ('प्रमोशन' कहानी से) -:

"पांडे ने उसे बधाई देते हुए कहा था, 'सुरेश, हमने कहा था न कि एक दिन तुम्हें लेबर बनवा देंगे। अब कुछ पार्टी-वार्टी हो जाए।' कहते हुए उसने अपनी मूंछों पर हाथ फेरा।"[65]

3. पांडित्यपूर्ण कहानी तब होता है जब लेखक अत्यधिक अस्पष्टता के परिदृश्यों को चित्रित करने के लिए असाधारण रूप से जटिल शब्दावली का उपयोग करते हैं।

उदाहरण के रूप में ('घुसपैठिये' कहानी से) -:

"प्रणव मिश्रा का झन्नाटेदार थप्पड़ सोनकर के गाल पर पड़ा...(गाली)...चमार हो या सोनकर...ब्राह्मण तो नहीं हो...हो तो सिर्फ कोटेवाले...बस इतना ही काफी है, प्रणव मिश्रा ने सोनकर को लात-घूंसों से अधमरा कर दिया।"[66]

इस उदाहरण में बोलने का यह आडंबरपूर्ण तरीका, जो अनावश्यक रूप से परिष्कृत शब्दावली का उपयोग करता है, को एक संकेत के रूप में लिया जा सकता है। अहंकार, वर्ग तनाव, या अतिशिक्षा।

3. ऐसी भाषा में किसी समूह की क्षेत्रीय बोली को नियोजित करके व्यक्तियों के समूह को सही ढंग से चित्रित करने का प्रयास किया जाता है। इस तरह के शब्द चयन का इस्तेमाल कभी-कभी दूसरे लोगों के खिलाफ मजाक के तौर पर भी किया जाता है।

उदाहरण के रूप में ('यह अंत नहीं' कहानी से) -:

"मंगलू ने गहरी सोच से बाहर आते हुए कहा, 'बिरमा की माँ...इब एक मिलट के लियो बी उसे अपणी आँखों से दूर ना करियो...टेम बुरा आ गिया है...किसी तरियो इसके हाथ पीले हो

---

[65] वही; पृष्ठ- 45

[66] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 16

जा तो कुछ चैन मिलेगा।'...उसकी आवाज किसी अंधेरी गुफा से छन-छनकर आ रही थी।"[67]

यहाँ पर क्षेत्रीय भाषा को देखा जा सकता है कि अपनी भाषा में मंगलू बिरमा की माँ से बात कर रहा है तो उस क्षेत्र को दर्शाने के लिये वैसे ही शब्दों का चयन किया गया है।

4. सांस्कृतिक शब्दावली का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा में देखने को मिलता है।

उदाहरण के रूप में ('सांग' कहानी से, पृष्ठ-30) -:

"नगाड़े पर चोट तेज पड़ने लगी। ढुलकिया ने भी झूमकर हाथ चलाने शुरू किये। दो कलाकारों से रागनी गानी शुरू की-

'हो गया गात सूख कै माड़ा

पिया दे दै मनै कुल्हाड़ा

ओए, मैं भी चलूंगी तेरे साथ में।

ओ गोरी, सजै ना कुल्हाड़ा तेरे हाथ में।।'"[68]

यहाँ पर गीत के अलावा 'नगाड़ा', 'ढोलक' जैसे शब्द संस्कृति को दर्शा रहे हैं।

5. बोलचाल की भाषा का प्रयुक्त न करने पर तो पाठक वर्ग को समस्या होने लगती है इसलिए बोलचाल की भाषा का होना जरूरी है।

जैसे- धमा-चौकड़ी, बोटी-बोटी, गड्डमड्ड, धड़ाधड़, किरमिच आदि।

6. अपशब्द भी प्रयुक्त हुए हैं जो कि इस प्रकार है-

---

[67] वही; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 23

[68] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ-30

(‘तीन झूठ’ कहानी से, पृष्ठ-71) -:

“क्या रे ससुरा, क्या हुआ ?”[69]

इनके अलावा भी जो शब्द चयन किए गये वे हैं- ससुरे, नानसेन्स, बे, चूहड़ी, नंगे, कुतिया आदि।

7. उर्दू के शब्दों में कानून, कमीज़, खून, खौफ, गजब आदि की ध्वनियाँ भी बरकरार रखी गई हैं।

शब्द-चयन की दृष्टि से संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, अव्यय आदि सभी प्रकार के शब्द आये हैं। पड़ना, उठना, पाना आदि क्रियाओं का सहायक क्रिया के रूप में बताया गया है।

4.2 तत्सम शब्द

तत्सम शब्द संस्कृत भाषा के दो शब्दों, तत् + सम् से मिलकर बना है। तत् का अर्थ है – उसके, तथा सम् का अर्थ है – समान अर्थात – ज्यों का त्यों। जिन शब्दों को संस्कृत से बिना किसी परिवर्तन के ले लिया जाता है, उन्हें तत्सम शब्द कहते हैं। इनमें ध्वनि परिवर्तन नहीं होता है। हिन्दी, बांग्ला, कोंकणी, मराठी, गुजराती, पंजाबी, तेलुगू, कन्नड़, मलयालम, सिंहल आदि में बहुत से शब्द संस्कृत से सीधे ले लिए गये हैं, क्योंकि इनमें से कई भाषाएँ संस्कृत से जन्मी हैं। तत्सम शब्दों के अंत में ‘क्ष’, ‘श्र’, ‘व’, ‘ष’, ‘ऋ’ वर्ण आता है। प्रस्तुत कहानी संग्रहों में भी लेखक ने तत्सम शब्दों का प्रयोग किया अधिक मात्रा में किया है। इसका

[69] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ-71

कारण यह भी हो सकता है कि वह जिस परिवेश में रहते हैं, वहाँ के शब्दों का समावेश होना स्वाभाविक है।

उदाहरण के रूप में ('तलाश' कहानी से) -:

"किराए का मकान तलाश करना रामवीर सिंह के लिए छोटी समस्या नहीं थी। एक सप्ताह से वह एक गेस्ट हाऊस में रह रहे थे।"[70]

('सांग' कहानी से) -:

"संध्या की सुरमई चादर चारों ओर फैलने लगी थी। दिन-भर की दौड़ धूप के बाद अपने नीड़ को लौटते पक्षियों के कलरव और खेत जोतकर घर लौटते बैलों के गले में बजती घंटियों की आवाज़ से वातावरण में मधुर संगीत-सा घुल रहा था।"[71]

('नो बार' कहानी से) -:

"'एक बार नहीं दो बार, तीन बार, चार बार आप मिलें लेकिन जो भी निर्णय लें पूरी संतुष्टि के बाद ही लें। मैं समझता हूँ आप भी मेरे विचारों से सहमत होंगे' उन्होंने प्रश्नसूचक दृष्टि से राजेश की ओर देखा।"[72]

('मोहरे' कहानी से) -:

"उसके अंदर समाज के प्रति जिम्मेदारी का ऐसा भाव उत्पन्न हुआ कि यदि उसका कोई पीरियड खाली होता और किसी दूसरी कक्षा के बच्चे खाली बैठे घूम रहे होते तो वह स्वयं उस कक्षा में जाकर बच्चों को पढ़ाने लग जाता।"[73]

---

[70] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 19

[71] वही; पृष्ठ- 29

[72] वही; पृष्ठ- 38

[73] वही; पृष्ठ- 52

('बिट्टन मर गई' कहानी से) -:

"जाना अच्छा नहीं लग रहा इसका मतलब यह तो नहीं कि मैं जाना नहीं चाहता। यदि ऐसा होता तो मैं ट्रांसफर ही क्यों करवाता। वैसा भी विवाह जनम भर बंधन होता है। उसने मन ही मन कहा। लेकिन बिट्टन से वह इतना ही कह पाया, 'यह सम्भव नहीं है। ट्रांसफर जो हुआ है।'"[74]

('मूवमेंट' कहानी से) -:

"लेकिन अस्वस्थ व्यक्ति इतना चपल नहीं होता, वह शिथिल रहता है, जबकि सुनीता तो... । तब निश्चित रूप से वह गुस्से में है।"[75]

('शवयात्रा' कहानी से) -:

"सूरतराम ने पहले तो सूरजा को ऊपर से नीचे तक देखा। तन पर ढंग का कपड़ा नहीं और चला है पक्का मकान बनवाने। सूरतराम जल्दी में था। कोई बात कहनी हो तो स्वागत पटल पर जाना पड़ता था। उसे कहीं जाना था। उसने हंसकर सुरजा को टाल दिया, 'आज तो टेम ना है, फिर बात करेंगे'।"[76]

('तीन झूठ' कहानी से) -:

"अप्पलरानी साफ मन की युवती थी। वह खुलकर हँसती थी। वह किसी के सामने न आती थी।"[77]

इसी प्रकार चयनित कहानियों में कई तत्सम शब्दों का प्रयोग हुआ है जिसे हम देखते हैं -:

---

[74] वही; पृष्ठ- 62

[75] वही; पृष्ठ- 79

[76] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 38

[77] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 71

चयनित कहानियों में प्रयुक्त तत्सम शब्द

1.	पक्षी	2.	वन	3.	आश्चर्य
4.	अमूल्य	5.	आश्रय	6.	पूर्व
7.	उत्साह	8.	ग्राहक	9.	प्रिय
10.	कार्य	11.	गायक	12.	पक्षी
13.	कर्त्तव्य	14.	ग्रामीण	15.	भक्त
16.	किरण	17.	विवाह	18.	मनुष्य
19.	प्रकट	20.	धर्म	21.	मृत्यु
22.	मित्र	23.	स्तन	24.	अतिथि
25.	मूल्य	26.	अन्न	27.	अंश
28.	युक्ति	29.	युवा	30.	शीर्ष
31.	क्षति	32.	आकाश	33.	राजा
34.	अक्षर	35.	आँचल	36.	आदेश

37.	एवं	38.	परीक्षा	39.	पत्र
40.	कर्त्तव्य	41.	प्रसारण	42.	नियम
43.	गंभीर	44.	व्यतीत	45.	ध्वनि
46.	चरण	47.	वेदना	48.	धैर्य
49.	दण्ड	50.	मित्र	51.	स्थान
52.	शत	53.	शिक्षक	54.	मूत्रालय
55.	उल्लास	56.	आशा	57.	धूप
58.	क्षेत्र	59.	अर्पण	60.	नदी
61.	क्षमा	62.	शिक्षा	63.	उत्साह

64.	कृपा	65.	किरण	66.	प्रकाश

4.3 तद्भव शब्द

मूल भाषा संस्कृत के वे शब्द जिनका हिंदी में रूप परिवर्तन हो गया है उन्हें तद्भव शब्द कहते हैं। तद्भव शब्द 'तत्' एवं 'भव' के योग से बना हुआ शब्द है, जहाँ तत् का अर्थ उससे (संस्कृत) तथा भव का अर्थ विकसित होता है। अतः तद्भव शब्द का शाब्दिक अर्थ उससे (संस्कृत) विकसित हुआ। हिंदी के सभी क्रिया शब्द तद्भव शब्द होते हैं। इसमें उच्चारण सरल हो जाता है। तद्भव का शाब्दिक अर्थ है – "उससे बने"। समय और परिस्थिति की वजह से तत्सम शब्दों में जो परिवर्तन हुए हैं उन्हें तद्भव शब्द कहते हैं। संस्कृत के जो शब्द प्राकृत, अपभ्रंश, पुरानी हिन्दी आदि से गुजरने के कारण आज परिवर्तित रूप में मिलते हैं, वे तद्भव शब्द कहलाते हैं।

उदाहरण के रूप में ('सांग' कहानी से) -:

"उन्हीं दिनों मुखिया के एक खेत में पानी लगना था। पानी बलाने (लगाने) के लिए मुखिया ने भुल्लन को कहा था लेकिन पानी लगने में तो आदमी की टांग तराजू रहती हैं।"[78]

X X X

[78] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 32

"भय से उसके कपड़े गीले हो गए और शरीर थर-थर काँपने लगा। वह समझ नहीं पा रहा था कि मुखिया को उस पर इतना गुस्सा क्यों है।"[79]

('नो बार' कहानी से) -:

"हमारी बड़ी बेटी की शादी अग्रवाल लड़के के साथ हुई है और हमारे घर में जो बहू आई है वह पंजाबी खत्री है।"[80]

X X X

"बस एक ही कमी है। जल्दी से घर में लिच्छमी आ जावै तै आँख बंद होने सै पहले पोता-पोती का मुँह देख लूं।"[81]

('षड्यंत्र' कहानी से) -:

"वह दिन का समय है। एक छोटा सा गाँव। रास्ते पर एक आदमी चल रहा है। शरीर पर जनेऊ धारण कर, वस्त्र के नाम पर केवल लंगोट ही है।"[82]

('माँ' कहानी से) -:

"रात के समय बिजली के साथ हारबर भी दिखाई देता था। नैवी डे के दिन पर सागर के बीच में से बहुत सुंदर दृश्य दिखाई देते हैं।"[83]

---

[79] वही; पृष्ठ- 33

[80] वही; पृष्ठ- 37

[81] वही; पृष्ठ- 40

[82] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 63

[83] वही; पृष्ठ- 80

(‘रिहाई’ कहानी से) -:

“दिसम्बर का महीना था। रात ग्यारह बजे बड़े गेट पर ट्रकों के रूकने और जोर-जोर से होनेवाली बातचीत सुनकर सुगनी जाग गयी थी। वह अनिच्छा से उठी थी।”[84]

(‘हत्यारे’ कहानी से) -:

“कालू के घर के सामने काफी चहल-पहल थी। आस-पड़ोस के कुछ बच्चे हुड़दंग मचा रहे थे। क्या वे अपनी बिरादरी के नहीं है ?”[85]

इसी प्रकार चयनित कहानियों में कई तद्भव शब्दों का प्रयोग हुआ है जिसे हम यहाँ देख सकते हैं -:

चयनित कहानियों में प्रयुक्त तद्भव शब्द

1.	आँसू	2.	गिनती	3.	कुत्ता
4.	कुआँ	5.	काम	6.	चाँद
7.	छाया	8.	आधा	9.	जीभ
10.	अँधेरा	11.	ऊँचा	12.	काम

[84] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 74

[85] वही; पृष्ठ- 89

13.	किसान	14.	चमार	15.	तुरंत
16.	आज	17.	आग	18.	आगे
19.	अचानक	20.	कान	21.	बिरादरी
22.	दुबला	23.	नाच	24.	फूल
25.	पिता	26.	भूखा	27.	मीठा
28.	ब्याह	29.	आवाज	30.	हाथ
31.	दुख	32.	सच	33.	पहचान
34.	सूअर	35.	भिखारी	36.	पसीना
37.	गर्दन	38.	बरसात	39.	जमीन

40.	भैंस	41.	अकेला	42.	नींद
43.	क्यों	44.	भाई	45.	हँसती
46.	नया	47.	खेत	48.	घर
49	प्यास	50.	खांसी	51.	पैर
52.	त्यौहार	53.	आलस	54.	पर
55.	सीख	56.	पहर	57.	सिर
58.	साला	59.	गोबर	60.	सांस
61.	लोग	62.	सेठ	63.	पत्थर
64.	चबाना	65.	साँवला	66.	सूखा

67.	चमड़ा	68.	मामा	69.	आदेश
70.	गेंहूँ	71.	बूंद	72.	ससुराल

4.4 देशज शब्द

देशज शब्द वे शब्द जो स्थानीय भाषा के शब्द होते है, ये देश की विभिन्न बोलियों से लिए जाते है, अर्थात् तत्सम् शब्द को छोड़ कर, देश की विभिन्न बोलियों से आये शब्द देशज शब्द है। इन्हें आवश्यकता अनुसार प्रयोग किया जाता है और ये बाद में प्रचलन में आकर हमारी भाषा का हिस्सा बन जाते हैं। वे शब्द जिनकी उत्पत्ति के मूल का पता न हो परन्तु वे प्रचलन में हों। ऐसे शब्द देशज शब्द कहलाते हैं। ये शब्द आम तौर पर क्षेत्रीय भाषा में प्रयोग किये जाते हैं। अन्य शब्दों में, वह शब्द जिनकी उत्पत्ति देश की विभिन्न बोलियों से होती है अर्थात जिन शब्दों के मूल का पता न हो, लेकिन वे शब्द प्रचलन में होते है, देशज शब्द कहलाते है। देशज शब्दों को देशी शब्द भी कहा जाता है। देशज शब्द के मुख्य रूप से दो प्रकार होते हैं -:

4.4.1 अनुकरण वाचक देशज शब्द

जब किसी जीव या वस्तु की काल्पनिक या वास्तविक ध्वनि को ध्यान में रखकर शब्दों का निर्माण किया जाता है, तो वैसे शब्द अनुकरण वाचक देशज शब्द कहलाते हैं।

जैस :- गड़गड़ाना, हिनहिनाना, कल-कल, खटखटाना इत्यादि।

('अब्बुराम का बाग' कहानी से) -:

"आइने के टुकड़े की तरह सितारे चमक रहे हैं। पीपल के पेड़ के नीचे मेंढक टर-टर्रा रहे हैं।"[86]

X X X

"लच्छनारी गोड़ु नीम के पेड़ के नीचे पाँव पर पाँव डाले, दाल की मटरी खा रहा था। मक्खियाँ आस-पास भिन-भिना रही थी। जिसको बार-बार हाँथों से उड़ा रहा था।"[87]

('सांग' कहानी से) -:

"अहा-अहा, पुच-पुच करते और कंधों पर हल-जुआ लादे कमेरे, अपनी खोर तक पहुंचने की जल्दी में भागते-दौड़ते बैलों को थामते उनके पीछे घिसटते से जा रहे थे।"[88]

('तीन झूठ' कहानी से) -:

"कुकुहूँ-कूं-कुकुहूँ-कूं मुर्गी ने बांग दी। इस बांग के पहले ही पीटर तीन बार झूठ बोल चुका था। ठीक वैसे ही पीटर कहता है कि वह जीजस को नहीं जानता।"[89]

4.4.2 अनुकरण रहित देशज शब्द

वैसे शब्द जिनके निर्माण की प्रक्रिया का कोई पता नहीं होता है, उन्हें अनुकरण रहित देशज शब्द कहते हैं।

---

86 श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 45

87 वही; पृष्ठ- 47

88 तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 29

89 श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 76

जैसे :- कौड़ी, बाजरा, अँगोछा, लोटा, ठर्रा, ठेस, झण्डा, मुक्का, लकड़ी, घेवर, कपास, लुग्दी, जूता इत्यादि।

(सांग' कहानी से) -:

"सांग के साथ बीच-बीच में रागनियों के रंग ने समा बांध रखा था। लोग मंत्रमुग्ध से बैठे थे।"[90]

X X X

"काम तो रोज ही रहता है, ये सांग-तमाशे के मौके तो रोज नहीं आते। कभी-कभी ही आते हैं ये मौके।"[91]

('तलाश' कहानी से) -:

"उनका लगभग प्रत्येक संडे 'मटन डे' होता था। इसलिए मकान मालिकों की अण्डा-मांस नहीं खाने की शर्त उनको असुविधाजनक लगती थी और वह इस शर्त को स्वीकार नहीं करते थे।"[92]

इसी प्रकार चयनित कहानियों में कई देशज शब्दों का प्रयोग हुआ है जिसे हम यहाँ देख सकते हैं -:

चयनित कहानियों में प्रयुक्त देशज शब्द

1.	खिड़की	2.	पानी	3.	बक-बक

[90] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 30

[91] वही; पृष्ठ- 30

[92] वही; पृष्ठ- 20

4.	लात	5.	कपार	6.	गाड़ी
7.	माथा	8.	कांय–कांय	9.	थप्पड़
10.	गड़बड़	11.	धक्का	12.	मुक्का
13.	बड़बड़	14.	टक्कर	15.	घूसा
16.	सर-सर	17.	जूता	18.	झुग्गी
19.	धड़ाम	20.	उटपटांग	21.	खुसर-फुसर
22.	खर्राटे	23.	चहकना	24.	भिड़ना

4.5 विदेशी शब्द

ऐसे विदेशी शब्द जो विदेश से आए हैं लेकिन हिंदी भाषा में प्रयोग किए जाते हैं, वह विदेशज शब्द कहलाते हैं। इन्हें विदेशी शब्द भी कहते हैं। भारत में विदेशी मूल की भाषाओं

जैसे- अरबी, तुर्की, फारसी, पुर्तगाली, अंग्रेजी के शब्दों का भी खूब प्रयोग किया जाता है। रोजमर्रा की जिंदगी में ये इतना घुल मिल गए हैं कि याद रख पाना मुश्किल है कि कौनसा शब्द किस भाषा का है।

उदाहरण के लिए ('सांग' कहानी से) -:

''चम्पा दिन-रात उसकी सेवा में लगी रही, उसके जख्मों पर लेप लगाती रही लेकिन भुल्लन को होश नहीं आ सका।''[93]

इस उदाहरण में जख्म, लेकिन शब्द फारसी है जो कि विदेशज शब्द है।

उदाहरण के लिए ('जरूरत' कहानी से) -:

''सुबह को वे लोग जल्दी उठते और खाकी नेकर पहनकर आर.एस.एस. की शाखा में चले जाते।''[94]

यहाँ पर सुबह शब्द अरबी शब्द है जो कि विदेशज शब्द है।

उदाहरण के लिए ('तलाश' कहानी से) -:

''लेकिन जातिगत भेदभाव के आधार पर मैं रामबती से खाना बनवाना बंद नहीं करूंगा। और ऑफिस जाने के बजाए वह नए मकान की तलाश में निकल पडे।''[95]

यहाँ पर तलाश शब्द तुर्की शब्द है जो कि एक विदेशज शब्द है।

---

[93] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 34

[94] वही; पृष्ठ- 99

[95] वही; पृष्ठ- 28

उदाहरण के लिए ('तीन झूठ' कहानी से) -:

"होटल में पार्सल के लिए रखी हुई पुराने नोट बुक्स के सफेद पेपर फाड़कर वह चित्र बनाता था। चित्र, उन लोगों के बनाता था, जो होटल में खाने के लिए आते थे।"[96]

यहाँ पर होटल, पार्सल, नोट, बुक्स ये सारे शब्द अंग्रेजी शब्द हैं जो कि विदेशज शब्द है।

उदाहरण के लिए ('एम.पी.टी.सी. रेणुका' कहानी से) -:

"एस.आई. की अनुपस्थिति में कांस्टेबल से उस केस के बारे में पूछा, कांस्टेबल ने कहा- तुम्हारा एक केस ही नहीं है। यहाँ ढेर सारे केस पड़े हैं। जब साहब आएंगे, तभी आना। सुनकर निराशा हो, बाहर आ गई।"[97]

यहाँ पर एस.आई., कांस्टेबल, केस ये सारे शब्द अंग्रेजी शब्द हैं जो कि विदेशज शब्द हैं।

उदाहरण के लिए ('दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन' कहानी से) -:

"यह खबर उनके ही क्षेत्र से है...हो सकता है वे पसंद न करें, शर्मा ने कगाज हवा में लहराया और आलमारी बंद कर दी।"[98]

यहाँ पर आलमारी एक पुर्तगाली शब्द है जो कि विदेशज शब्द है।

---

[96] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 70

[97] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 110

[98] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 67

उदाहरण के लिए ('षड्यंत्र' कहानी से) -:

"हवा, पानी प्रकाश पर सबका अधिकार है, किसी को कम या ज्यादा का सवाल ही पैदा नहीं होती... नॉनसेंस...। हमारे ब्राह्मण कुल ने युग-युगों से तुम्हें पाँव की जूती ही समझा है।"[99]

यहाँ पर विदेशज शब्द का प्रयोग देख सकते हैं।

इसी प्रकार चयनित कहानियों में कई विदेशी शब्दों का प्रयोग हुआ है जिसे हम यहाँ देख सकते हैं -:

चयनित कहानियों में प्रयुक्त अरबी शब्द	**चयनित कहानियों में प्रयुक्त फारसी शब्द**	**चयनित कहानियों में प्रयुक्त पुर्तगाली शब्द**	**चयनित कहानियों में प्रयुक्त तुर्की शब्द**	**चयनित कहानियों में प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द**
हाल	दुकान	बाल्टी	चम्मच	नोटिस
कानून	तनख्वाह	तम्बाकू	लाश	अफसर
कुर्सी	चश्मा	आया	लफंगा	अस्पताल

[99] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 63

कीमत	बीमार	मेज	कालीन	डिप्टी
गरीब	मजदूर	कमीज	बहादुर	डॉक्टर
तारीख	मजबूर	साया	काबू	नंबर
जुर्माना	दीवार	चाबी	चाकू	कमिश्नर
जिला	दरवाजा	गमला	चकमक	ड्राइवर
शादी	अखबार	कमरा		वांटेड
हिसाब	आसमान	प्याज		सुटेबल
इलाज	खराब	बटन		आई
इज्जत	आराम	पतलून		शार्प

दुनिया	खर्च	अगस्त		कांट
नशा	खून	गोदाम		एजूकेटेड
बहस	जेब	साबुन		फेमिली
हिम्मत	जमीन			नो बार
इस्तीफा	दवा			हनीमून
आज़ाद	तबाह			मिडिल क्लास
मतलब	जगह			टाइम
मदद	शराब			प्रोग्राम
मालूम	जान			पोजीशन

तहसील	अफसोस			क्लीयर
मुकाम	लेकिन			फेक्टर

4.6 आंचलिक शब्द

ऐसे शब्द जो किसी क्षेत्र विशेष में बोले जाते है उन्हें आँचल शब्द के नाम से जाना जाता है। जैसे बिहार में कद्दू को कोहड़ा बोला जाता है, उसी प्रकार गाँव को गाँव गिरान कहा जाता है। आंचलिक शब्द बहुत प्रचलित होते है, और ये अक्सर ऐसे होते है जो सभी जगह न बोल कर एक निश्चित क्षेत्र में बोलें जाते है। और इनकी मिठास भी अलग ही होती है ऐसे शब्द अक्सर बोल चाल में प्रयोग होते है और इनको बोलने का तरीका भी अलग होता है इनकी बोलने की शैली भी अलग और सुन्दर होती है। एक क्षेत्र, अंचल या विभाजन, विशेष रूप से किसी देश या दुनिया का हिस्सा जिसमें निश्चित विशेषताएं होती हैं लेकिन हमेशा निश्चित सीमाएं नहीं होती हैं, वह आंचलिक है। क्षेत्रीय का उपयोग उन चीजों का वर्णन करने के लिए भी किया जाता है जो किसी देश या दुनिया के किसी विशेष क्षेत्र या अंचल से संबंधित होती हैं।

उदाहरण के लिए (‘लाठी’ कहानी से) -:

"'पर चौधरी, मेरे खेत में पानी नहीं लगा तै सारी फसल चौपट हो जाएगी मेरी। जितना रह गया है उसे दूसरे वार में भर लीजो' कहने के साथ हरिसिंह फावड़ा लेकर बंध लगाने के लिए नाली में उतर गया।"[100]

यहाँ पर हम तै (तो), चौपट (खराब), वार (बार), लीजो (लेना) आंचलिक शब्द जो कि जाट बोलते हैं वो हम यहाँ देख सकते हैं।

X X X

"'जा चला जा, अपनी जान की खैर चाहवै है तै, नहीं तै जमीन में गाड़ दूंगा साले कू यहीं पै।' कहते हुए एक बार फिर लाठी का हौदा उसने हरिसिंह की कमर पर मारा और अपने खेत में जाकर पानी बलाने लगा।"[101]

यहाँ पर चाहवै (चाहता), तै (तो), कू (को), पै (पर), बलाने (लगाने) आंचलिक शब्द हैं।

('लाठी' कहानी से) -:

"गाँव की कोई औरत अपने पत का नाम नहीं लेती थी। प्राय: ननद या देवर नाम लेकर उसके भइया या बच्चों का नाम लेकर उनके बाबा, बापू, मामा, नाना, चाचा, ताऊ आदि के नाम से सम्बोधित करती थीं। पति का नाम लेना लोक मर्यादा और सदाचरण के विरूद्ध तथा औरत की बेहयाई माना जाता था। इसलिए अतरो भी हरिसिंह को 'सोनबती के चाचा' कहकर ही सम्बोधित करती थी।"[102]

[100] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 91

[101] वही; पृष्ठ- 92

[102] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 89

यहाँ पर जो परिवेश और वातावरण दिखाया गया है वो पूरी तरह से आंचलिकता को दर्शाता है।

('शीत लहर' कहानी से) -:

''वह सोचने लगा, 'इतने सारे फ्लैट खाली पड़े हैं और इन लोगों के पास इस भयंकर शीत लहर में भी सिर छिपाने के लिए कोई ठिकाना नहीं है। यदि इनको भी सिर छिपाने के लिए कोई ठौर मिल जाए तो...।'''[103]

यहाँ पर 'ठौर' शब्द का मतलब हुआ 'जगह'।

('अब्बुराम का बाग' कहानी से) -:

'''मुझे बचालो', मालकोंडय्या से लच्छनारी गोड्डु ने विनती की कि एलिकोड्डु और बंडोड्डु ने भी उसे भाग जाने की सलाह दी कि रेड्डी के तम्बाकू के व्यारव में छिप जाओ पर वह न माना, वह भागता हुआ खेत में गिर पड़ा।''[104]

यहाँ पर सारे पात्रों के नाम जो कि तेलुगु भाषा से लिए गए हैं वे आंचलिक शब्द में हैं।

('यह अंत नहीं' कहानी से) -:

''दोनों के बीच फिर से गहरा सन्नाटा पसर गया थ। दोनों अपने-अपने भीतर उमड़ते चक्रवात की ध्वनि सुन रहे थे। अंधेरे की सघनता उनके भीतर समा गई थी। मंगलू ने गहरी सोच से

[103] वही; पृष्ठ- 141

[104] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 47

बाहर आते हुए कहा, 'बिरमा की माँ...इब एक मिलट के लियो बी उसे अपणी आंखों से दूर ना करियो...टेम बुरा आ गिया है...किसी तरियो इसके हाथ पीले हो जा तो कुछ चैन मिलेगा ।'...उसकी आवाज किसी अंधेरी गुफा से छन-छनकर आ रही थी ।"[105]

यहाँ पर इब (अब), मिलट (मिनट), लियो (लिए), बी (भी), अपणी (अपनी), करियो (करना), टेम (समय/टाइम), गिया (गया), तरियो (तरह) आंचलिक शब्दों का प्रयोग किया गया है ।

X X X

"उसने दयनीय होकर कहा, 'ना किसन...जबान खोलोगे तो बुरा हो जागा । इबी तो बात घर में है, कल पूरे गाँव-देहात में फैलेगी...बदनामी होगी । बिरमा के माथे पर दाग लग जागा...चुप रहना ही ठीक है...' मंगलू की बात बीच में ही काटकर किसन बोला, 'बापू ! बिरमा का दोष क्या है ?...जो उसे सजा मिलेगी । नहीं बापू...सचींदर को ही सजा मिलेगी ।...' किसन गुस्से में बाहर निकल गया । मंगलू ने रोकने की बहुत कोशिश की, लेकिन वह नहीं रूका ।"[106]

यहाँ पर गाँव-देहात (पूरे गाँव को दर्शाना), जागा (जाएगा) आंचलिक शब्द हैं ।

इस प्रकार इन कहानियों में आंचलिक शब्दों का प्रयोग हुआ है जो एक ही अंचल को दर्शा रहे हैं ।

---

[105] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 23

[106] वही; पृष्ठ- 24

4.7 कोड मिश्रण

मानव भाषाओं के ध्वनि प्रतीकों के माध्यम से संप्रेषण किया जाता है। आदर्श रूप में यही संभावना की जाती है कि किसी व्यक्ति द्वारा एक प्रकार के संप्रेषण के लिए एक ही भाषा (कोड) का प्रयोग किया जाएगा। किंतु सदैव ऐसा नहीं होता। वर्तमान बहुभाषी परिदृश्य में तो ऐसा करना धीरे-धीरे असंभव हो गया है। सामन्यतः लोग कोई बात कहते हुए एक भाषा के वाक्य में दूसरी भाषा के शब्दों का प्रयोग कर ही देते हैं, जैसे- मैं संडे को मार्केट जाऊँगा। इसमें हिंदी वाक्य में अंग्रेजी शब्दों का कोड मिश्रण है।

कोड मिश्रण के संदर्भ में ध्यान देने वाली बात है कि दूसरी भाषा के शब्द के लिए प्रथम (मूल) भाषा में शब्द होने के बावजूद दूसरी भाषा के शब्द का प्रयोग कोड मिश्रण है। यहाँ पर हिंदी वाक्य में तेलुगु शब्दों का कोड मिश्रण देखने को मिलता है।

उदाहरण के रूप में ('प्रस्थान' कहानी से) -:

"अछूत की पाठशाला में 'अ' का 'अम्मा' न होकर, अस्पृश्यता और 'आ' का 'आवु (गाय)' न होकर आकली (भूख) होता है। जिंदगी की पाठशाला में मालच्छी (महालक्ष्मी) है, उसका पति लच्छेरसु है, सास सुब्बुलु और ससुर पोलय्या है। उसके साथ रामुलु और कई लोग हैं।"[107]

यहाँ पर आवु, आकली, मालच्छी जो कि तेलुगु के शब्द हैं उनका अनुवाद करके गाय, भूख, महालक्ष्मी पूर्ण रूप से अनूदित शब्द न होकर कोड मिश्रण रूप है।

उदाहरण के रूप में ('अब्बुराम का बाग' कहानी से) -:

[107] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 37

"ऐसे वातावरण में सत्य हरिश्चंद्र क पद्य गूंज रहा है – राजेकिंकरुडॉ, किंकरुडे रार्जो (राजा ही किंकर है- किंकर ही राजा है) । जिस तरह दीपक में तेल कम होता जा रहा है, ठीक उसी तरह तिरिपिगोडु की जिंदगी की आयु भी कम हो रही है । तोलगी पोनिंडय्या दोरलु पोद्दिंटोन्नि (गांव वालों रास्ता दो मैं अछूत आ रहा हूँ) । मट्टिपाटि गाँव में ब्रह्म्मगारी के नाटक में कक्कडि का गाना ऐसा बज रहा था ।"[108]

यहाँ पर भी राजेकिंकरुडॉ, किंकरुडे रार्जो और तोलगी पोनिंडय्या दोरलु पोद्दिंटोन्नि के कोड मिश्रण रूप को यहाँ बताया गया है जो कि तेलुगु के शब्द हिंदी वाक्य में आए हैं ।

X X X

"नलगोटय्यागोरी गोदाम, शेशय्यागोरी गोदाम और चिनबोंदा (छोटा तालाब) के बीच के रास्ते से उत्सव देखते जा रहे हैं । जैसे ही बच्चों को देखा कुम्हार शेशय्या ने अपने मशीन को रोक दिया ।"[109]

यहाँ पर चिनबोंदा कोड मिश्रण शब्द है जिसका अर्थ छोटा तालाब है जो कि तेलुगु शब्द हिंदी वाक्य में प्रयोग किए गए है ।

X X X

"गाँव में यह एक ही मशीन थी जहाँ हर समय भीड़ लगी रहती थी । मशीन लगाने से पहले वेंकटेशु 'मुसोड्डु निडमनूरु' (मुसि नदि के किनारे गाँव) से यहाँ आया था, अब जहाँ मशीन लगी हुई है । वहाँ पहले सूखा तालाब था ।"[110]

X X X

---

[108] वही; पृष्ठ- 45

[109] वही; पृष्ठ- 48

[110] वही; पृष्ठ- 48

"दादी अंकम्मा ने कहा- 'अरे शेशय्या मैं तुम्हारे बिना कैसे जी सकूंगी ?' बडे बुजुर्गों को भी वह गालियाँ देती रही। साथ ही उसने कहा था- 'मी बतुकुलनि उप्पुपातरेय्या' (तुम लोगों को सज़ा दूंगी)"[111]

यहाँ पर 'मी बतुकुलनि उप्पुपातरेय्या' कोड मिश्रित तेलुगु शब्द है जो कि हिंदी वाक्य में प्रयोग किये गये है।

कोड मिश्रण के विश्लेषण में कहानीकार का अभिमत, intention, लेखक पाठक संबंध, विषय की गंभीरता, समाज-सांस्कृतिक परिवेश आदि सबका ध्यान रखा जाता है।

4.8 समास रूप

समास शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है- छोटा रूप। अतः जब दो या दो से अधिक शब्द (पद) अपने बीच की विभक्तियों का लोप कर जो सार्थक शब्द (छोटा रूप) बनाते हैं, उसे समास, सामासिक शब्द या समस्त पद कहते हैं। जैसे- 'रसोई के लिए घर' शब्दों में से 'के लिए' विभक्ति का लोप करने पर नया शब्द बना 'रसोई घर' जो एक सामासिक शब्द है। किसी समस्त पद या सामासिक शब्द को उसके विभिन्न पदों एवं विभक्ति सहित पृथक् करने की क्रिया को समास का विग्रह कहते हैं। जैसे- 'नील कमल' का विग्रह 'नीला है जो कमल' तथा 'चौराहा' का विग्रह 'चार राहों का समूह'। समास में दो पद (शब्द) होते हैं। पहले पद को पूर्वपद और दूसरे पद को उत्तरपद कहते हैं। जैसे-गंगाजल। इसमें गंगा पूर्वपद और जल उत्तरपद है। सामासिक शब्दों के बीच के सम्बन्ध को स्पष्ट करने को समास-विग्रह

[111] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 50

कहते हैं। विग्रह के बाद सामासिक शब्द गायब हो जाते हैं अर्थात जब समस्त पद के सभी पद अलग-अलग किय जाते हैं, उसे समास-विग्रह कहते हैं।

उदाहरण के रूप में ('प्रस्थान' कहानी से) -:

"इन दोनों पति-पत्नी के झमेलों में कोई भी पड़ना नहीं चाहता था। पति-पत्नी झगड़ते हुआ वापस घर लौटकर खा पीकर सो जाया करते थे। यह वह उनका नित्य क्रम बन गया था।"[112]

यहाँ पर पति-पत्नी सामासिक रूप है और इसका विग्रह है पति और पत्नी।

समास के मुख्यतः छः भेद माने जाते हैं –

1. अव्ययीभाव समास
2. तत्पुरुष समास
3. कर्मधारय समास
4. द्विगु समास
5. द्वंद्व समास
6. बहुब्रीहि समास

4.8.1 अव्ययीभाव समास

जिस समास का पूर्व पद प्रधान हो, और वह अव्यय हो उसे अव्ययीभाव समास कहते हैं। इसमें अव्यय पद का प्रारूप लिंग, वचन, कारक, में नहीं बदलता है, वो हमेशा एक जैसा

[112] वही; पृष्ठ- 42

रहता है। दूसरे शब्दों में – यदि एक शब्द की पुनरावृत्ति हो और दोनों शब्द मिलकर अव्यय की तरह प्रयोग हों, वहाँ पर अव्ययीभाव समास होता है। संस्कृत में उपसर्ग युक्त पद भी अव्ययीभाव समास ही माने जाते हैं। इसमें पहला पद उपसर्ग होता है जैसे अ, आ, अनु, प्रति, हर, भर, नि, निर, यथा, यावत आदि उपसर्ग शब्द का बोध होता है।

जैसे ('जेल' कहानी से) -:

"पड़ोसन वेंकम्मा के द्वारा पता चला कि कल ही रामराजू शहर से गाँव को लौट आया है और वह प्रतिदिन अपने बरामदे के चारपाई पर ही सोता है। मौका पाकर मंगम्मा ने योजना के अनुसार जब उसके माता-पिता सो रहे थे, तब हाथ में कुल्हाड़ी लेकर किसी तरह वह राजा के बंगले में प्रवेश पाने में सफल हो पाई।"[113]

यहाँ पर प्रतिदिन सामासिक रूप है और प्रत्येक दिन, दिन-दिन, हर दिन विग्रह होगा।

और भी उदाहरण कहानी-संग्रह से लिए गये हैं वो इस प्रकार है-

यथावसर = अवसर के अनुसार ('षडयंत्र' कहानी से)

यथेच्छा = इच्छा के अनुसार ('खुला' कहानी से)

प्रतिदिन = प्रत्येक दिन, दिन-दिन, हर दिन ('जेल' कहानी से)

प्रत्यक्ष = अक्षि के आगे ('लाठी' कहानी से)

घर-घर = प्रत्येक घर, हर घर ('स्वाति बूंद' कहानी से)

हाथों-हाथ = एक हाथ से दुसरे हाथ तक, हाथ ही हाथ में ('कूड़ाघर' कहानी से)

रातों-रात = रात ही रात में ('बिट्टन मर गई' कहानी से)

---

[113] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 119

साफ-साफ = साफ के बाद साफ, बिल्कुल साफ ('यह अंत नहीं' कहानी से)

आमरण = मरने तक, मरणपर्यंत ('अब्बुराम का बाग' कहानी से)

आसमुद्र = समुद्रपर्यंत ('मुम्बई कांड' कहानी से)

भरपेट = पेट भरकर ('सांग' कहानी से)

अनुकूल = जैसा कूल है वैसा ('मूवमेंट' कहानी से)

यावज्जीवन = जीवनपर्यन्त ('कामरेड का घर' कहानी से)

निर्विवाद = बिना विवाद के ('नो बार' कहानी से)

बाकायदा = कायदे के अनुसार ('तीन झूठ' कहानी से)

4.8.2 तत्पुरुष समास

जिस समास का उत्तरपद प्रधान हो और पूर्वपद गौण हो उसे तत्पुरुष समास कहते हैं। यह कारक से जुड़ा समास होता है। इसमें ज्ञातव्य-विग्रह में जो कारक प्रकट होता है उसी कारक वाला वो समास होता है। इसे बनाने में दो पदों के बीच कारक चिन्हों का लोप हो जाता है, उसे तत्पुरुष समास कहते हैं। इस समास में साधारणतः प्रथम पद विशेषण और द्वितीय पद विशेष्य होता है। द्वितीय पद, अर्थात बादवाले पद के विशेष्य होने के कारण इस समास में उसकी प्रधानता रहती है।

जैसे ('कामरेड का घर' कहानी से) -:

"प्रत्येक रविवार को किसी-न-किसी सदस्य के घर वे लोग बैठक करते थे। पिछले कई महीनों से यह उनका नियमित क्रियाकलाप था। ये बैठकें नेत्र सुखद के लिए सदस्यों के घरों पर क्रमिक रूप से होती थीं। पहले एक सदस्य के घर, फिर दूसरे के फिर तीसरे के।"[114]

यहाँ पर नेत्र सुखद सामासिक शब्द है और विग्रह को नेत्रों को सुखद रूप में देखा जाएगा। इसमें कर्ता और संबोधन कारक को छोड़कर शेष छः कारक चिन्हों का प्रयोग होता है। जैसे – कर्म कारक, करण कारक, सम्प्रदान कारक, अपादान कारक, सम्बन्ध कारक, अधिकरण कारक इस समास में दूसरा पद प्रधान होता है।

कर्म तत्पुरुष – इसमें दो पदों के बीच में कर्मकारक छिपा हुआ होता है। कर्मकारक का चिन्ह 'को' होता है। 'को' को कर्मकारक की विभक्ति भी कहा जाता है। उसे कर्म तत्पुरुष समास कहते हैं। 'को' के लोप से यह समास बनता है।

जैसे यहाँ पर कहानी-संग्रहों से लिए गए उदाहरण हैं-

कृष्णार्पण = कृष्ण को अर्पण ('यह अंत नहीं' कहानी से)

वन-गमन = वन को गमन ('रिहाई' कहानी से)

जेब कतरा = जेब को कतरने वाला ('शवयात्रा' कहानी से)

प्राप्तोदक = उदक को प्राप्त ('मूवमेंट' कहानी से)

[114] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 115

करण तत्पुरुष – जहाँ पर पहले पद में करण कारक का बोध होता है। इसमें दो पदों के बीच करण कारक छिपा होता है। करण कारक का चिन्ह या विभक्ति 'के द्वारा' और 'से' होता है। उसे करण तत्पुरुष कहते हैं। 'से' और 'के द्वारा' के लोप से यह समास बनता है।

जैसे ('गंवार' कहानी से) -:

"रचना दिल्ली में होने वाले अपने मनचाहे प्रत्येक सामाजिक कार्यक्रम में भाग लेती थी भले ही थोड़ी देर के लिए जाती हो। दूसरे लोग उतने कार्यक्रमों में भाग नहीं लेते थे, इसलिए रचना को दूसरे साथियों सहित प्रभात से भी प्राय: यह शिकायत रहती थी कि वह सामाजिक कार्यक्रमों में हिस्सा नहीं लेता है।"[115]

यहाँ पर मनचाहे का मन से चाहा होगा।

इसके अतिरिक्त और भी उदाहरण इस प्रकार हैं –

हस्त-लिखित = हस्त (हाथ) से लिखित

अम्बेडकरकृत = अम्बेडकर द्वारा लिखित

दयार्द्र = दया से आर्द्र

रत्न जड़ित = रत्नों से जड़ित

सम्प्रदान तत्पुरुष – इसमें दो पदों के बीच सम्प्रदान कारक छिपा होता है। सम्प्रदान कारक का चिन्ह या विभक्ति 'के लिए' होती है। उसे सम्प्रदान तत्पुरुष समास कहते हैं। 'के लिए' का लोप होने से यह समास बनता है।

[115] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 125

जैसे ('एम.पी.टी.सी. रेणुका' कहानी से) -:

''रेणुका ओरुगोंडा गाँव की थी। समाज कल्याण छात्रावास में वह पाँचवीं कक्षा तक पढ़ी थी। माँ-बाप ने शादी करवा दी, पर एक लड़की के जन्म के बाद उसका पति का साँप के काटने से देहांत हो गया। रेणुका अपने पति से भी ज्यादा काम करती थी।''[116]

यहाँ पर छात्रावास सामासिक रूप होगा और विग्रह छात्राओं के लिए आवास।

अन्य उदाहरण हैं-

हवन-सामग्री = हवन के लिए सामग्री ('प्रमोशन' कहानी से)

विद्यालय = विद्या के लिए आलय ('मोहरे' कहानी से)

गुरु-दक्षिणा = गुरु की लिए दक्षिणा ('मोहरे' कहानी से)

प्रयोगशाला = प्रयोग के लिए शाला ('बिट्टन मर गई' कहानी से)

गौशाला = गौ के लिए शाला ('खुला' कहानी से)

देशभक्ति = देश के लिए भक्ति ('जेल' कहानी से)

अपादान तत्पुरुष – इसमें दो पदों के बीच में अपादान कारक छिपा होता है। अपादान कारक का चिन्ह या विभक्ति 'से अलग' होता है। उसे अपादान तत्पुरुष समास कहते हैं। 'से' का लोप होने से यह समास बनता है।

जैसे ('मिट्टी भोजन' कहानी से) -:

[116] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 107

"जब देखो तब झगड़े ही झगड़े घर में, बचपन से देखते आ रही हूँ। मेरी समझ में कुछ नहीं आता था। माँ और बाबूजी कब झगड़ते, कब मिलकर बातें करते, हालात समझने में मैं असमर्थ रही और पथभ्रष्ट हो गई।"[117]

यहाँ पर पथभ्रष्ट सामासिक रूप है और विग्रह पथ से भ्रष्ट होगा।

अन्य उदाहरण हैं –

ऋण-मुक्त = ऋण से मुक्त ('जेल' कहानी से)

पदच्युत = पद से च्युत ('मिट्टी भोजन' कहानी से)

धर्म-विमुख = धर्म से विमुख ('कुंए का मेंढक' कहानी से)

देश-निकाला = देश से निकला ('एम.पी.टी.सी.रेणुका' कहानी से)

धनहीन = धन से हीन ('अब्बुराम काम बाग' कहानी से)

सम्बन्ध तत्पुरुष – इसमें दो पदों के बीच में सम्बन्ध कारक छिपा होता है। सम्बन्ध कारक के चिन्ह या विभक्ति 'का, 'के, 'की' होती हैं। उसे सम्बन्ध तत्पुरुष समास कहते हैं। 'का, 'के, 'की' आदि का लोप होने से यह समास बनता है।

जैसे ('तीन झूठ' कहानी से) -:

"'रानीजी, आज थोड़ी देर अपना मुँह बंद कीजिए' – कहकर उसने पलटकर पेइन्टर से कहा- 'राजा, तुम्हारे पास अच्छी कला है। नियमानुसार तुम्हें मोती का हार देना चाहिए। पर मेरी

[117] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 101

हैसियत नहीं है, फिर भी तुम्हारी कला को प्रशंसित करते हुए ये प्याज के बनाए पेसरट्टु मैं इनाम के तौर पर देता हूँ।"[118]

यहाँ पर नियमानुसार सामासिक रूप होगा और नियम के अनुसार विग्रह होगा।

अन्य उदाहरण हैं –

मंत्रिमण्डल = मंत्रियों का मण्डल ('एम.पी.टी.सी. रेणुका' कहानी से)

मंत्रिपरिषद् = मंत्रियों की परिषद् ('एम.पी.टी.सी. रेणुका' कहानी से)

प्रेमसागर = प्रेम का सागर ('मुम्बई कांड' कहानी से)

राजमाता = राजा की माता ('शवयात्रा' कहानी से)

अमचूर = आम का चूर्ण ('हत्यारे' कहानी से)

देशरक्षा = देश की रक्षा ('जंगल की रानी' कहानी से)

अधिकरण तत्पुरुष – इसमें दो पदों के बीच अधिकरण कारक छिपा होता है। अधिकरण कारक का चिन्ह या विभक्ति 'में, 'पर' होता है। उसे अधिकरण तत्पुरुष समास कहते हैं। 'में' और 'पर' का लोप होने से यह समास बनता है।

जैसे ('स्वाति बूंद' कहानी से) -:

"एक ज़मींदारनी के साथ रहने के लिए, दूसरा एकांतवास के लिए और एक कमरा बरामदे जैसा था, जिसमें चिर परिचित अधिकारी की मेहमान गिरी के लिए।"[119]

यहाँ पर एकांतवास सामासिक रूप होगा और एकांत में वास विग्रह होगा।

---

[118] वही; पृष्ठ- 71

[119] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 86

अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं –

जीवदया = जीवों पर दया (‘रिहाई’ कहानी से)

ध्यानमग्न = ध्यान में मग्न (‘खुला’ कहानी से)

घुड़सवार = घोड़े पर सवार (‘ब्रह्मास्त्र’ कहानी से)

घृतान्न = घी में पक्का अन्न (‘बिट्टन मर गई’ कहानी से)

गृहप्रवेश = गृह में प्रवेश (‘प्रमोशन’ कहानी से)

कलाश्रेष्ठ = कला में श्रेष्ठ (‘जरूरत’ कहानी से)

4.8.3 कर्मधारय समास

जिस समास का उत्तरपद प्रधान होता है, जिसके लिंग, वचन भी सामान होते हैं। जो समास में विशेषण-विशेष्य और उपमेय-उपमान से मिलकर बनते हैं, उसे कर्मधारय समास कहते हैं।

कर्मधारय समास में व्यक्ति, वस्तु आदि की विशेषता का बोध होता है। कर्मधारय समास के विग्रह में ‘है जो, ‘के समान है जो’ तथा ‘रूपी’ शब्दों का प्रयोग होता है।

उदाहरण के लिए ('नो बार' कहानी से) -:

“जहाँ तक दलितों का सवाल है वे स्वयं पिछड़ों के साथ मिलकर सत्ता में आने के लिए जोड़-तोड़ कर रहे हैं। बिहार में लालू और यू. पी. में मुलायम और मायावती जैसे महापुरूष बी. जे. पी. के रास्ते में सबसे बड़े हर्डल हैं।”[120]

यहाँ पर महापुरूष सामासिक रूप है और विग्रह महान है जो पुरूष होगा।

---

[120] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 44

चयनित कहानी-संग्रहों में प्रयुक्त अतिरिक्त उदाहरण इस प्रकार हैं-

नीलकमल = नीला है जो कमल ('रिहाई' कहानी से)

नीलगाय = नीली है जो गाय ('षड्यंत्र' कहानी से)

महर्षि = महान है जो ऋषि ('जहर' कहानी से)

दुष्कर्म = दूषित है जो कर्म ('जेल' कहानी से)

लालमिर्च = लाल है जो मिर्च ('जंगल की रानी' कहानी से)

शुभागमन = शुभ है जो आगमन ('प्रमोशन' कहानी से)

नीलोत्पल = नीला है जो उत्पल ('प्रस्थान' कहानी से)

क्रोधाग्नि = क्रोध रूपी अग्नि ('गिरवी' कहानी से)

महात्मा = महान है जो आत्मा ('यह अंत नहीं' कहानी से)

भलामानस = भला है जो मानस ('तलाश' कहानी से)

परनारी = पराई है जो नारी ('बिट्टन मर गई' कहानी से)

अंधविश्वास = अंधा है जो विश्वास ('जेल' कहानी से)

अंधकूप = अंधा है जो कूप ('सांग' कहानी से)

प्राणप्रिय = प्राणों के समान प्रिय ('जरूरत' कहानी से)

दहीवड़ा = दही में डूबा बड़ा ('कामरेड का घर' कहानी से)

4.8.4 द्विगु समास

द्विगु समास में पूर्वपद संख्यावाचक होता है और कभी-कभी उत्तरपद भी संख्यावाचक होता हुआ देखा जा सकता है। इस समास में प्रयुक्त संख्या किसी समूह को दर्शाती है, किसी अर्थ को नहीं। इससे समूह और समाहार का बोध होता है। उसे द्विगु समास कहते हैं।

जैसे ('तलाश' कहानी से) -:

"जातीय भेदभाव और छुआछूत को वह इस एक सप्ताह के भीतर अच्छी तरह देख चुके थे। हालांकि जातीय घृणा और छुआछूत का व्यव्हार दलितों के साथ होता था और वह भी दलित थे लेकिन उसके साथ ऐसा कोई व्यवहार अभी तक नहीं हुआ था।"[121]

यहाँ पर सप्ताह सामासिक रूप है और इसका विग्रह होगा सप्त अहों (सात दिनों) का समाहार ।

अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं –

दोराहा = दो राहों का समाहार ('जेल' कहानी से)

पक्षद्वय = दो पक्षों का समूह ('जहर' कहानी से)

त्रिरत्न = तीन रत्नों का समूह ('कूड़ाघर' कहानी से)

चौमासा = चार मासों का समाहार ('खुला' कहानी से)

चतुर्वर्ण = चार वर्णों का समाहार ('अब्बुराम का बाग' कहानी से)

दशक = दश का समाहार ('लाठी' कहानी से)

शतक = सौ का समाहार ('कामरेड का घर' कहानी से)

तिरंगा = तीन रंगों का समूह ('मूवमेंट' कहानी से)

---

[121] वही; पृष्ठ- 20

चवन्नी = चार आनों का समाहार ('सांग' कहानी से)

दुराहा = दो राहों का समाहार ('दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन' कहानी से)

पंजाब = पाँच आबों का समाहार ('मैं ब्राह्मण नहीं हूँ !' कहानी से)

शताब्दी = सौ अब्दों (वर्षों) का समाहार ('जेल' कहानी से)

4.8.5 द्वंद्व समास

इस समास में दोनों पद ही प्रधान होते हैं इसमें किसी भी पद का गौण नहीं होता है। ये दोनों पद एक-दूसरे पद के विलोम होते हैं लेकिन ये हमेशा नहीं होता है। इसका विग्रह करने पर और, अथवा, या, एवं का प्रयोग होता है उसे द्वंद्व समास कहते हैं। द्वंद्व समास में योजक चिन्ह (-) और 'या' का बोध होता है।

जैसे ('जेल' कहानी से) -:

"फिर हमेशा की तरह दोबारा से रहो। यह सब सुन माता-पिता अपने घुटने देखते रहे। मंगा के मन में तो तूफान उठ रहा है। उसकी आंखें रामराजू को ढूंढ रही हैं।" [122]

यहाँ पर माता-पिता सामासिक रूप है और विग्रह माता और पिता होगा।

अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं –

दाल-रोटी = दाल और रोटी ('गिरवी' कहानी से)

पाप-पुण्य = पाप या पुण्य/ पाप और पुण्य ('सांग' कहानी से)

अन्न-जल = अन्न और जल ('प्रस्थान' कहानी से)

---

[122] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 118

जलवायु = जल और वायु ('घुसपैठिये' कहानी से)

फल-फूल = फल और फूल ('अब्बुराम का बाग' कहानी से)

भला-बुरा = भला या बुरा ('यह अंत नहीं' कहानी से)

रूपया-पैसा = रूपया और पैसा ('नो बार' कहानी से)

शीतोष्ण = शीत या उष्ण ('मोहरे' कहानी से)

गाय-बैल = गाय और बैल ('तीन झूठ' कहानी से)

हाथ-पाँव = हाथ और पाँव ('खुला' कहानी से)

नर-नारी = नर और नारी ('शवयात्रा' कहानी से)

माँ-बाप = माँ और बाप ('जेल' कहानी से)

चाचा-चाची = चाचा और चाची ('गंवार' कहानी से)

कार्य-कुशल = कार्य और कुशल ('शीत लहर' कहानी से)

भाई-बहिन = भाई और बहन ('जरूरत' कहानी से)

गुण-दोष=गुणऔरदोष

देश-विदेश = देश और विदेश ('दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन' कहानी से)

थोड़ा-बहुत = थोड़ा या बहुत ('माँ' कहानी से)

हरे-भरे = हरे व भरे ('जंगल की रानी' कहानी से)

लाभ-हानि = लाभ और हानि ('षड्यंत्र' कहानी से)

4.8.6 बहुव्रीहि समास

इस समास में कोई भी पद प्रधान नहीं होता। जब दो पद मिलकर तीसरा पद बनाते हैं तब वह तीसरा पद प्रधान होता है। इसका विग्रह करने पर "वाला, है, जो, जिसका, जिसकी, जिसके, वह" आदि आते हैं, वह बहुब्रीहि समास कहलाता है। दूसरे शब्दों में– जिस समास में पूर्वपद तथा उत्तरपद- दोनों में से कोई भी पद प्रधान न होकर कोई अन्य पद ही प्रधान हो, वह बहुव्रीहि समास कहलाता है। जिस समस्त-पद में कोई पद प्रधान नहीं होता, दोनों पद मिल कर किसी तीसरे पद की ओर संकेत करते है, उसमें बहुव्रीहि समास होता है। 'नीलकंठ', नीला है कंठ जिसका अर्थात शिव। यहाँ पर दोनों पदों ने मिल कर एक तीसरे पद 'शिव' का संकेत किया, इसलिए यह बहुव्रीहि समास है। इस समास के सामासिक शब्दों में कोई भी प्रधान नहीं होता, बल्कि पूरा सामासिक शब्द ही किसी अन्य शब्द का विशेषण होता है।

उदाहरण के रूप में ('रिहाई' कहानी से) -:

"<u>निशाचर</u> लाला लगातार बड़बड़ा रहा था जैसे मिट्ठन जान-बूझकर इतने भारी बोरे के नीचे लेट गया था। ठेकेदार ने लाला से कहा, 'इसे अस्पताल ले जाओ। लगता है रीढ़ की हड्डी टूट गयी है।"[123]

यहाँ पर निशाचर सामासिक शब्द है निशा (रात) में विचरण करने वाला (राक्षस) विग्रह रूप होगा।

अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं –

आशुतोष = आशु (शीघ्र) प्रसन्न होता है वह ('हत्यारे' कहानी से)

अंशुमाली = अंशु (किरणें) हैं मालाएँ जिसकी ('स्वाति बूंद' कहानी से)

---

[123] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 78

चारपाई = चार हैं पाए जिसके (‘लाठी’ कहानी से)

सुलोचना = सुंदर लोचन हैं जिसके (‘जंगल की रानी’ कहानी से)

दुरात्मा = बुरी आत्मा वाला (दुष्ट) (‘तीन झूठ’ कहानी से)

4.9 पारिभाषिक शब्द

पारिभाषिक शब्द उन्हे कहा जाता है जो सामान्य व्यवहार या बोलचाल की भाषा के शब्द न होकर ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े होते हैं । जैसे समाजशास्त्र, भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र, वनस्पति विज्ञान, जीवविज्ञान, दर्शन, मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनितिशास्त्र, तर्कशास्त्र, गणित आदि। अर्थ की दृष्टि से किसी भाषा की शब्दावली दो प्रकार की होती है- सामान्य शब्दावली और पारिभाषिक शब्दावली। ऐसे शब्द जो किसी विशेष ज्ञान के क्षेत्र में एक निश्चित अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, वह पारिभाषिक शब्द होते हैं और जो शब्द एक निश्चित अर्थ में प्रयुक्त नहीं होते वह सामान्य शब्द होते हैं। पारिभाषिक शब्द वे शब्द होते हैं, जो किसी विशिष्ट क्षेत्र में एक विशिष्ट अर्थ की अभिव्यक्ति करते हैं । ये क्षेत्र चिकित्सा, विज्ञान, दर्शन, साहित्य, विधि व वाणिज्य आदि हो सकते हैं। कई बार एक ही शब्द कई क्षेत्रों में मिलता है। परंतु प्रत्येक क्षेत्र में वह शब्द एक विशेष अर्थ के लिए होता है। जैसे – सेल (Cell) शब्द का अर्थ जीव विज्ञान, भौतिक विज्ञान व साहित्य के क्षेत्र में भिन्न भिन्न है। परंतु अनेकार्थी होते हुए भी किसी विशिष्ट क्षेत्र में इस शब्द का प्रयोग करने पर यह एक विशिष्ट अर्थ की अभिव्यक्ति करता है और उस क्षेत्र में कार्य कर रहे लोगों को भ्रम की स्थिति से बचाता है। यही पारिभाषिक शब्दावली की उपयोगिता है।

पारिभाषिक शब्दों का अर्थ बाह्य संरचना से भी अधिक उनके गर्भ में निहित होते हैं। उदाहरण- 'रेखित चेक' इसका सामान्य अर्थ है 'एक ऐसा चेक जिस पर रेखा खींची गई हो' परंतु बैंकिंग के पारिभाषिक शब्द के रूप में इसका तकनीकी अर्थ होगा 'एक ऐसा चेक जिस के ऊपर बायीं ओर दो समांतर रेखाएँ खिंची हो जिसका भुगतान उसी को हो सकता है जिसके नाम चेक कटा हो, चेक धारक को नहीं, आदि।

उदाहरण के रूप मे ('षड्यंत्र' कहानी से) -:

"नायकों की दृष्टि में जनगणना के आधार पर टिकी हुई है। चुनाव कैरिअयर लाभ-हानि पर, प्रशंसा और प्रतिष्ठा पर भी लगी हुई है। उच्च वर्ग अपने लाभ का ख्याल रखते हुए अपने कार्य साधने के लिए निम्न वर्ग को बलि का बकरा बनाता जा रहा है।"[124]

यहाँ पर जनगणना और चुनाव पारिभाषिक शब्द हैं।

उदाहरण के रूप में ('माँ' कहानी से) -:

"5 वर्षों के हिंदी परीक्षाओं का स्वयं अध्यापन करके उसने मुझे भी सहयोग दिया था। स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण होने के बाद अम्मा ने मुझे वैज़ाग में एम.ए. पढ़ने हेतु स्वीकृति प्रदान की। उसने अपनी बेटी के लिए माता-पिता का कर्त्तव्य धारण करके मुझ से उच्च शिक्षा एम.फिल और पी.एचडी. भी करवायी थी।"[125]

यहाँ पर शिक्षा और परीक्षा दोनों शब्द पारिभाषिक शब्द हैं।

उदाहरण के रूप में ('एम. पी. टी. सी. रेणुका' कहानी से) -:

---

[124] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 67

[125] वही; पृष्ठ- 84

"आप मण्डल के अध्यक्ष हो, इसलिए मैं मान, सम्मान देना जरूरी समझती हूँ। आप अन्य को कुछ न कहती हैं, पर मुझे देखकर आपकी आँखों में खून क्यों उतर आता है ?"[126]

यहाँ पर मण्डल और अध्यक्ष पारिभाषिक शब्द के रूप में प्रयोग में लाए गए हैं।

उदाहरण के रूप में ('घुसपैठिये' कहानी में) -:

"राकेश ने कहा भी था, 'दफ्तर में ही आ जाओ।' लेकिन रमेश चौधरी ने कहा था, 'नहीं, बात कुछ ऐसी ही है जो दफ्तर में नहीं हो सकती है।"[127]

यहाँ पर दफ्तर शब्द पारिभाषिक शब्द है जिसे कि कार्यालय भी कहते हैं।

पारिभाषिक शब्दावली की निम्नलिखित विशेषताएं होती है :

- पारिभाषिक शब्द किसी विशेष विज्ञान, विशेष कला या विशेष शास्त्र से जुड़े होते हैं।
- पारिभाषिक शब्द एक विशिष्ट अर्थ की अभिव्यक्ति करते हैं।
- पारिभाषिक शब्दों की सीमा बांध दी जाती है।
- पारिभाषिक शब्दों का अर्थ सुनिश्चित होता है।
- विभिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्द एक पारिभाषिक शब्द का अर्थ सुनिश्चित होता है। जैसे संसद, विधानसभा, मानदेय आदि।
- एक विषय या सिद्धांत में पारिभाषिक शब्द का एक ही अर्थ होता है जैसेः समाजवाद, बहीखाता, द्विआंकन प्रणाली।

---

[126] वही; पृष्ठ- 106

[127] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 14

- पारिभाषिक शब्द सीमित आकार में होता है जैसे – स्वन, अभिभावक।
- पारिभाषिक शब्द मूल या रूढ़ होता है, व्याख्यात्मक नहीं होता जैसे – दूरदर्शन, निवेशक, श्रमजीवी।
- पारिभाषिक शब्द मूल या रूढ़ होता है। यह व्याख्यात्मक नहीं होता। जैसे – विधान। इससे अनेक शब्द निर्मित किए जा सकते हैं: जैसे – विधान परिषद्, विधान सभा आदि।

पारिभाषिक शब्दों के प्रकार

भाषा व्यवहार में देखा जाता है कि प्रयोग के आधार पर शब्द के तीन भेद होते हैं – सामान्य शब्द, अर्द्ध पारिभाषिक शब्द और पारिभाषिक शब्द। इसके विपरीत कुछ भाषाविज्ञानी पारिभाषिक शब्दों के दो ही प्रकार मानते हैं।

4.9.1. पारिभाषिक शब्द या पूर्ण पारिभाषिक शब्द -: पारिभाषिक या पूर्ण पारिभाषिक शब्द वे कहलाते हैं जो ज्ञान व आनंद के साहित्य में टेक्नीकल टर्म के रूप में प्रयोग किए जाते हैं। इन्हें पूर्ण पारिभाषिक शब्द भी कहा जाता है। पारिभाषिक शब्द को पूर्ण पारिभाषिक शब्द कहा गया है और इसकी परिभाषा इस प्रकार दी गई है : 'ऐसे शब्द जो पूर्णतः परिभाषा देते हैं। इनका प्रयोग सामान्य अर्थ में नहीं होता। जैसे काव्यशास्त्र में 'रस निष्पत्ति' शब्द पूर्णतः पारिभाषिक शब्द है। इसका अर्थ है हृदय में स्थित भाव, रस के रूप में अनुभूत होते हैं।' इसका सामान्य अर्थ में प्रयोग नहीं होता। इसी प्रकार भाषाविज्ञान का स्वनिम विशेष अर्थ देता है सामान्य अर्थ नहीं। चिकित्सा के राज्यक्ष्मा और शल्य क्रिया, न्यायालय के पेशी और जमानत, वाणिज्य के धारक और प्रीमियम शब्द विशेष अर्थ के बोधक हैं।

उदाहरण के रूप में (‘कामरेड का घर’ कहानी से) -:

“अब तक साहित्य की संस्कृति प्रेस क्लब, कंस्टीट्यूशन क्लब, गांधी शांति प्रतिष्ठान या राजेंद्र प्रसाद भवन आदि में किराए के सभागारों में संगोष्ठी आयोजित करने की रही थी। ऐसा नहीं है कि दिल्ली महानगर के अंदर साहित्य संगोष्ठियां आयोजित करने के लिए सस्ती जगह उपलब्ध नहीं थीं। साउथ एवेन्यू स्थित एम.पी. क्लब से लेकर सामुदायिक केंद्रों तक कई ऐसी जगह थीं जहाँ पर बहुत कम खर्च में गोष्ठियों का आयोजन हो सकता था।”[128]

यहाँ पर प्रेस क्लब, कंस्टीट्यूशन, क्लब, प्रतिष्ठान, भवन, सभागार, संगोष्ठी, महानगर, केंद्र ये सारे शब्द पारिभाषिक शब्द है और ये पारीभाषिक शब्दावली के अंतर्गत आते हैं।

4.9.2. अर्द्ध पारिभाषिक शब्द -: वे कहलाते हैं जो सामान्य और पारिभाषिक शब्दों के बीच के शब्द होते हैं। अभिप्राय यह है कि ये शब्द अर्द्ध पारिभाषिक शब्द और सामान्य पारिभाषिक शब्दों के रूप में प्रयुक्त होने वाले होते हैं। इनका प्रयोग सामान्य जीवन व्यवहार में तो होता ही है साथ ही किसी भी विशिष्ट ज्ञान के संदर्भ में भी होता है। इन शब्दों की विशेषता यह होती है कि इनका पारिभाषिक अर्थ व्याख्या, लोक प्रयोग, अर्थ विस्तार, अर्थादेश, अर्थ संकोच से सिद्ध होता है। लोक व्यवहार और शास्त्र/विज्ञान विशेष में प्रयुक्त होने के स्तर पर इन शब्दों के रूप में कोई परिवर्तन नहीं होता। ये केवल नया अर्थ लिए होते हैं। जैसे – आवेश, भिन्न, रस, संधि, पुष्प, हस्ताक्षर आदि। अर्द्ध पारिभाषिक शब्द के संबंध में यह कहा गया है, ‘ऐसे शब्द हैं जो कभी तो पारिभाषिक शब्द के रूप में प्रयुक्त होते हैं और कभी सामान्य रूप में। ऐसे शब्दों को अर्द्ध प्रामाणिक शब्द कहा जाता है। जैसे व्याकरण में क्रिया पारिभाषिक शब्द है। किंतु अन्यत्र इसका सामान्य अर्थ में प्रयोग किया जाता है।’ इसी

[128] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 115

प्रकार अलंकार काव्यशास्त्र में पारिभाषिक शब्द है किंतु सामान्य अर्थ में यह आभूषण के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

उदाहरण के रूप में ('रिहाई' कहानी से) -:

"सुगनी गोदाम में एक किनारे खड़ी थी। मजदूरों की चुस्ती-फुर्ती देखकर वह दंग थी। नब्बे-सौ किलो की बोरी पीठ पर लादकर वे इत्मीनान से चल रहे थे।"[129]

यहाँ पर गोदाम, मजदूर, किलो, दंग, बोरी, पीठ ये सारे शब्द अर्द्ध पारिभाषिक शब्द हैं।

4.9.3. सामान्य शब्द -: सामान्य शब्द वे होते हैं जिन शब्दों में कोई तकनीकी पक्ष समाहित नहीं होता। इनके विषय में कुछ भी स्पष्ट कहने की आवश्यकता नहीं होती। जैसे मीठा, कलम, ठोस आदि।

उदाहरण के रूप में ('जरूरत' कहानी से) -:

"दीपावली से एक दिन पहले की बात है। हमेशा की तरह उस दिन भी संगीता घर से निकलकर कहीं गई और लगभग दो घण्टे बाद वह लौटी। उस दिन उसके हाथों में एक फूल था।"[130]

यहाँ पर दीपावली, घर, फूल ये सारे शब्द सामान्य शब्द हैं।

पारिभाषिक शब्दों का निर्माण कई प्रकार से किया जाता है-

1. उपसर्ग से निर्मित -:

इस तरह के शब्द तद्भव, तत्स आगत शब्दों में उपसर्ग जोड़कर बनाए जाते हैं -

---

[129] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ-75

[130] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 102

- अधि + कार – अधिकार
- अति + क्रमण – अतिक्रमण
- उप + मंत्रालय – उपमंत्रालय
- सं + चार – संचार
- बा + कायदा – बाकायदा
- ना + लायक – नालायक
- रि + साइकिल – रिसाइकिल
- रि + माण्ड – रिमाण्ड

2. प्रत्यय से निर्मित -:

तत्सम तद्भव, विदेशी/ आगत शब्दों में प्रत्यय जोड़कर पारिभाषिक शब्द बनाए जाते हैं -

- इतिहास + इक – ऐतिहासिक
- दुकान + दार – दुकानदार
- दम + दार – दमदार
- फिर + औती – फिरौती
- कलेक् + शन – कलेक्शन
- एक्जामिन + एशन – एक्जामिनेशन

3. समास से निर्मित -:

तद्भव, तत्सम और विदेशी/आगत शब्दों के सामासिक प्रयोगों से पारिभाषिक शब्द बनाए जाते हैं -

- तत्सम + तत्सम : ग्राम पंचायत, आकाशवाणी
- तत्सम + तद्भव : जलपरी, रक्षा + चौंकी
- तत्सम + विदेशी : सहकारी + बैंक
- तद्भव + तद्भव : हाथ + घड़ा
- तद्भव + विदेशी : किताब + घर
- देशज + तद्भव : जच्चा + घर
- विदेशी + विदेशी : ग्रीन + हॉल

4. संधि से निर्मित -:

संधि प्रक्रिया से भी पारिभाषिक शब्दों का निर्माण किया जाता है -

- अभि + आवेदन : अभ्यावेदन
- जिला + अधिकारी : जिलाधिकारी
- कुल + अधिपति : कुलाधिपति
- विश्व + विद्यालय : विश्वविद्यालय

5. विदेशी भाषा से यथावत ग्रहीत शब्द -:

पारिभाषिक शब्दों के निर्माण के लिए विदेशी या आगत शब्दों को ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया जाता है।

जैसे- बुलेटिन, बजट, रबर, ग्लूकोज, होमियोग्लोबिन, टेंप्रेचर, मेडिकल, इंजेक्शन, केबिन।

6. अनुकूलन द्वारा पारिभाषिक शब्द निर्माण -:

विदेशी या आगत शब्दों में कुछ बदलाव लाकर हिंदी शैली में शब्दों को ढाल लिया जाता है।

- ट्रेजेडी – त्रासदी
- एकेडेमी – अकादमी
- ऑफिस – दफ्तर
- हॉस्टल – छात्रावास
- रूम – कक्ष
- क्लासरूम – कक्षा
- लाईब्रेरी – पुस्तकालय

कुछ ऐसे शब्द भी हैं जो विशेष अर्थ में प्रयुक्त नहीं होते। उन्हें अपरिभाषिक या सामान्य शब्दों की श्रेणी में रखा जाता है जैसे पहाड़ियाँ, तलैया।

निष्कर्ष

दलित कहानियों के शब्दावली चुनने के लिए विकल्प लेखक तैयार करता है। कुछ कहानी औपचारिक और अनौपचारिक भाषा के मिश्रण का उपयोग कर सकते हैं। कहानी

लिखते समय, एक विशेष शैली को नियोजित करना आम बात है, जो ऐसे शब्द पैटर्न के उत्पादन की अनुमति देता है जो गद्य लेखन या बोली जाने वाली भाषा में नहीं पाए जाते हैं। साहित्यिक कृति को लिखते समय, विभिन्न प्रकार की शब्दावली को संयोजित करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है। विशिष्ट प्रकार के पात्रों की विशेषता वाले कुछ आख्यानों में अनौपचारिक और औपचारिक भाषा का संयोजन सफल हो सकता है, फिर भी, अन्य परिस्थितियों में, यह लेखन की समग्र गुणवत्ता के लिए हानिकारक हो सकता है। कुछ लेखक भाषा की एक ही शैली का उपयोग करके अपने विचारों को संप्रेषित करने का विकल्प चुनते हैं क्योंकि अनुसंधान ने दिखाया है कि ऐसा करने का यह सबसे प्रभावी तरीका है। पर यहाँ पर चयनित कहानी-संग्रहों में तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी, आंचलिक, अनूदित, सामासिक, और पारिभाषिक ये सारे शब्दों का प्रयोग मिलता है। सिर्फ बोलचाल की भाषा ही नहीं अंग्रेजी का भी भरपूर मात्रा में प्रयोग यहाँ पर मिलता है। आगे के अध्याय में इसी को आगे बढ़ाते हुए पदक्रम, पदबंध, उपवाक्य, वाक्य-चयन और विशिष्ट वाक्य प्रयोगों को स्पष्ट किया जाएगा।

पंचम अध्याय

दलित कहानियों का वाक्यविन्यासात्मक विश्लेषण

किसी भाषा में जिन सिद्धान्तों एवं प्रक्रियाओं के द्वारा वाक्य बनते हैं, उनके अध्ययन को भाषा विज्ञान में **वाक्यविन्यास**, 'वाक्यविज्ञान' या सिन्टैक्स (Syntax) कहते हैं। वाक्य के क्रमबद्ध अध्ययन का नाम वाक्यविन्यास हैं। वाक्य विज्ञान, पदों के पारस्परिक संबंध का अध्ययन है। वाक्य भाषा का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है। मनुष्य अपने विचारों की अभिव्यक्ति वाक्यों के माधयम से ही करता है। अतः वाक्य भाषा की लघुतम पूर्ण इकाई है। भाषा का मुख्य व्यापार होता है विचारों का आदान-प्रदान। विचारों का यह आदान-प्रदान भाषा में वाक्यों द्वारा ही किया जाता है। जाहिर यह वाक्य ही भाषा का सबसे अधिक स्वाभाविक और महत्त्वपूर्ण अंग माना जाता है क्योंकि वाक्य के बिना विचार संप्रेषित हो ही नहीं सकते। भाषा की विभिन्न उपपत्तियों के अध्ययनार्थ अनेक विज्ञान या शास्त्र बनाए गये हैं। ऐसे ही भाषा-विज्ञान के जिस विभाग या खंड में 'वाक्य' का अध्ययन-विश्लेषण होता है, उसे ही वाक्यविन्यास, वाक्य-विज्ञान, 'वाक्य-विचार' या 'वाक्य-रचनाशास्त्र' कहते हैं। पतंजलि ने महाभाष्य में वाक्य के 5 लक्षण दिए हैं-

1. एक क्रियापद वाक्य है।
2. अव्यय, कारक और विशेषण से युक्त क्रिया-पद वाक्य है।
3. क्रिया-विशेषण-युक्त क्रिया-पद वाक्य है।

4. विशेषण-युक्त क्रिया-पद वाक्य है।
5. क्रियापद-रहित संज्ञा-पद भी वाक्य होता है।

आचार्य 'भर्तहरि' ने वाक्य की परिभाषाएं दी हैं-

1. क्रिया-पद को वाक्य कहते हैं।
2. क्रिया-युक्त कारकादि के समूह को वाक्य कहते हैं।
3. क्रिया एवं कारकादि-समूह में रहनेवाली 'जाति' वाक्य है।
4. क्रियादि-समूह-गत एक अखण्ड शब्द (स्फोट) वाक्य है।
5. क्रियादि-पदों के क्रम-विशेष को वाक्य कहते हैं।
6. क्रियादि के बुद्धिगत समन्वय को वाक्य कहते हैं।
7. साकांक्ष प्रथम पद को वाक्य कहते हैं।
8. साकांक्ष पृथक्-पृथक् सभी पदों को वाक्य कहते हैं।

पतंजलि और **थ्रॉक्स** दोनों ही आचार्यों ने वाक्य की परिभाषा इस प्रकार दी है- *'पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराने वाले वाले शब्द-समूह को वाक्य कहते हैं।'* इसमें दो बातों पर विशेष बल दिया गया है :-

1. वाक्य शब्दों का समूह है।
2. वाक्य पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराता है।
3. भाषा की इकाई वाक्य है, न कि शब्दसमूह या पद।

4. यह आवश्यक नहीं है कि वाक्य शब्दों का समूह ही हो। एक पद वाले भी वाक्य प्रयोग में आते हैं। 'चलोगे ?' 'हाँ', 'कहाँ से?' 'घर से' आदि।
5. अनेक भाषाओं में एक समस्त पद ही पूरे वाक्य का काम देता है।
6. वाक्य भाषा का अंग है, वह सम्पूर्ण अर्थ की प्रतीति नहीं करा सकता। एक ग्रन्थ या भाषण में सहस्रों वाक्य होते हैं, तब पूर्ण की अभिव्यक्ति होती है। एक-एक वाक्य विचार-धारा की एक-एक तरंग मात्रा है।

वाक्यविन्यास का वर्गीकरण दो आधारों पर किया गया है :-

5.1 रचना के आधार पर

रचना के आधार पर वाक्य तीन प्रकार के होते हैं-

5.1.1 सरल वाक्य - वे वाक्य जिनमें एक उद्देश्य तथा एक विधेय हो वे सरल या साधारण वाक्य कहलाते हैं।

जैसे ('गंवार' कहानी से) -:

"संसद भवन से लेकर पटेल चौक पूरा संसद मार्ग लोगों से ठसाठस भरा होता है।"[131]

इस वाक्य में एक ही कर्ता (उद्देश्य) तथा एक ही क्रिया (विधेय) है। अत: यह वाक्य सरल या साधारण वाक्य है।

---

[131] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-123

5.1.2 मिश्र वाक्य - वे वाक्य, जिनमें एक साधारण वाक्य हो तथा उसके अधीन या आश्रित दूसरा उपवाक्य हो, मिश्र वाक्य कहलाते हैं।

जैसे ('शीत लहर' कहानी से) -:

"जिन सदस्यों के पास अपना कोई मकान या सरकारी आवास नहीं था केवल वे ही सोसाइटी में रहने के लिए अभी तक आए थे।"[132]

वाक्य में 'जिन सदस्यों के पास अपना कोई मकान या सरकारी आवास नहीं था' -प्रधान उपवाक्य और 'केवल वे ही सोसाइटी में रहने के लिए अभी तक आए थे' -आश्रित उपवाक्य है तथा दोनों समुच्चयबोधक अव्यय 'केवल' से जुड़े हैं, अत: यह मिश्र वाक्य है।

5.1.3 संयुक्त वाक्य - वे वाक्य, जिनमें एक से अधिक प्रधान उपवाक्य हों (चाहे वह मिश्र वाक्य हों या साधारण वाक्य) और वे संयोजक अव्ययों द्वारा जुड़े हों, संयुक्त वाक्य कहलाते हैं।

जैसे ('तीन झूठ' कहानी से) -:

"सारी रात वह काम करता था और बड़े ही सवेरे वह फिर वापिस पोन्नपल्ली चले जाता था।"[133]

इस वाक्य में दोनों ही प्रधान उपवाक्य हैं तथा 'और' संयोजक द्वारा जुड़े हैं। अत: यह संयुक्त वाक्य है।

रचना के आधार पर वाक्य के भेद एवं उनकी पहचान नीचे दी गई तालिकानुसार समझी जा सकती है।

---

[132] वही; पृ-137

[133] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-69

वाक्य के भेद	पहचान	उदाहरण
सरल वाक्य	एक उद्देश्य + एक विधेय = सरल वाक्य	सूर्योदय होने पर कुहासा जाता रहा। सूर्योदय — उद्देश्य; होने पर कुहासा जाता रहा — विधेय **सरल वाक्य**
मिश्र वाक्य	प्रधान उपवाक्य + आश्रित उपवाक्य = मिश्र वाक्य **मिलाने वाले शब्द** (कि, जो वह, जितना ... उतना,) (जैसे... वैसे..., जब... तब... ,) (जहाँ... वहाँ... अगर, यदि आदि)	जैसे ही सूर्योदय हुआ वैसे ही कुहासा जाता रहा। ही सूर्योदय हुआ — प्रधान उपवाक्य; ही कुहासा जाता रहा — आश्रित उपवाक्य जैसे - - - वैसे (प्रधान उपवाक्य और आश्रित उपवाक्य को मिलाने वाले शब्द)
संयुक्त वाक्य	सरल वाक्य + सरल वाक्य = संयुक्त वाक्य **जोड़ने वाले शब्द** (और, एवं, तथा, या, अथवा, इसलिए, फिर, भी, किंतु, परन्तु, लेकिन, पर, अतः, तो, नहीं तो आदि।)	सूर्योदय हुआ और कुहासा जाता रहा। सूर्योदय हुआ — **सरल वाक्य**; और — **योजक शब्द**; कुहासा जाता रहा — **सरल वाक्य**

5.2 अर्थ के आधार पर

अर्थ के आधार पर वाक्य आठ प्रकार के होते हैं-

5.2.1 विधिवाचक वाक्य - वे वाक्य जिनसे किसी बात या कार्य के होने का बोध होता है, विधिवाचक वाक्य कहलाते हैं;

जैसे ('खुला' कहानी से, पृ-52) :-

- फकीर बाहर आया।
- तुम लोग जा रहे हो।

5.2.2 निषेधवाचक वाक्य - वे वाक्य, जिनसे किसी बात या कार्य के न होने अथवा इनकार किए जाने का बोध होता है, निषेधवाचक वाक्य कहलाते हैं;

जैसे ('तलाश' कहानी से, पृ-25) :-

- रामबती खाना नहीं बनाती है।
- मैं यह कार्य नहीं करूँगी।

5.2.3 आज्ञावाचक वाक्य - वे वाक्य, जिनसे किसी प्रकार की आज्ञा का बोध होता है, आज्ञावाचक वाक्य कहलाते हैं;

जैसे ('षड्यंत्र' कहानी से, पृ-63) :-

- फटी-पुरानी चटाई रखी है वो लाओ।
- यहीं बैठकर काम करो।

5.2.4 विस्मयवाचक वाक्य - वे वाक्य जिनसे किसी प्रकार का विस्मय, हर्ष, दुःख, आश्चर्य आदि का बोध होता है, विस्मयवाचक वाक्य कहलाते हैं;

जैसे ('षड्यंत्र' कहानी से, पृ-64) :-

- अरे बाबा ! जरूर पढ़िए, जन-गणना का विवरण पढ़िए।
- देखा ! आज तक हम अज्ञानता के अंधेरे में ही रहे। (पृ-65)

5.2.5 सन्देहवाचक वाक्य - वे वाक्य, जिनसे किसी प्रकार के सन्देह या भ्रम का बोध होता है, सन्देहवाचक वाक्य कहलाते हैं;

जैसे (‘कूड़ाघर’ कहानी से, पृ-52) :-

- वह अब जा चुका होगा।
- कृष्णराज पढ़ा-लिखा है या नहीं।

5.2.6 इच्छावाचक वाक्य - वे वाक्य, जिनसे किसी प्रकार की इच्छा या कामना का बोध होता है, इच्छावाचक वाक्य कहलाते हैं;

जैसे-

- ईश्वर थोड़ा रहम करे। (‘जेल’ कहानी से, पृ-115)
- आप जीवन में उन्नति करें। (‘नो बार’ कहानी से, पृ-42)

5.2.7 संकेतवाचक वाक्य - वे वाक्य, जिनसे किसी प्रकार के संकेत या इशारे का बोध होता है, संकेतवाचक वाक्य कहलाते हैं;

जैसे (‘यह अंत नहीं’ कहानी से, पृ-25) :-

- फूल खिलेगा तो भौंरे मंडराएंगे ही।
- अगर वर्षा होगी तो फसल भी अच्छी होगी।

5.2.8 प्रश्नवाचक वाक्य - वे वाक्य, जिनसे किसी प्रश्न के पूछे जाने का बोध होता है, प्रश्नवाचक वाक्य कहलाते हैं;

जैसे (‘बिट्टन मर गई’ कहानी से) :-

- उसने उत्सुक होकर पूछा, ‘कब ? कितने दिन बाद ?’ (पृ-67)
- बिट्टन की ससुराल की पृष्ठ्भूमि क्या है ? दुल्हन बनकर गई बिट्टन के साथ उनका कैसा व्यवहार रहा ? (पृ-68)

5.3 पदक्रम

‘पद’ का आशय शब्द से है। जब कोई **'शब्द'** अकेले बोला या लिखा जाता है तब वह **'शब्द'** होता है। किंतु जैसे ही उसका प्रयोग अन्य शब्दों के साथ मिलाकर वाक्य में कर लिया जाता है, तब उस वाक्य का प्रत्येक शब्द **'पद'** कहलाता है। वाक्य में सभी प्रयुक्त सभी पदों (शब्दों) का एक निश्चित क्रम होता है। यदि शब्दों को निश्चित क्रम में प्रयोग किया जाता है तो पाठक या श्रोता के द्वारा सार्थक अर्थ ग्रहण कर लिया जाता है। यदि पदों का क्रम बिगाड़ कर लिखा जाता है तो वाक्य का सार्थक अर्थ ग्रहण करना दूभर होता है। शब्द से बडी किसी भी रचना में शब्दों का पूर्वापर क्रम **पदक्रम** कहलाता है। यह क्रम-विधान हर भाषा में अलग हो सकता है। उदाहरण के लिए हिंदी, अंग्रेजी तथा भारतीय भाषाओं में संज्ञा पदबंध का पदक्रम है :

विशेषण + संज्ञा, जैसे बड़ा लड़का, सुन्दर मकान। कुछ अन्य भाषाओं में यह क्रम उल्टा होता है अर्थात संज्ञा + विशेषण। इसी प्रकार हिंदी तथा भारतीय भाषाओं में क्रिया वाक्य के अंत में आती है जबकि अंग्रेजी आदि भाषाओं में कर्ता के बाद अर्थात मध्य में। वाक्य के स्तर पर पदक्रम की लगभग वही भूमिका होती है जो कारक विभक्ति की होती है। इसलिए कोई शब्द वाक्य में किस स्थान पर और किससे पहले या बाद में प्रयुक्त होता है यह कभी-कभी प्रकट करता है कि वह शब्द वाक्य में कर्ता है, कर्म है या कोई और व्याकरणिक प्रकार्य कर रहा है। इस दृष्टि से पदक्रम का वाक्य में वही महत्त्व है जो कारक का है।

उदाहरण के लिए, (‘तीन झूठ’ कहानी से, पृ-68) -:

“पीटर की वजह से ही नाव भारी-भरकम चल रही है।” (पीटर: कर्ता)

(‘कामरेड का घर’ कहानी से, पृ-119) -:

“अभय तिवारी ने पनीर की सब्जी और थोड़े से चावल बनवा दिए थे ।” (अभय तिवारी: कर्ता)

इन दो वाक्यों में प्रथम स्थान में आने के कारण ही पीटर और अभय तिवारी कर्ता है।

हिंदी तथा भारतीय भाषाओं में वाक्यों का पदक्रम है : कर्ता – कर्म – क्रिया जिसमे क्रिया का स्था वाक्य के सबसे अंत में है। अंग्रेजी में इसे SOV रचना कहते हैं अर्थात subject – object – verb। अंग्रेजी इसके विपरीत SVO पदक्रम वाली भाषा है अर्थात जिसमें क्रिया का स्थान कर्ता के बाद होता है और कर्म का उसके बाद। हिंदी के वाक्यों की सहज पदक्रम व्यवस्था इस प्रकार है :

हिंदी वाक्य = (+कर्ता ± कर्म ± पूरक ± क्रिया विशेषण + क्रिया)

पद का क्रम (स्थान) बदलने से वाक्य अशुद्ध हो जाता है और अर्थ भी स्पष्ट नहीं होता। पदक्रम सम्बन्धी नियम हैं :

1. वाक्य में पहले कर्ता, फिर कर्म या पूरक और अंत में क्रिया रखते हैं,

जैसे (‘गिरवी’ कहानी से, पृ-23) :-

“शास्त्री (कर्ता) तेलुगु (कर्म) पढ़ाते है (क्रिया)।”

“शास्त्री (कर्ता) शिक्षक (पूरक) है (क्रिया)।”

2. द्विकर्मक क्रियाओं में गौण कर्म पहले और मुख्य कर्म पीछे रखते हैं,

जैसे (‘गंवार’ कहानी से, पृ-127) :-

"प्रभात (कर्ता) ने आभा (गौण कर्म) की हालत पर दुख और अफसोस (मुख्य कर्म) व्यक्त किया (क्रिया)।"

3. विशेषण संज्ञा के पहले और क्रिया-विशेषण प्रश्नवाचक के अतिरिक्त क्रिया के पहले आते हैं :

जैसे ('मुम्बई कांड' कहानी से, पृ-31) :-

"बड़े प्रसिद्ध (विशेषण) अभिनेता (संज्ञा-कर्ता) आज यहाँ (क्रिया-विशेषण) आए हुए हैं (क्रिया)।"

4. निषेधवाचक अव्यय "न", "नहीं", "मत" प्राय: क्रिया के पूर्व आते हैं,

जैसे ('घुसपैठिये' कहानी से, पृ-16) :-

"प्रणव मिश्रा का झन्नाटेदार थप्पड़ सोनकर के गाल पर पड़ा...(गाली)...चमार हो या सोनकर...ब्राह्मण तो नहीं हुए हैं...हो सिर्फ कोटेवाले।"

5. विशेष अर्थ में "नहीं", "मत" क्रिया के बाद आते है,

जैसे ('यह अंत नहीं' कहानी से, पृ-22) :-

"मैंने आपको देखा नहीं। उसे बुलाना मत।"

6. तो, भी, ही, भर, तक, मात्र (निपात) उन शब्दों के बाद आते हैं, जिन पर बल देना होता है,

जैसे ('मोहरे' कहानी से, पृ-49) :-

"वह भी स्कूल जाएगा।"

"तुमने ही उसे मारा था।"

इनका स्थान बदल जाने से वाक्य में अर्थोत्तर हो जाता है, जैसे - वह स्कूल भी जाएगा, तुमने उसे ही मारा था। यहाँ "भी" और "ही" का स्थान बदल देने से अर्थ भिन्न हो गया।

7. शर्तबोधक, समुच्चयबोधक (यदि-तो, यद्यपि-तथापि) प्राय: जोड़ने वाले वाक्यों के प्रारंभ में आते हैं,

जैसे ('तलाश' कहानी से, पृ-21) :-

"वह आएगा तो मैं जाऊँगा।"

('मुम्बई कांड' कहानी से, पृ-34) :-

"यद्यपि उसने बहुत परिश्रम किया तथापि सफल नहीं हो सका।"

8. विस्मयादिबोधक और संबोधन प्राय: वाक्य के प्रारंभ में आते हैं,

जैसे ('अब्बुराम का बाग' कहानी से, पृ-49) :-

"सुब्बय्या ने व्यंग्य किया- अरे ! इंजन आ रहा है।"

9. बल के लिए विशेष पदक्रम: बल के लिए हिन्दी वाक्य में पदक्रम बदल भी जाता है,

जैसे ('खुला' कहानी से, पृ-58) :-

"लड़के को मैंने नहीं देखा (कर्म का स्थानांतरण)। मैंने बुलाया नाजिया को और आए तुम।" (क्रिया का स्थानांतरण)

प्राय: सभी भाषाओं में वाक्य-रचना के लिए पदों के क्रम पर अल्प-अनल्प ध्यान रखा जाता है, जिससे लिखित वाक्य अपने निश्चित अर्थ का बोध करा सके। इसे ही पदक्रम कहा जाता है। प्रत्येक भाषा में पदक्रम की योजना उस भाषा के व्याकरण के आधार पर की जाती है। यद्यपि हिंदी भाषा के प्रत्येक वाक्य का क्रम सर्वथा सुनिश्चित तो नहीं है फिर भी पदक्रम

का ध्यान सामान्यतया रखा जाता है। यदि पदक्रम ठीक नहीं रहा, तो अर्थ का अनर्थ हो जाएगा। हिंदी की वाक्य-रचना में सबसे पहले सम्बोधन, फिर कर्ता, फिर कर्म तथा क्रिया आते हैं।

यदि कोई कहे कि, 'परीक्षा में स्कूल हुई', 'गांव जा था रहा वह', पश्चिम डूबता है सूर्य में' तो इन्हें वाक्य नहीं माना जाएगा क्योंकि यहाँ हिंदी व्याकरण के अनुसार पदों के क्रम का निर्वाह नहीं किया गया है। अत: इन वाक्यों में पदक्रम का ध्यान रखते हुए इस प्रकार कहा या लिखा जा सकता है – 'स्कूल में परीक्षा हुई', 'वह गाँव जा रहा था' तथा 'सूर्य पश्चिम में डूबता है' – तभी वाक्य सार्थक अभिव्यक्ति दे सकते हैं। पदक्रम का अर्थ है कि किस पद के बाद कौन पद रखा जाए। पदों को स्वेच्छा से जहाँ चाहें, वहाँ नहीं रख सकते।

वाक्य और पदक्रम के संबन्ध में विचार करते समय निम्नलिखित तथ्यों का ध्यान रखना चाहिए :-

1. भाषा यदि दीर्घकाल से चली आ रही है तो उसकी वाक्य-रचना दो विभिन्न कालों में भिन्न हो सकती है।
2. वाक्य-रचना पर अन्य भाषाओं का भी प्रभाव पड़ता है। आधुनिक बोल-चाल की हिन्दी पर अंग्रेजी वाक्य-रचना का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

   जैसे- 'उसने कहा कि में प्रयाग नहीं जाऊँगा' के स्थान पर 'उसने कहा कि वह प्रयाग नहीं जाएगा'।
3. शिक्षा के प्रभाव के कारण शिक्षितों के द्वारा प्रयुक्त भाषा में कुछ कृत्रिमता रहती है, अतः शिक्षितों की अपेक्षा अशिक्षितों की भाषा में प्रयुक्त पदक्रम अधिक मान्य एवं विश्वसनीय होता है।

4. पदक्रम के विशिष्ट अध्ययन के लिए पद्यात्मक काव्यों आदि की अपेक्षा गद्य की भाषा अधिक उपयोगी होती है।
5. पदक्रम के ज्ञानार्थ अनुवाद आदि की अपेक्षा मूल पाठ अधिक उपयुक्त होता है।
6. पदक्रम के अध्ययन के लिए अलंकृत काव्यात्मक भाषा की अपेक्षा सरल सुबोध अधिक उपयुक्त है। इसमें भाषा का स्वाभाविक प्रवाह देखने को मिलता है।
7. पदक्रम के अध्ययन के लिए लिखित भाषा की अपेक्षा उच्चरित भाषा का अधिक महत्त्व है। उच्चरित भाषा में भाषा के स्वाभाविक रूप का साक्षात्कार होता है।

5.4 पदबंध

वाक्य के उस अंश को जिसमें एक से अधिक पद परस्पर संबद्ध होकर अर्थ-बोध कराता है, उसे पदबंध कहते हैं। पदबंध का अर्थ अनेक पदों का समूह होता है। 'वाक्य के उस भाग को जिसमें एक से अधिक पद परस्पर सम्बद्ध होकर अर्थ तो देते हैं किंतु पूरा अर्थ अर्थ नहीं देते हैं, पदबंध या वाक्यांश कहलाते हैं।'

जैसे ('मूवमेंट' कहानी से, पृ-81) :-

"तुम फटे चीथड़े लटकाए फिरते हो कोई तुम्हें कपड़े नहीं देता।"

इस वाक्य में 'फटे चीथड़े लटकाए' पदबंध के रूप में प्रयुक्त है, अर्थात् यहाँ दो पदों का बंधन है।

पदबंध की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :-

(क) इसमें एक से अधिक पद का होना आवश्यक है।

(ख) पदबंध एक तरह से वाक्यांश होता है।

(ग) सभी पद परस्पर सम्बद्ध होकर एक इकाई का निर्माण करते हैं।

इस तरह से पदबंध दो या दो से अधिक पदों का समूह होता है जो व्याकरण के अनुसार आपस में सम्बद्ध होते हैं तथा वाक्य या अन्य किसी पदबंध में सम्मिलित रूप से एक ही व्याकरणिक कार्य को सम्पादित करता है।

उदाहरण के रूप में ('लाठी' कहानी से, पृ-89) :-

"सोनबती ने हग दिया था।"

दूसरा उदाहरण ('मूवमेंट' कहानी से, पृ-88) :-

"हज़ार-हज़ार वाट के कई वल्ब उसकी आँखों को चौंधियाने लगे और 'उसे' लगा कि जमीन पर नहीं 'वह' रेत के ढेर पर खड़ा है और रेत 'उस' के नीचे से खिसक रही है।"

इन दोनों उदाहरणों में, पहले वाक्य में सोनबती एक पद है, लेकिन दूसरे में अनेक पद है, जो सम्मिलित रूप से कर्त्ता का कार्य कर रहे हैं जिसमें हज़ार-हज़ार वाट के कई वल्ब के द्वारा कार्य सम्पन्न हो रहा है।

5.4.1 पदबंध के कार्य

पदबंध के निम्नलिखित प्रमुख कार्य हैं :-

(1) यह संज्ञा का कार्य करता है।

जैसे ('लाठी' कहानी से, पृ-89) :-

"सोनबती के चाचा हरिसिंह, क्या हुआ ? तबीयत तो ठीक है तुम्हारी ?"

यहाँ 'सोनबती के चाचा हरिसिंह' पद-समूह संज्ञा के रूप में कार्य कर रहा है।

(2) यह सर्वनाम का कार्य करता है।

जैसे ('जरूरत' कहानी से, पृ-104) :-

"इतना होशियार (वह) कभी सफल न हो सका।"

यहाँ 'इतना होशियार (वह)' पद-समूह सर्वनाम का कार्य कर रहा है।

(3) यह विशेषण का कार्य करता है।

जैसे ('मैं ब्राहमण नहीं हूँ !' कहानी से, पृ-63) :-

"उस रिक्शे से आए उसके रिश्तेदार मिरासी है।"

यहाँ 'उस रिक्शे से आए' पद-समूह विशेषण का कार्य कर रहा है।

(4) यह क्रिया का कार्य करता है।

जैसे ('तीन झूठ' कहानी से, पृ-70) :-

"अप्पल राजु होटल की तरफ धीरे-धीरे चलता जा रहा है।"

यहाँ 'धीरे-धीरे चलता जा रहा है' पद-समूह क्रिया का कार्य कर रहा है।

(5) यह क्रियाविशेषण का कार्य करता है।

जैसे ('अब्बुराम का बाग' कहानी से, पृ-50) :-

"पूरे गाँव में दोपहर तक इस घटना का पता चल गया।"

यहाँ 'दोपहर तक' पद-समूह क्रियाविशेषण का कार्य कर रहा है।

5.4.2 पदबंध के भेद या प्रकार

विकारी और अविकारी दोनों प्रकार के शब्द पदबंध हो सकते हैं। पदबंध के आठ भेद होते हैं। यहाँ पदबंध के भेद और उसकी परिभाषा के बारें में चर्चा करने जा रहे है -:

1 . संज्ञा पदबंध

2 . सर्वनाम पदबंध

3 . क्रिया पदबंध

4 . विशेषण पदबंध

5 . क्रिया विशेषण पदबंध

6 . संबंधबोधक पदबंध

7 . समुच्चयबोधक पदबंध

8 . विस्मयादि बोधक पदबंध

5.4.2.1 संज्ञा-पदबंध- वह पदबंध जो वाक्य में संज्ञा का कार्य करे, संज्ञा पदबंध कहलाता है।

दूसरे शब्दों में- पदबंध का अंतिम अथवा शीर्ष शब्द यदि संज्ञा हो और अन्य सभी पद उसी पर आश्रित हो तो वह 'संज्ञा पदबंध' कहलाता है।

जैसे ('लाठी' कहानी से, पृ-89) :-

"सोनबती के चाचा हरिसिंह, क्या हुआ ? तबीयत तो ठीक है तुम्हारी ?"

और उदाहरण ('षड्यंत्र' कहानी से, पृ-61) :-

"सूरज सोयी हुई जनता को जगाने के लिए उग रहा था।"

उदाहरण के रूप में ('स्वाति बूंद' कहानी से, पृ-86) :-

"दूसरे शब्दों में कहूं तो मैं ज़मींदार का पी.ए. था ज़मींदार के पीछे-पीछे घूमना, उनका ब्रीफकेस उठाना, उनकी बातों में हाँ मिलाना मेरा काम था।"

उपर्युक्त वाक्यों में 'संज्ञा पदबंध' देख सकते है।

5.4.2.2 विशेषण पदबंध- वह पदबंध जो संज्ञा अथवा सर्वनाम की विशेषता बतलाता हुआ विशेषण का कार्य करे, विशेषण पदबंध कहलाता है। **दूसरे शब्दों में-** जब एक से अधिक पद मिलकर विशेषण पद का कार्य करें, तो उसे विशेषण पदबंध कहा जाता हैं।

उदाहरण के रूप में ('मोहरे कहानी से, पृ-56) :-

"तेज चलने वाली गाड़ियाँ प्रायः देर से पहुँचती हैं।"

('प्रस्थान' कहानी से, पृ-41) :-

"आप मेरे लिए एक सचित्र-सुन्दर और सामाजिक किताब लेते आइएगा।"

('जेल' कहानी से, पृ-116) :-

"गुलाब के फूल-जैसा सुडौल शरीर किसे मुग्ध नहीं करता ?"

('मूवमेंट' कहानी से, पृ-85) :-

"दो गिलास भर पानी आंदोलन के लिए काफी है।"

('कूड़ाघर' कहानी से, पृ-56) :-

"न जाने कितने क्रांतिकारी लोग इस मिट्टी में समा गए।"

उपर्युक्त वाक्यों में 'विशेषण पदबंध' के उदाहरण दिखाए गये हैं।

5.4.2.3 सर्वनाम पदबंध- वह पदबंध जो वाक्य में सर्वनाम का कार्य करे, सर्वनाम पदबंध कहलाता है।

दूसरे शब्दों में- जब कई पद मिलकर सर्वनाम पद का कार्य करें, तो उसे सर्वनाम पदबंध कहा जाता है।

उदाहरण के रूप में ('हत्यारे' कहानी से, पृ-92) :-

"बिजली-सी फुरती दिखाकर वह चौक पर पहुंचा।"

('घुसपैठिये' कहानी से, पृ-18) :-

"गाली देने वाले छात्र और निडर हो गए।"

('दिनेशपाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन' कहानी से, पृ-72) :-

"विरोध करने वाले लोगों में से किसी ने नहीं बोला।"

उपर्युक्त वाक्यों में सर्वनाम पदबंध हैं।

5.4.2.4 क्रिया पदबंध- वह पदबंध जो अनेक क्रिया-पदों से मिलकर बना हो, क्रिया पदबंध कहलाता है।

दूसरे शब्दों में- जब कई क्रियाएँ मिलकर एक क्रिया पद का कार्य करें, तो उसे क्रिया पदबंध

कहा जाता है। क्रिया पदबंध में मुख्य क्रिया पहले आती है। उसके बाद अन्य क्रियाएँ मिलकर एक समग्र इकाई बनाती है। यही 'क्रिया पदबंध' है।

क्रिया पदबंध में मुख्य क्रिया पहले आती है। उसके बाद अन्य क्रियाएँ मिलकर एक समग्र इकाई बनाती है। यही 'क्रिया पदबंध' है।

उदाहरण के रूप में ('घुसपैठिये' कहानी से, पृ-13) :-

''दो-दो हत्याओं के बाद भी यह शहर गूंगा ही बना रहा।''

('घुसपैठिये' कहानी से, पृ-13) :-

''धीमी आवाज सुन पाना राकेश के लिए कठिन महसूस हो रहा था।''

('यह अंत नहीं' कहानी से, पृ-21) :-

''इसी जद्दोजहद ने उसके अंतर्मन में विश्वास जगा दिया था।''

('यह अंत नहीं' कहानी से, पृ-22) :-

''बाकी मजदूर वहीं रह गए थे।''

उपर्युक्त वाक्यों में शब्द 'क्रिया पदबंध' है।

5.4.2.5 क्रियाविशेषण या अव्यय पदबंध- वह पदबंध जो वाक्य में अव्यय का कार्य करे, अव्यय पदबंध कहलाता है।

दूसरे शब्दों में- जब कई पद मिलकर क्रियाविशेषण पद का कार्य करते हैं, तो उसे क्रियाविशेषण या अव्यय पदबंध कहा जाता हैं। यह पदबंध मूलतः क्रिया का विशेषण रूप होने के कारण प्रायः क्रिया से पहले आता है। इसमें क्रियाविशेषण प्रायः शीर्ष स्थान पर होता है, अन्य पद उस पर आश्रित होते है। इस पदबंध का अंतिम शब्द अव्यय होता है।

उदाहरण के लिए ('साँग' कहानी से, पृ-30) :-

"साँग के साथ बीच-बीच में रागनियों के रंग ने समा बांध रखा।"

('बिट्टन मर गई' कहानी से, पृ-76) :-

"सुबह से शाम तक वह बैठी रही।"

इन वाक्यों में शब्द अव्यय/क्रियाविशेषण पदबंध हैं।

5.4.2.6 संबंधबोधक पदबंध- दो पदबंधों के बीच संबंध स्थापित करने वाले शब्दों को सम्बन्ध बोधक पदबंध कहेंगे।

जैसे – बदले, पलटे, समान, योग्य, सरीखा, ऊपर, भीतर, पीछे से, बाहर की ओर आदि।

उदाहरण के रूप में ('लाठी' कहानी से, पृ-91) :-

"वह अपनी खाट के ऊपर जा बैठी और हरिसिंह को आवाज लगाने लगी।"

5.4.2.7 समुच्चयबोधक पदबंध- वह शब्द, एक पदबंध को दूसरे वाक्य से मिलाते हैं उन्हें समुच्चय बोधक पदबंध कहा जाता है।

उदाहरण के रूप में ('बिट्टन मर गई' कहानी से, पृ-69) :-

"प्राय: रोज शाम को वह विकास से गणित और अंग्रेजी पढ़ती थी।"

('मूवमेंट' कहानी से, पृ-80) :-

"प्रत्येक रविवार को वह ऐसी योजना बनाता है लेकिन हर बार कोई न कोई आ धमकता है और उसे अपने प्रोग्राम कैंसिल कर सामाजिक कार्यों में व्यस्त हो जाना पड़ता है।"

5.4.2.8 विस्मयादि बोधक पदबंध- जिस वाक्य में शोक, लज्जा, विस्मय , ग्लानि ,हर्ष, आदि मनोभावों को व्यक्त करने वाले शब्द विस्मयादिबोधक पदबंध कहलाते हैं । उदाहरण के रूप में ('कुएं का मेंढक' कहानी से, पृ-97) :-

"ओहो ! हैदराबाद ! मैं क्या बताऊं ? तुम ही अपनी आँखों से देखना ।"

('मिट्टी भोजन' कहानी से, पृ-101) :-

"थू ! कितना भी क्यों न दें, संतोष ही नहीं है ।"

5.5 उपवाक्य

जब दो या अधिक सरल वाक्य मिलकर एक वाक्य बनाते हैं तो उस वाक्य में जो वाक्य मिले होते हैं उन्हें 'उपवाक्य' कहते हैं। उपवाक्य दो प्रकार के होते हैं –

1. प्रधान उपवाक्य 2. आश्रित उपवाक्य

उदाहरण के रूप ('मोहरे' कहानी से) -:

"उसके मस्तिष्क में सदैव यह बात रहती थी कि वह एक शिक्षक है और उसका कर्त्तव्य छात्रों को ठीक से शिक्षित करने है ।"[134]

('अब्बुराम का बाग' कहानी से) -:

"वह नहीं जानती थी कि वह चुनरी ही एक दिन उसकी मौत का कारण बन जाएगी ।"[135]

('ब्रह्मास्त्र' कहानी से) -:

---

[134] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-48

[135] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृ-50

"कभी-कभी तो बहसें इतनी ऊंची हो जाती थीं कि सड़क से गुजरते लोग भी खड़े होकर सुनने लगते थे।"[136]

उपर्युक्त उदाहरणों में 'उसके मस्तिष्क में सदैव यह बात रहती थी', 'वह नहीं जानती थी' और 'कभी-कभी तो बहसें इतनी ऊंची हो जाती थीं' प्रधान उपवाक्य हैं और 'वह एक शिक्षक है और उसका कर्त्तव्य छात्रों को ठीक से शिक्षित करने है', 'वह चुनरी ही एक दिन उसकी मौत का कारण बन जाएगी' और 'सड़क से गुजरते लोग भी खड़े होकर सुनने लगते थे' आश्रित उपवाक्य हैं।

ऊपर के उदाहरणों से स्पष्ट है कि प्रधान उपवाक्य आश्रित उपवाक्य के बिना भी स्वतंत्र प्रयुक्त होने की क्षमता रखते हैं परंतु आश्रित उपवाक्य अपने अर्थ की पूर्णता या संगति के लिए प्रधान उपवाक्य की संगति रखते हैं, स्वतंत्र प्रयुक्त होने की क्षमता नहीं रखते।

5.5.1 प्रधान उपवाक्य – ये किसी दूसरे के आश्रित नहीं होता। यह स्वतंत्र प्रयुक्त होता है और अपने आप में पूर्ण अर्थ देता है।

5.5.2 आश्रित उपवाक्य – ये वाक्य में किसी दूसरे के आश्रित होता है। यह स्वतंत्र प्रयुक्त नहीं होता और अर्थ की पूर्णता या संगति एवं संरचना के लिए प्रधान वाक्य पर आश्रित होता है।

इसके चार होते हैं -:

1. संज्ञा उपवाक्य

2. विशेषण उपवाक्य

[136] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-81

3. क्रियाविशेषण उपवाक्य 4. पूरक उपवाक्य

5.5.2.1 संज्ञा उपवाक्य – वह उपवाक्य जो प्रधान या मुख्य (Principal) उपवाक्य की संज्ञा या कारक के रूप में सहायता करे, उसे संज्ञा उपवाक्य कहते हैं । **दूसरे शब्दों में-** जो गौण उपवाक्य प्रधान उपवाक्य का उद्देश्य (कर्ता), कर्म या पूरक बनकर संज्ञा अथवा सर्वनाम के स्थान पर प्रयुक्त हो, वह संज्ञा उपवाक्य कहलाता है।

यह कर्म (सकर्मक क्रिया) या पूरक (अकर्मक क्रिया) का काम करता है, जैसा संज्ञा करती है । 'संज्ञा-उपवाक्य' की पहचान यह है कि इस उपवाक्य के पूर्व 'कि' होता है।

उदाहरण के रूप में ('माँ' कहानी से, पृ-80) -:

"विश्वविद्यालयों ने बताया कि नवम्बर महीने से अध्यापन कार्य शुरू होगा।"

यहाँ 'नवम्बर महीने से अध्यापन कार्य शुरू होगा' संज्ञा उपवाक्य है।

5.5.2.2 विशेषण उपवाक्य - जो उपवाक्य किसी दूसरे उपवाक्य में आये संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता प्रकट करता है, उसे विशेषण उपवाक्य कहते हैं । **दूसरे शब्दों में-** जो गौण उपवाक्य प्रधान उपवाक्य की संज्ञा, सर्वनाम या संज्ञा पदबंध की विशेषता बताए, वह विशेषण उपवाक्य कहलाता है ।

पूरे वाक्य में इसका वही काम आता है, जो साधारण वाक्य में किसी विशेषण का होता है।

उदाहरण के रूप में ('मुम्बई कांड' कहानी से, पृ-32) -:

"जयराम रवि जो अभी-अभी हाल ही में नेता बना था।"

यहाँ पर ‘नेता बना था’ विशेषण उपवाक्य है जो कि जयराम रवि की विशेषता बता रहे हैं। कभी-कभी जो के स्थान पर 'जैसे-' 'जितना' इत्यादि 'ज' ही वाले शब्द आते हैं।

5.5.2.3 क्रियाविशेषण उपवाक्य - जो उपवाक्य किसी क्रिया की विशेषता बतलाते हैं, उन्हें क्रिया-विशेषण उपवाक्य कहते हैं।
दूसरे शब्दों में- जो गौण या आश्रित उपवाक्य मुख्य उपवाक्य की क्रिया की काल या स्थान आदि से सम्बद्ध विशेषता बताएँ, उन्हें क्रिया-विशेषण उपवाक्य कहते हैं।

उदाहरण के रूप में (‘शवयात्रा’ कहानी से, पृ-37) -:

“जैसे उसका सोच उसे कहीं बहुत दूर ले जा रहा था, जहाँ दूर-दूर तक भी कोई किनारा दिखाई नहीं पड़ता था।”

यहाँ ‘जहाँ दूर-दूर तक भी कोई किनारा दिखाई नहीं पड़ता था’ क्रियाविशेषण उपवाक्य है। ये उपवाक्य क्रिया का समय, स्थान, कारक, प्रयोजन परिमाण आदि बताते हैं। इनका आरम्भ- जब, जहाँ, क्योंकि, जिससे, अतः, अगर, यद्यपि, चाहे, जो, त्यों, ज्यों, मानों इत्यादि से होता हैं।

5.5.2.4 पूरक उपवाक्य – प्रकार्य की दृष्टि से पूरक उपवाक्य मुख्य उपवाक्य को संरचना के धरातल पर पूरण करता है। पूरक उपवाक्य हिंदी भाषा में कभी संज्ञा पद उपवाक्य में सन्निविष्ट होता है और कभी क्रिया पद उपवाक्य में इसी आधार भेद हो जाते हैं।

1. संज्ञा पद पूरक उपवाक्य 2. क्रिया पद पूरक उपवाक्य

जिस प्रकार संज्ञा पद उपवाक्य में मुख्य उपवाक्य सन्निविष्ट होता है उसी प्रकार क्रिया पद उपवाक्य में भी मुख्य उपवाक्य सन्निविष्ट होता है।

उदाहरण के रूप में ('यह अंत नहीं' कहानी से, पृ-24) -:

"विचार-विमर्श के बाद सभी की राय थी कि तेजभान ताकतवर आदमी है।"

('तीन झूठ' कहानी से, पृ-70) -:

"चूल्हे पर बड़ा-सा तवा रखा, जिस पर एक साथ दो गोल पेसरट्टु बनाए जा सकते थे।"

इन वाक्यों में 'ताकतवर' और 'गोल' पूरक उपवाक्यों के अवशेष हैं। पहले वाक्य में 'ताकतवर' संज्ञा पूरक उपवाक्य का अवशेष है, दूसरे वाक्य में 'गोल' क्रिया पूरक उपवाक्य का अवशेष है। 'ताकतवर' कर्त्ता का विस्तार विशेषण है और 'गोल' मुख्य क्रिया का परिणाम है।

5.6 वाक्य – चयन

वाक्य चयन का अर्थ है – वाक्य में प्रयुक्त होने वाले उपयुक्त पदों का चयन। यह वाक्य – चयन दो प्रकार से होता है :

5.6.1 अर्थ की दृष्टि से वाक्य-चयन : - भाव और भाषा की दृष्टि से किस वाक्य में कौन सा शब्द या पद अत्यंत उपयुक्त है उसका ही प्रयोग करना। यह आर्थिक चयन है आर्थिक चयन मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। किस भाव के लिए कौन शब्द उपयुक्त होगा और किसका प्रयोग होना चाहिए, यह बौद्धिक प्रक्रिया में आएगा। उपयुक्त शब्दों का ही प्रयोग हो, यह वक्ता की कामना रहती है। वह पर्यायवाची शब्दों में से अत्यंत उपयुक्त शब्द का

प्रयोग करता है। जैसे स्त्रीवाचक शब्दों में युवती, नारी, रमणी, कामिनी, वामा, अबला, महिला आदि शब्द हैं। युवती में यौवन है, नारी में नर की संगिनी भाव है। रमणी में रमणत्व या रति, कामिनी में कामभावना, वामा में वक्रता, अबला में असहायत्व मुख्य है। 'अबला का सौंदर्य दर्शनीय है' यह वाक्य असंगत एवं अनुपयुक्त है, क्योंकि दर्शनीय सौंदर्य के लिए युवती, तरूणी या कामिनी शब्द उपयुक्त हैं। इसी प्रकार सूक्ष्मतापूर्वक वाक्य-चयन करना अर्थ – पक्ष है।

उदाहरण के रूप में ('जंगल की रानी' कहानी से) :-

"दरवाजा बाहर से बंद था। असहाय-सी कमली दरवाजा पीटने लगी। तब तक एस.पी. ने उसे दबोच लिया। कमली के भीतर जंगल जाग उठा था। वह जंगली जानवरों की मांद में फंस गयी थी।"[137]

यहाँ पर अबला, युवती और शक्ति सभी का एक साथ संगम देखने को मिलता है।

5.6.2 रूप की दृष्टि से वाक्य-चयन :- इसका सम्बंध रचना से है। व्याकरण और प्रयोग की दृष्टि से वह शब्द उपयुक्त हो। यह योग्यता एवं अंविति का कार्य है। 'न ऊघो का लेना, न माघो का देना', 'न घर का न घाट का' मुहावरों में 'न.........न' का प्रयोग शिष्ट सम्मत है, पर 'मैं घर न जाऊंगा' में 'न' का प्रयोग

[137] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-100

अशुद्ध है यहाँ पर 'नहीं' लगेगा – 'मैं घर नहीं जाऊंगा' । इसी प्रकार व्याकरण सम्मत शब्दों का प्रयोग रूपात्मक चयन है ।

उदाहरण के रूप में ('मूवमेंट' कहानी से) :-

"लगभग रोज की तरह आज फिर वह देर से घर लौटा । जब तक उसने कपडे बदलकर हाथ-मुँह धोए सुनीता ने खाना लगा दिया था । वह खाना खाता रहा और सुनीता घर के काम निपटाती रही ।"[138]

यहाँ पर रोजमर्रा की जिंदगी को दर्शाया गया है और उसी हिसाब से सटीक वाक्य का चयन किया गया है ।

5.7 अन्विति

जब वाक्य के किसी एक संज्ञा पद के लिंग, वचन, पुरुष, कारक आदि व्याकरणिक कोटियों के अनुसार अन्य पदों का भी स्वरूप निर्धारित होता है, तब इसे अन्विति कहते हैं । 'अन्विति' का तात्पर्य है-मेल या अनुरूपता । वाक्य के पदों की क्रिया का उसके लिंग, वचन, काल तथा पुरुष के अनुरूप होना 'अन्विति' कहलाता है । अन्विति को 'अन्वय' भी कहते हैं । अन्विति संबंधी महत्त्वपूर्ण नियम इस प्रकार हैं-

5.7.1 कर्ता-क्रिया की अन्विति

1. जिस वाक्य में कर्ता और कर्म दोनों विभक्ति-रहित हों, वहाँ क्रिया कर्ता के अनुरूप प्रयुक्त होती है,

---

[138] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृ-79

उदाहरण के रूप में ('तलाश' कहानी से, पृ-19) :-

"रामवीर सिंह एक सप्ताह से गेस्ट हाऊस में रह रहे थे।"

('मोहरे' कहानी से, पृ-54) :-

"सोहन बाइक चलाता है।"

('साँग' कहानी से, पृ-29) :-

"बच्चे रेत-मिट्टी उड़ाते, किलकारी मारते, छुआ-छुई करते हो-हल्ला मचाते एक दूसरे के पीछे दौड़ रहे थे।"

('जेल' कहानी से, पृ-116) :-

"वृद्धाएँ कष्ट झेलती हैं।"

2. जहाँ कर्ता विभक्ति-रहित हो किंतु कर्म में परसर्ग लगा हो, वहाँ भी क्रिया कर्ता पद के लिंग, वचनानुसार प्रयुक्त होती है,

उदाहरण के रूप में ('तीन झूठ' कहानी से, पृ-75) :-

"राजेश रमा को चिढ़ाता है।"

('रिहाई' कहानी से, पृ-80) :-

"रीना बिल्ली को डराती है।"

('शवयात्रा' कहानी से, पृ-41) :-

"लड़के मुर्गे को पकड़ रहे हैं।"

('मोहरे' कहानी से, पृ-49) :-

"बच्चे शिक्षक को बुलाने गए हैं।"

5.7.2 कर्म-क्रिया की अन्विति

1. जिन कर्ता-पदों के साथ 'ने' विभक्ति का प्रयोग होता है किंतु कर्म या पूरक परसर्ग-रहित होता है, वहाँ क्रिया कर्म के अनुसार प्रयुक्त होती है, जैसे-

"सोनबती ने रोटी बेली।" (कर्म के अनुसार)

"फकीर पूरा दारू पी गया।" (कर्म के अनुसार)

"मोहन ने पत्र लिखे।" (कर्म के अनुसार)

"नाजिया को बुखार था।" (पूरक के अनुसार)

"मुझे नींद आ रही थी।" (पूरक के अनुसार)

5.7.3 निरपेक्ष अन्विति

1. जहाँ कर्ता और कर्म दोनों विभक्ति-सहित होते हैं, वहाँ क्रिया पुल्लिंग एकवचन में होती है, जैसे -

"प्राचार्य ने शिक्षकों को सभा के लिए बुलाया।"

"बंदरों ने टोपियों को उठाया।"

"अध्यापक ने सभी छात्रों को बुलाया।"

"शीला ने नौकर को बहुत डाँटा।"

2. समान लिंग के विभक्ति-रहित अनेक कर्ता-पद जब 'और' योजक से जुड़े होते हैं तो क्रिया उसी लिंग के बहुवचन में प्रयुक्त होती है, जैसे -

“रागिनी, शीला और सुहाना पानीपुरी खा रही हैं।”

“पिताजी, भाई साहब और जीजा जी बातें कर रहे हैं।”

3. 'या' से जुड़े विभक्ति-रहित कर्ता-पदों की क्रिया अंतिम कर्ता के अनुसार होती है, जैसे-

“शादी में पुनीत या पुनीता जाएगी।”

“चित्र श्यामा या श्याम बनाएगा।”

“राशन शाश्वत या शाश्वती लाएगी।”

4. यदि एकाधिक कर्ता-पदों के लिंग भिन्न-भिन्न हों और वे 'और' योजक से जुड़े हों तो क्रिया पुल्लिंग बहुवचन में प्रयुक्त होती है, जैसे-

“शिवरात्रि के मेले पर बच्चे-बूढ़े, आदमी-औरत और लड़के-लड़कियाँ खूब शोर-शराबा करते हैं।”

“मेरी बहन के पुत्र, पुत्री और पुत्रवधू दिल्ली गए हैं।”

“कुछ दिनों से मेरी बेटी और दामाद आए हुए हैं।”

5. यदि एक से अधिक कर्ता-पद भिन्न पुरुष में हों तो उनका क्रम होगा- 1. मध्यम पुरुष 2. अन्य पुरुष तथा 3. उत्तम पुरुष। ऐसे वाक्यों में क्रिया अंतिम कर्ता के लिंग के अनुसार बहुवचन में होगी, जैसे-

“तुम, तुम्हारे मित्र और मैं एक ही ट्रेन से जाएँगे।”

“तू, तुम्हारे पिता और हम औरतें वहाँ कैसे पहुँचेंगी ?”

6. यदि कर्ता का लिंग अज्ञात हो तो क्रिया पुल्लिंग में प्रयुक्त होती है, जैसे-

“सुनो, कोई आ रहा है।”

“तुम्हारा घर कौन चलाता है ?”

“देखो वहाँ कुछ गिरा पड़ा है।”

7. आदरार्थक एकवचन कर्ता के लिए क्रिया बहुवचन में प्रयुक्त होती है, जैसे-

“गाँधी जी सारी दुनिया में पूज्य हैं।”

“पिताजी आ रहे हैं।”

“लाल बहादुर शास्त्री महान व्यक्ति थे।”

“सुभाष चंद्र बोस तेजस्वी व्यक्ति थे।”

8. दर्शन, आँसू, प्राण, लोग, ओठ आदि शब्दों के साथ क्रिया बहुवचन में प्रयुक्त होती है, जैसे-

“उसके प्राण निकल गए।”

“प्रभु के दर्शन हो गए।”

“मेरी आँखों से आँसू निकलने लगे।”

“लोग तो बात बनाते रहते हैं।”

“तुम्हारे ओठ बहुत सुंदर हैं।”

5.7.4 सर्वनाम और संज्ञा की अन्विति

1. सर्वनाम के लिंग, वचन संज्ञा के लिंग-वचन के अनुसार प्रयुक्त होते हैं, जैसे

“वह (विभा) नाचती-कूदती रहती है।”

“यह (मोहन) स्कूल से भाग आया है।”

“उन्हें (बच्चों को) खेलना भी चाहिए।”

“सुशीला मेरी बहन है। वह आज विद्यालय नहीं जाएगी।”

2. आदरार्थक सर्वनाम का प्रयोग बहुवचन के रूप में होता है, जैसे -

“वे (मामाजी) आ गए हैं।”

“वे (दादीजी) कार में बैठी हैं।”

5.7.5 विशेष्य-विशेषण की अन्विति

1. आकारांत विशेषण का लिंग, वचन अपने विशेष्य के अनुसार परिवर्तित होता है, जैसे-

अच्छा लड़का, अच्छी लड़की, अच्छे लड़के।

शेष विशेषण यथावत रहते हैं, जैसे-

सुंदर लड़का, सुंदर लड़की, सुंदर लड़के।

2. यदि विशेषण एक हो और विशेष्य अनेक हों तो विशेषण के लिंग-वचन उसके निकटवर्ती विशेष्य के अनुसार होते हैं, जैसे -

“मोटी लड़कियाँ और लड़के आकर्षण खो बैठते हैं।”

“मीठी वाणी और उपदेश मन को बहुत भाते हैं।”

“वह गिरती-उठती बड़ी-बड़ी लहरों को देखता रहा।”

5.7.6 संबंध-संबंधी की अन्विति

1. संबंध कारक का लिंग उसके संबंधी के लिंग के अनुसार प्रयुक्त होता है, जैसे-

“वह मोहन का भाई है।”

“वह मोहन की पत्नी है।”

“ये मोहन ये रुपए हैं।”

“यह मेरी पुस्तक है।”

“बच्चे का खिलौना टूट गया।”

यदि कर्ता भिन्न-भिन्न लिंग के हों और 'और' से जुड़े हुए हों तो क्रिया बहुवचन में होगी, जैसे-

“मेरी बेटी और बेटा पढ़ रहे हैं।”

“तुम्हारा भाई और बहन क्या कर रहे हैं ?”

5.8 दलित कहानियों में प्रयुक्त होने वाली अमानक भाषा का प्रयोग

दलित साहित्य की भाषा वह नहीं हो सकती जो सवर्ण साहित्य की भाषा रही है। एक दलित उस दलित समाज का प्रतिनिधित्व करता है जो लंबे समय से शिक्षा के सुख से वंचित रहा है उसके पास न किताबें थीं, न अख़बार, न टीवी-रेडियो, न शिक्षण संस्थानों का सुख जहाँ वह शुद्ध, अलंकृत और समृद्ध भाषा सीखता, वह परिवेश से सीख रहा था। उसका परिवेश भी सीमित था वह पेट भरने के लिए ज़मींदारों के खेत और उनके दिए कामों पर निर्भर था, वहाँ मज़दूरी करके पेट भरना उनकी नियति बना दी गयी थी। उससे वे सब काम लिए जाते थे जो श्रमसाध्य थे या जिन्हें स्वयं करना संपन्नों को अमानवीय और घृणित लगता था। अब रहा दलित भाई-बहनों का ज़मींदारों और उच्च जाति के लोगों के साथ भाषा विनिमय। ये हमेशा श्रोता ही रहे, इनसे सलाह नहीं ली जाती थी, केवल आदेश दिया जाता था। इनसे काम लिया जाता था, पर सम्मान नहीं दिया जाता था। आदेश जब बिना सम्मान के दिया जाए तो भाषा से भाव और संवेदना ख़त्म हो जाती है। चूँकि सवर्ण इन्हें अस्पृश्य और छोटा

मानते थे इसलिए वे इनके लिए सम्मानजनक भाषा का प्रयोग नहीं करते थे। इनकी छोटी-छोटी ग़लतियों पर इन्हें गाली देना आम बात थी। जाति सूचक मुहावरे जो मानवीय संवेदनाओं के ख़िलाफ़ थे और प्रयोग किया जाता था। दलितों ने सवर्ण से सुना सीखा भी तो बस यही हिंसक, अपमानजनक भाषा ही। फिर बताइए इनके जीवन में अंदर बाहर से आए सुंदर शब्द कितने कम थे। पहला संघर्ष तो वर्ण सीखने का था, विद्यालय तक पहुँचने का था, तब जाकर भाषा से परिचय, फिर साहित्य लिखना संभव हो पाता। यह केवल ज्ञान कोश में हाथ डालने का संघर्ष नहीं था अपितु इस पूरी प्रक्रिया में आने वाले सामाजिक, आर्थिक और वैचारिक व्यवधानों से संघर्ष करते हुए अपने को मनोवैज्ञानिक रूप से मज़बूत बनाए रखने की कला सीखना भी था। यह चुनौती बेहद गंभीर थी। भाषा तक पहुँच कर फिर पीड़ादायक स्मृतियों को न्योता देकर कुछ लिख पाना कितना कठिन होगा यह कोई भोगा हुआ साहित्यकार ही बता सकता है। इस साहित्य की भाषा, शिल्प आदि पर चर्चा या आलोचना के लिए हमें नए तरह के औज़ार तलाशने होंगे क्योंकि इनके अनुभव, इनकी संवेदनाएँ, संघर्ष और भाषा तक पहुँच कर ख़ुद की व्यथा दर्ज करने का इनका अनुभव नितांत अलग है, यह शोषितों का साहित्य है इसकी विवेचना या आलोचना एक शोषक करे संभव नहीं है, साथ ही साथ इस साहित्य की भाषा, शिल्प आदि भिन्न होंगे क्योंकि कौन सी भाषा सामाजिक भाषा विनियम में हमने इन्हें दिए, हमें याद रखना चाहिए। इस साहित्य को लिखने वालों ने क़दम-क़दम पर दमन सहे हैं, समाजिक शोषण के विरुद्ध आवाज बुलंद कर क़लम थामा है। एक शिकारी शिकार की पीड़ा को कभी नहीं लिख सकता। शिकार ही शिकार होने का दुःख समझ सकता है। दलित आलोचक ही बता सकता है कि दलित कहानी में यथार्थ का कैसा चित्रण हुआ है ? भोगे हुए आलोचक ही यह समझ और कह पाने की योग्यता भी

रखते हैं। बिना सोचे इस साहित्य के दृष्टि और व्यवहार पर प्रतिक्रिया अव्यवहारिक और असंगत है।

उदाहरण के रूप में ('घुसपैठिये' कहानी से) :-

"कोई एक सीनियर चलती बस में चिल्लाकर कहता है, 'इस बस में जो भी चमार स्टूडेंट है...वह खड़ा हो जाए...फिर उसे धकियाकर पिछली सीटों पर ले जाया जाता है, जहाँ पहले से बैठे सीनियर लात, घूंसों से उसका स्वागत करते हैं।'"[139]

(घुसपैठिये' कहानी से) :-

"सोनकर के बाल पकड़कर अपनी ओर खींचे, 'क्यों बे चमरटे सुनाई नहीं पड़ा हमने क्या कहा था ?' सोनकर ने अपने बाल छुड़ाने की कोशिश की...मैं चमार नहीं हूँ। बालों की पकड़ मजबूत थी। सोनकर कराह उठा। प्रणव मिश्रा का झन्नाटेदार थप्पड़ सोनकर के गाल पर पड़ा...(गाली)...चमार हो या सोनकर...ब्राह्मण तो नहीं हो...हो तो सिर्फ कोटेवाले...बस इतना ही काफी है, प्रणव मिश्रा ने सोनकर को लात-घूंसों से अधमरा कर दिया। पूरी बस में ठहाके गूंज रहे थे...बाबासाहब के नाम पर गालियाँ दी जा रही थीं। प्रणव मिश्रा के इस शौर्य पर उसे शाबाशियाँ मिल रही थीं।"[140]

उपर्युक्त उदाहरणों में गाली-गलौज, जाति के नाम पर कोसना, ब्राह्मण को ऊंचा दिखाना और आरक्षण से आए स्टूडेंट्स को प्रताड़ित करते हुए दिखाया गया है। यहाँ पर पढ़े लिखे लोगों के द्वारा अमानक भाषा का प्रयोग किया गया है।

---

[139] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-16
[140] वही; पृ-16

('यह अंत नहीं' कहानी से) :-

"अर्जी देखते ही तेजभान भड़क उठा, 'भंगी-चमारों की यह हिम्मत ।...क्यूँ बे बिसना तुझे प्रधान इसीलिए बणाया था ?'"[141]

('यह अंत नहीं' कहानी से) :-

"तेजभान ने सचींदर को भी डांटा, 'अबे ! कुछ करना ही था तो हरामजादी को खेत में ही घसीट लेता...खुद ही किसी को मुँह दिखाणे जोगी ना रहती ।'"[142]

यहाँ पर गाली-गलौज के साथ-साथ वर्तनी की अशुद्धियाँ भी दिखती हैं।

'लाठी' कहानी के फग्गन द्वारा अमानक भाषा का प्रयोग हुआ है। फग्गन कहता है – "तै ऐसे गांड में पूंच दबा के रहवेंगे हम ।"

अमानक भाषा के लिए ध्यान देने योग्य बातें :-

1. अमानक भाषा का कोई व्याकरण नहीं है।
2. इस भाषा का प्रयोग प्राय: शिष्ट समाज में नहीं किया जाता है।
3. यह पूरी भाषा अशुद्ध होती है।
4. यह अनपढ़ या अज्ञानी व्यक्ति द्वारा बोली जाती है।
5. इसका प्रयोग प्राय: बोलचाल में नहीं होता।
6. अमानक भाषा असम्माननीय भाषा है।

[141] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृ-26
[142] वही; पृ-27

निष्कर्ष

वाक्यविन्यास भाषा की उस प्रक्रिया और नियम व्यवस्था का अध्ययन करता है जिनसे शब्द एक दूसरे के योग से वाक्य की रचना करते हैं। व्याकरणिक स्तर पर भाषा की मूल इकाई वाक्य है और संदेश-सम्प्रेषण के स्तर पर भाषा की मूल इकाई प्रोक्ति है। वाक्य में व्याकरणिक दृष्टि से कम-से-कम दो अवयवों का होना जरूरी होता है – उद्देश्य और विधेय। पदबंध वाक्य में निर्धारित व्याकरणिक प्रकार्यों को पूरी करने वाली इकाईयाँ हैं। जिनका अस्तित्व केवल वाक्य के अंतर्गत ही सम्भव है। वाक्य रचना प्रक्रिया की घटक इस प्रकार है – पदक्रम, पदबंध, उपवाक्य, वाक्य – चयन, अन्विति। किसी घटक विशेष के प्रभाव में रूप बदलने की प्रक्रिया अन्विति कहलाती है। दलित कहानियों के माध्यम से वाक्यविन्यास का विश्लेषण किया गया है और उदाहरणों के सहयोग से पूरे प्रक्रिया को समझाया है। ष्ठम अध्याय में प्रोक्ति की संरचना – प्रोक्ति और पाठ, संसक्ति, कथन-शैली का विस्तार से विवेचन किया जा रहा है।

षष्ठम अध्याय

दलित कहानियों की प्रोक्ति संरचना

भाषा का काम केवल विचारों या भावों की अभिव्यक्ति मात्र नहीं है बल्कि उसके माध्यम से कही गयी बात को श्रोता तक सम्प्रेषित करना भी है। अपनी बात को सार्थक ढंग से कहने, श्रोता द्वारा उसे ठीक से समझने फिर उसका उचित जवाब देने की प्रक्रिया में एक से अधिक वाक्य सामने आते हैं जो अर्थ और प्रसंग की दृष्टि से एक दूसरे से सम्बद्ध रहते हैं। इस स्थिति में ही दो लोगों के बीच सम्प्रेषण सम्भव हो पाता है। सम्प्रेषण की इस इकाई को ही 'प्रोक्ति' कहा जाता है। भाषा एक बहुस्तरीय संरचना है और इसका हर स्तर एक दूसरे से अधिक्रमित सम्बंधो के आधार पर जुड़ा है। यह स्वनिम से आरम्भ होकर प्रोक्ति के स्तर तक पहुंचती है।

प्रोक्ति

वाक्य

उपवाक्य

पदबंध

शब्द

रूपिम

स्वनिम

सम्प्रेषण के स्तर पर भाषा की मूल इकाई ‘प्रोक्ति’ है वही व्याकरणिक संरचना के स्तर पर भाषा की सबसे बड़ी इकाई ‘वाक्य’ है। भाषा की लघुतम अर्थवान इकाई ‘रूपिम’ है तो भाषा की लघुतम संरचनात्मक (वाग्ध्वनि) इकाई ‘स्वनिम’ है।

‘प्रोक्ति’ के मूल अंग्रेजी शब्द ‘डिस्कोर्स’ (Discourse) और ‘अटरेंस’ (Utterance) है। ‘प्रोक्ति’ दोनों का हिंदी रूपांतर है। ‘अटरेंस’ ‘डिस्कोर्स’ की अपेक्षा सामान्य शब्द है, पर ‘डिस्कोर्स’ पाठ-भाषाविज्ञान का पारिभाषिक है। पिछले वर्षों में पाँचवें दशक तक भाषाविज्ञान में भाषा की सर्वोपरि इकाई वाक्य को ही माना जाता था। पर आधुनिक भाषाविदों ने भाषा की सबसे बड़ी इकाई को वाक्य से आगे तक विस्तारित किया, जिसे ‘प्रोक्ति’ की स्तर की संकल्पना कहा जाता है। प्रोक्ति के दोनों मूल अंग्रेजी शब्दों में ‘Discourse’ का अर्थ जहाँ एक ओर संदर्भ-विशेष में तार्किक अनुक्रम में ‘संलग्न वाक्यों का समुच्चय’ है वहाँ दूसरी ओर इसका अर्थ ‘वार्तालाप’ भी है। किंतु पहला अर्थ इतना व्यापक है जिसके अंतर्गत दूसरे अर्थ का सहज समाहार हो जाता है, जबकि दूसरा अर्थ अपेक्षतया कहीं सीमित है और अपने-आप में एक प्रोक्ति-प्रकार के रूप में ही उपस्थित होने वाला है। इसी प्रकार अंग्रेजी ‘Utterance’ शब्द एक ओर सिर्फ ‘उच्चार’ का अर्थ देता है जबकि दूसरी ओर वह एक ‘पूर्ण सांदर्भिक कथन’ को व्यक्त करता है। वह सांदर्भिक कथन अपनी पूर्णता में कभी-कभी एक वाक्य में, पर प्राय: अनेक वाक्यों में अभिव्यक्ति पाता है। इस दृष्टि से प्रोक्ति के अर्थ-अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए इसे दो विशेषताओं से युक्त माना जाता है। इसकी पहली आर्थी विशेषता वाक्यों के रेखीय अनुक्रम में इसके संयोजित होने की है तथा इसकी दूसरी विशेषता तार्किक स्तर पर सभी खंडों को पूर्ण स्वीकार्य रूप में ग्रहण किये जाने की है।

6.1 प्रोक्ति की अवधारणा

भाषा विज्ञान में व्याकरणिक स्तर की सबसे बड़ी कमाई इकाई वाक्य है। पश्चिमी भाषा वैज्ञानिकों ने भाषा प्रयोग के संदर्भ में यह अनुभव किया कि यह एक वाक्य में वास्तव में बात पूरी नहीं होती। पूरी बात करने के लिए कई वाक्यों का प्रयोग करना पड़ता है। फर्दिना द सस्यूर मानते हैं कि कहना भाषा नहीं है बल्कि बातचीत करना है यही बातचीत को Discourse डिस्कोर्स कहते हैं। हैलिडे ने इसे Text टेक्स्ट कहा है। अंग्रेजी में डिस्कोर्स के अतिरिक्त 'अटरेंस' का प्रयोग मिलता है। अंग्रेजी के ये दोनों शब्द आपस के पर्याय भी है। दोनों दो भिन्न अर्थों में आते हैं। प्रोक्ति शब्द प्र+उक्ति = प्रोक्ति बन जाता है। कुछ भाषाविद प्रोक्ति के लिए 'वार्तालाप' शब्द का भी प्रयोग करते हैं। पर यह शब्द प्रोक्ति की पूरी अर्थवत्ता को समेट नहीं पाता है। डिस्कोर्स के लिए हिंदी में प्रोक्ति का प्रयोग किया गया है। भारतीय काव्यशास्त्र में बहुत पहले इस पर विचार किया गया है। साहित्य दर्पण में आचार्य विश्वनाथ ने वाक्यों के उच्चय को महावाक्य कहा है – 'वाक्योच्चयो महावाक्यम्' । महावाक्य के प्रत्येक वाक्य का अपना अर्थ होता है किंतु जब वे एक-दूसरे से अंगीभाव से जुड़ते हैं तो मिलकर उनमें एक वाक्यत्व आ जाता है और वे एक अर्थ देते हैं।

सोल सपोर्टा के अनुसार, *"भाषाविज्ञान में जहाँ वाक्य बृहत्तर इकाई है। वहाँ शैलीविज्ञान में उससे बड़ी इकाई प्रोक्ति की इकाई विश्लेषण के मूलाधार के रूप में उपस्थित होती है, वाक्यों के बीच के व्यवस्थित सम्बंधो पर नैरंतर्य-मूलक प्रोक्ति पाठ पर विचार किया जा सकता है।"*[143]

---

[143] सोल सपोर्टा; ए प्रोग्राम फार दि डिफिनेशन आफ लिटरेचर; पृष्ठ- 30

पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु' के अनुसार, *"प्रोक्ति एक पूर्ण सांदर्भिक कथन है जिसका निवेश कई वाक्यों में सम्भव है।"*[144]

"भली-भांति सूत्रबद्ध लिखित एवं मौखिक विषय का क्रमबद्ध पारस्परिक चिंतन एवं व्यवस्थामूलक प्रतिपादन भी प्रोक्ति है।"[145]

रेमण्ड चैपमैन के अनुसार, *"एक प्रोक्ति उस अर्थवत्ता और साभिप्रायता को उजागर करती है, जो बिसरे हुए वाक्यों में उजागर नहीं हो सकती, शब्दों का एक अनुक्रम जो एक अस्वीकार्य वाक्य का प्रकटन होता है, अथवा एक पूर्ण रचना में स्वीकार्य हो सकता है।"*[146]

"भाषिक सम्पादन की जो सार्थक इकाई जो अपनेआप में सम्पूर्ण है वह भी प्रोक्ति कहलाती है।"[147]

कृष्ण कुमार गोस्वामी के अनुसार, *"प्रोक्ति एक वाक्योपरि इकाई है, वाक्योपरि इकाई से अर्थ है- वाक्यों की एक व्यवस्थित कड़ी, जिस प्रकार वाक्य शब्दों की कड़ी है, उसी प्रकार वाक्यों की हर कड़ी प्रोक्ति नहीं कहला सकती। ये वाक्य एक दूसरे से जुड़े होते हैं और उनका यह संयोजन या संसक्त एवं तर्कपूर्ण होता है।"*[148]

तर्कपूर्ण क्रमयुक्त और आपस में आंतरिक रूप से सुसंबद्ध, एकाधिक वाक्यों की ऐसी व्यवस्थित इकाई को प्रोक्ति कहते हैं जो संदर्भ-विशेष में अर्थद्योतन की दृष्टि से पूर्ण हो। अर्थात्-

- प्रोक्ति में एक से अधिक वाक्य होते हैं।

---

[144] पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु'; शैलीविज्ञान प्रतिमान और विश्लेषण; पृष्ठ- 63

[145] वही; पृष्ठ-64

[146] रेमण्ड चैपमैन; बियोंड दि स्टेटस लिंग्विस्टिक्स एण्ड लिटरेचर; पृष्ठ- 102

[147] वही; पृष्ठ- 103

[148] कृष्णा कुमार गोस्वामी; शैक्षणिक व्याकरण और व्यावहारिक हिंदी; पृष्ठ- 96

- इन वाक्यों का क्रम तर्कपूर्ण होता है।
- ये आंतरिक रूप से आपस में सुसंबद्ध होता है।
- ये वाक्य आपस में मिलकर, संदर्भ-विशेष में अर्थ की दृष्टि से पूर्ण होते हैं।
- ये वाक्य तर्कपूर्ण क्रमयुक्तता, आपस में सुसंबद्धता तथा अर्थद्योतन की दृष्टि से पूर्णता के कारण एक इकाई के रूप में होते हैं।

उदाहरण के रूप में ('घुसपैठिये' कहानी से) -:

''सुभाष सोनकर का उदास चेहरा राकेश की आँखो के सामने बार-बार आ रहा था। उसे लगा फोन उसकी पकड़ से फिसल रहा है। उसकी स्मृति में वह दिन दस्तक देने लगा था, जब रमेश चौधरी सुभाष सोनकर और उसके मित्रो को लेकर आया था।''[149]

('शवयात्रा' कहानी से) -:

''सुरजा का एक बेटा भी था, जो दस-बारह साल की उम्र में ही घर छोड़कर भाग गया था। कुछ साल इधर-उधर भटकने के बाद उसे रेलवे में नौकरी मिल गयी थी। इस नौकरी ने ही उसे पढ़ने-लिखने की ओर आकर्षित किया था। किसी तरह उसने हाईस्कूल करके तकनीकी प्रशिक्षण लिया और रेलवे में ही फिटर हो गया था। नाम था कल्लू, जो अब कल्लन हो गया था।''[150]

('तलाश' कहानी से) -:

---

[149] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 13
[150] वही; पृष्ठ- 36

"एक सप्ताह से रामवीर सिंह अपने लिए एक सुविधाजनक मकान किराए पर ढूंढ़ रहे थे। ऐसा मकान जो ज्यादा बड़ा न हो किंतु दो कमरों का सेट जरूर हो। जिनमे एक कमरा बेड रूम और दूसरा ड्राइंग रूम के रूप में काम आ सके। और सबसे बड़ी बात यह कि मकान में किसी तरह का शोर या डिस्टर्बेंस न हो ताकि उनका लिखना-पढ़ना निर्बाध चल सके। कई मकान वह अब तक देख चुके थे लेकिन कही पर भी बात बन नहीं सकी थी। कुछ मकान उनको पसंद नहीं आए थे और जो एक-दो पसंद आए थे उनके मकान मालिकों ने ऐसी-ऐसी शर्तें रखी थी जो उनको स्वीकार्य नहीं थी।"[151]

('गिरवी' कहानी से) -:

"अब शास्त्री को कोई उधार नहीं दे रहा था- शास्त्री ने भी पक्का निर्णय लेते हुए ओबिलेसु से पूछा- 'पैसे ?'

'इतनी बड़ी रकम ?'

'हाँ !'

'कैसे चुकाओगे ?' ओबिलेसु ने पूछा

'हर महीने की आमदनी से थोड़ा-थोड़ा कर चुका दूंगा।'

'आमदनी से वैसे भी कुछ नहीं बचा पा रहे हो।'

'मैं सम्भाल लूंगा।'

ओबिलेसु को हर्ष के साथ आश्चर्य हुआ।

'कुछ गिरवी रखो तो ही 10 हज़ार दूंगा।' ओबिलेसु ने हिम्मत जुटाकर कहा।"[152]

---

[151] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 19

[152] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 26

अत: इन उदाहरणों के साथ हम प्रोक्ति का प्रयोग देख सकते हैं। वाक्यों की सुसंबद्ध ऐसी इकाई को प्रोक्ति कहते हैं जो अर्थ की दृष्टि से पूर्ण हो। इस प्रसंग में निम्नांकित बाते भी संकेत्य हैं :-

क) प्रोक्ति में प्राय: एकाधिक वाक्य होते हैं, किंतु कभी-कभी एक वाक्य की भी प्रोक्ति होती है, यद्यपि अपवादत:।

उदाहरण के रूप में ('प्रमोशन' कहानी से) -:

"स्वीपर था, अब नहीं हूँ...अब मैं मजदूर हूँ...कामगार"[153]

रूप में रखे तो यह भी एकवाक्यीय प्रोक्ति है।

यो 'आ' एक ध्वनि भी है , एक अक्षर भी है, एक शब्द भी है, एक वाक्य भी है तथा अपवादत: कुछ स्थितियों में एक प्रोक्ति भी। प्रोक्ति के वाक्य ऊपरी तौर पर सुसंबद्ध हो या नहीं, आंतरिक रूप में अवश्य सुसंबद्ध होते हैं। यो सामान्यत: तो प्रोक्ति के वाक्य बाह्यत: भी आपस में संबद्ध होते हैं, किंतु कभी-कभी ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं जब वाक्य आपस में ऊपरी तौर पर बिल्कुल भी जुड़े नहीं होते।

जैसे ('सांग' कहानी से) -:

"दिन लगभग ढल चुका था। संध्या की सुरमई चादर चारों ओर फैलने लगी थी। दिन-भर की दौड़-धूप के बाद अपने नीड़ को लौटते पक्षियों के कलरव और खेत जोतकर घर लौटते बैलों के गले में बजती घंटियों की आवाज़ से वातावरण में मधुर संगीत-सा घुल रहा था |"[154]

[153] घुसपैठिये; ओमपकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 48

[154] तलाश; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 29

इस प्रोक्ति में तीनों वाक्य बाहर से अलग-अलग हैं, किंतु भीतर से जुड़े हैं, क्योंकि सभी अपने-अपने ढंग से एक ही बात 'शाम हो चली है' को ध्वनित कर रहे हैं, तीन बिम्बों के द्वारा।

ख) प्रोक्ति अपने छोटे रूप में एक पैराग्राफ, एक छंद या एक दृश्य (नाटक का) भी हो सकती है, एक अध्याय या अंक भी हो सकती है तथा अपने बृहत्तम रूप में एक पूरी कहानी, पूरा उपन्यास, पूरा एकांकी या नाटक, पूरा निबंध, पूरी कविता, पूरा खंडकाव्य या पूरा महाकाव्य भी।

यहाँ एक पैराग्राफ के रूप में ('नो बार' कहानी) में देखते हैं -:

''करीब डेढ़ सप्ताह बाद ही उसे अपने पत्र का जवाब मिल गया। लड़की वालों ने उसे अपने घर आमंत्रित किया था। वह उनके घर पहुंचा। लगभग एक घण्टे तक वह वहाँ रहा। उसने लड़की को देखा। जैसा विज्ञापन में उल्लेख था लड़की बिल्कुल वैसी ही थी बल्कि उससे भी कही ज्यादा सुंदर और आकर्षक। उसे लड़की एकदम भा गयी थी। उसका मन हुआ कि वह तुरंत हाँ कर दे। लेकिन लड़की के पिता ने जैसे उसके मन की बात भांप ली थी, उन्होने कहा, ''देखिए राजेश जी, हम बड़े खुले विचारों के आदमी हैं। जाति-पाति, धर्म-सम्प्रदाय किसी प्रकार के बंधन को हम नहीं मानते। ये सब बाते पिछड़ेपन की प्रतीक हैं। हमारे परिवार में जितनी भी शादियाँ हुई हैं वे सब अंतर्जातीय हुई हैं। अब देखो, मैं ब्राह्म्ण हूँ और मेरी पत्नी कायस्थ परिवार से है। हमारी बड़ी बेटी की शादी अग्रवाल लड़के के साथ हुई है और हमारे घर में जो बहू आयी है वह पंजाबी खत्री है। हमारी नजर में लड़का और लड़की एक-दूसरे को अच्छी तरह देखे, परखे और बातचीत करे। यदि वो दोनों एक-दूसरे को पसंद करते हैं, एक-दूसरे से संतुष्ट होते हैं और उन्हे लगता है कि वे एक-दूसरे के साथ एडजस्ट कर सकते हैं तो बस्स वह काफी है। इसके अलावा सब चीजे गौण हैं। वैसे भी विवाह जन्म भर का बंधन

होता है, इसके बारे में निर्णय अच्छी तरह जांच-परख करके और पूरी तरह संतुष्ट होने के बाद ही लिया जाना चाहिए। इसमे किसी तरह की कोई जल्दबाजी नहीं की जानी चाहिए। आप दोनो पढ़े-लिखे और समझदार हैं। अपना भला-बुरा अच्छी तरह समझते हैं। इसलिए हम चाहेंगे कि कोई भी निर्णय लेने से पहले आप दोनो आपस में बातचीत करे, एक-दूसरे को जाने-समझे। इसके लिये आप पूरा समय ले। एक बार नहीं दो बार, तीन बार, चार बार आप मिले लेकिन जो भी निर्णय ले पूरी संतुष्टि के बाद ही ले"।"[155]

ग) प्रोक्ति मूलत: बातचीत है, इसीलिए वक्ता, श्रोता, कथ्य (संप्रेष्य या संदेश), संदर्भी और मौखिक सरणि ये पाँच प्रोक्ति के घटक हैं। यदि वह लिखित या पाठ है तो पाँचवा घटक 'लिखित सरणि' होगा।

उदाहरणार्थ ('षड्यंत्र' कहानी से) -: "*'क्या हुआ ?' किसी ने पूछा।*

'दलित वर्ग एक जुट हो रहा है।'

'तो क्या ?'

'उच्च-वर्ग डूब जाएगा।'

सुनकर सब कांप गए और क्रोधित भी हुए।

'दलित वर्ग का विभाजन करना होगा।'

'अवश्य'

'कौन कर सकता है ?'

'कोई तो कर ही सकता है।'"[156]

---

[155] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 37

[156] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 61

इस उदाहरण में हम प्रोक्ति के पाँचों घटक को देख सकते हैं।

घ) प्रोक्ति का निर्णय आकार से नहीं प्रकार्य से होता है। जब तक उसमें पूरी बात को कहने की क्षमता न हो, बड़ी या छोटी होने के आधार पर उसे प्रोक्ति नहीं कहा जा सकता।

उदाहरण के रूप में ('बिट्टन मर गई' कहानी से) -:

''उसका ट्रांसफर हो गया है, किसी को भी यह खबर अच्छी नहीं लगी थी। सबके चेहरे लटक से गए थे। हालांकि सब जानते थे कि वह ट्रांसफर के लिए प्रयास कर रहा था। लेकिन एक सप्ताह के अंदर ही वह चला जाएगा इसके लिए कोई तैयार नहीं था।'' [157]

इस उदाहरण में आकार तो है पर पूरी बात कहने की क्षमता नहीं है।

ङ) प्रोक्ति मूलत: संप्रेषण की एक पूर्ण इकाई होती है। यो यह सापेक्ष होती है। उदाहरण के लिए, 'प्रत्येक उपन्यास', उसका 'प्रत्येक अध्याय' तथा 'प्रत्येक अध्याय' के 'अभिव्यक्ति की दृष्टि से पूर्ण पैराग्राफ',- ये सभी प्रोक्ति हैं, किंतु 'उपन्यास की पूर्णता' तथा 'अध्याय की पूर्णता' और 'अध्याय के एक पैराग्राफ की पूर्णता' एक प्रकार की नहीं हो सकती।

च) कभी-कभी वाक्य अनेकार्थी होता है, किंतु प्रोक्ति उसे अनेकार्थी से एकार्थी बना देती है।

जैसे ('तीन झूठ' कहानी में) -:

---

[157] तलाश जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 58

" 'नाव भारी है।' के दो अर्थ हैं, किंतु 'नाव भारी है, इसमे मोगरे के फूल हैं, टोकरे में मछलियाँ मानो एक दूसरे का मजा ले रहे हों।' "[158] में वह एकार्थी है। इस प्रकार प्रोक्ति वाक्य को अनेकार्थी से एकार्थी बना देता है।

प्रोक्ति अनेक वाक्य मिलकर सर्वांग रूप से जब इकाई रूप में बन जाते हैं तब वह इकाई ही वाक्यबंध या प्रोक्ति कहलाती है। वाक्य रचना के ऊपर का स्तर वाक्यबंध प्रोक्ति है। इस प्रकार वाक्य से बड़ी इकाई प्रोक्ति है। वाक्य से दीर्घतर इकाई एक अनुच्छेद, काव्य के चरण या छंद हो सकती है, यह अनुच्छेदों का समूह परिच्छेद में बदल जाता है। इन्ही परिच्छेदों का समूह पूरी रचना की इकाई में, यह कहानी उपन्यास इत्यादि कुछ भी हो सकता है। छंद मिलकर पूर्ण कविता का रूप धारण कर लेते हैं। कभी-कभी एक छंद ही पूर्ण कविता का रूप धारण कर लेता है। अर्थात एक छंद कविता बन जाती है। इस प्रकार पूरा उपन्यास, कहानी या कविता को प्रोक्ति कहा जा सकता है। लैन कुछ वाक्यों में अधिक वाक्यों के समूह का विश्लेषण सम्भव नहीं है।

प्रोक्ति वाक्य के ऊपर के स्तर की इकाई है। वक्ता का संदेश और श्रोता तक इस संदेश को सम्प्रेषित करने वाला भाषिक व्यापार वाक्योपरि स्तर का होता है। इस वाक्योपरि स्तर की सार्थक इकाई को प्रोक्ति कहते हैं। वाक्यपूर्ण नहीं होते हैं, वाक्य को भाषा की सर्वाधिक इकाई नहीं माना जा सकता है। भाषिक सम्पादन ही वह सार्थक इकाई है जो अपने आप में पूर्ण है वह प्रोक्ति कहलाती है। प्रोक्ति अपने आप में पूर्ण होती है। वाक्य स्तर पर कई वाक्य परस्पर जुड़े होते हैं। उनका यह परस्पर संयोजन सार्थक एवं तर्कसंगत होता है। इसी सार्थकता

---

[158] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 68

के कारण प्रोक्ति अपने आप में पूरी तरह पूर्ण होती है, तथा उसकी इसी पूर्णता के कारण उसको वाक्यातीत स्तर की स्वतंत्र एवं सार्थक इकाई के रूप में स्वीकार किया जाता है।

विचारों का सामूहिक सम्प्रेषण ही प्रोक्ति है। हम यह मानकर चलते हैं कि प्रोक्ति का क्षेत्र भाषाविज्ञान है फिर अग्रप्रस्तुति का विचार बहु-आयामी सैद्धांतिक विचारों के अनुकूल हैं। भाषाविज्ञान में वाक्य को सबसे ऊपरी स्तर की इकाई माना गया है। पर यह बात स्पष्ट है कि भिन्न-भिन्न वाक्यों में मानवीय भावों एवं विचारों का सम्प्रेषण सर्वथा सम्भव नहीं है। यह वाक्य की इकाई से ही सम्भव हो सकता है। यही कारण है कि शैली वैज्ञानिक वाक्यातीत स्तर को ही महत्तम इकाई मानते हैं। किसी भी मूल पाठ को पूर्ण साभिप्रायता एवं सार्थकता एवं उच्चता एक प्रोक्ति ही प्रदान कर सकती है। एक साधारण भाषा-वैज्ञानिक के लिए भाषा के बृहत्तर इकाई जहाँ पर वाक्य है, वह साहित्यिक पाठ पर विचार-विमर्श करने वाली शैली वैज्ञानिकों के लिए भाषा की सर्वोपरि इकाई प्रोक्ति ही है।

प्रोक्ति एक सम्पूर्ण भाषिक इकाई है जो रचना की साभिप्रायता से जुड़ी रहती है। प्रोक्ति की भी अपनी एक संरचना होती है, जिस प्रकार शब्दों की श्रृंखला से वाक्य की संरचना होती है, उसी प्रकार वाक्यों की श्रृंखला को प्रोक्ति कहते हैं परंतु प्रत्येक वाक्य की श्रृंखला प्रोक्ति नहीं होती। प्रोक्ति में वाक्यो के साथ-साथ संदेश भी निहित रहता है। इस प्रकार प्रोक्ति वाक्योपरि स्तर की एक ऐसी इकाई है जिसके कथ्य में आंतरिक संसक्ति तथा वाक्यों में संदर्भपरक और तर्कपूर्ण अनुक्रम रहता है प्रत्येक वाक्य ऐसे तत्वों को उजागर करता है जिसमे शब्द होते हैं, यह केवल वाक्यों की संसक्त कड़ी नहीं होती इसमे एक संदेश भी विद्यमान रहता है। संदेश से अभिप्राय प्रत्येक अभिव्यक्ति में लेखक का कोई-न-कोई लक्ष्य होता है, यदि

लक्ष्य भिन्न होगा तो वाक्यों की संसक्ति भी भिन्न होती है। आंतरिक संगति के कारण प्रोक्ति स्वयं पूर्ण होती है।

प्रोक्ति सम्पूर्ण और अपने आप में पूर्ण होती है जो साधारणतया एक से अधिक वाक्यों से निर्मित होती है। प्रोक्ति भाषिक संरचना की स्वतंत्र और स्वायत्व इकाई है। किसी भी अन्य विश्लेषण प्रणाली की भांति प्रोक्ति भी शब्द स्तर यानी ऊपरी स्तर से शुरू होकर अर्थ के गहन स्तर तक पहुंचती है।

प्रोक्ति की अपनी संरचना होती है। एक से अधिक वाक्यों के मेल से प्रोक्ति का निर्माण नहीं होता। प्रोक्ति अपने आप में एक सार्थक इकाई है, जो रचना की साभिप्रायता को खोलती है तथा उसको उजागर भी करती है।

उदाहरण के लिए भाग – क ('माँ' कहानी से) -:

"उमा रमा को अपनी कथा सुनाना शुरु करती है। उमा अपने माता-पिता की इकलौती बेटी थी। उमा का जन्म अपने नाना-नानी के घर में हुआ था। वह एक छोटा गाँव है।...रमा! गाँव में मेरी बहुत सी सहेलियाँ थी। हम सब मिलकर हमेशा खेलते थे |"[159]

भाग – ख ('कूड़ाघर' कहानी से) -:

"सुरेश नदी में डूब रहा था। वह अपनी सहायता के लिए चिल्लाया। एक आदमी ने उसे चिल्लाते हुए सुना और नदी में डूबते हुए देखा। उसे बचाने के लिए वह आदमी नदी में कूद पड़ा |"[160]

---

[159] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 79

[160] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 53

उदाहरण – क में जो छह वाक्य दिए गए हैं वे एक ही व्यक्ति उमा के बारे में कुछ बता रहे हैं किंतु इनका आपस में कोई सम्बंध नहीं हैं। वाक्य एक में उमा का अपना कथा सुनाना, वाक्य दो में अपने माता-पिता की इकलौती बेटी बताना, वाक्य तीन में अपने जन्म के बारे में बताना, वाक्य चार में गाँव का विवरण देना, वाक्य पाँच में सहेलियों कि संख्या बताना और वाक्य छह में यह दिखाना कि सब साथ में मिलकर खेलते थे।

उदाहरण – ख में पाँच वाक्य हैं किंतु उनमें नियमितता है और वे असंबद्ध इकाईयों के रूप में न आकर एक इकाई या अनुच्छेद के रूप में परस्पर जुड़े हुए हैं। इन सभी वाक्यों का एक ही संदेश है। सुरेश नदी में डूब रहा था और चिल्ला रहा था। उसे डूबते हुए देखकर एक आदमी नदी में कूद पड़ा। इन वाक्योपरि स्तर की इकाई में वह उसे आदि सर्वनाम वाक्यों में एक आदमी ने सुरेश को उप-वाक्य की आवश्यकता नहीं समझी गयी और उसका लोप हो गया। इस प्रकार डूबते हुए सुरेश को आदमी द्वारा बचाया गया संदेश का सम्प्रेषण इस इकाई के संदर्भपरक और तर्कपूर्ण अनुक्रम में आए वाक्यों से हो रहा है। संदेश की आंतरिक संरचना और भाषिक इकाईयों की अन्विति से ये वाक्य एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। निल्स एरिक एंक्विस्ट ने भी प्रोक्ति को महत्वपूर्ण स्वीकार किया है। क्योंकि भाषाविज्ञान की बृहत्तर इकाई वाक्य की सीमा में पाठ कि सम्पूर्ण व्याख्या नहीं की जा सकती। इसके लिए वाक्य से परे जाकर पाठ के विभिन्न अंशो के बीच वाक्यबंधीय अभिलक्षणों को संदर्भित करने की आवश्यकता पड़ती है।

प्रोक्ति की इकाई विश्लेषण के मूलाधार के रूप में उपस्थित होती है। शैलीविज्ञान में वाक्य से बृहत्तर स्तर के रूप मे प्रोक्ति के स्तर को महत्वपूर्ण माना है। शैलीविज्ञान तब तक अपने लक्ष्य में सार्थकता को प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि वहाँ के आगे की इकाई को

महत्व नहीं दिया जाता, भाषिकीय निष्पत्ति की इस वाक्यातीत इकाई को प्रोक्ति भी कहा जाता है।

प्रोक्ति में निम्नलिखित विशेषताएं पाई जाती हैं –

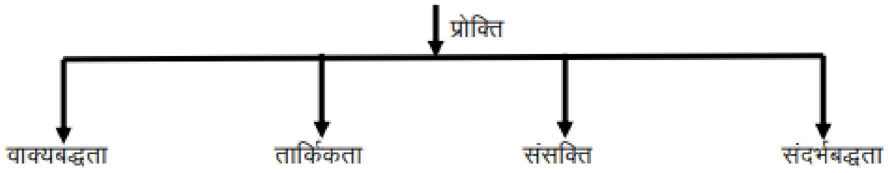

प्रोक्ति में वाक्यबद्धता होती है। प्रोक्ति एक से अधिक वाक्य में संरचित होती है। एक से अधिक वाक्यों का प्रयोग प्रोक्ति में पूर्ण अर्थवत्ता देने के लिए किया जाता है। प्रोक्ति में तार्किकता विद्यमान रहती है। किन्हीं भी एक से अधिक वाक्यों को हम प्रोक्ति की संज्ञा नहीं दे सकते हैं। केवल उन्हीं एकाधिक वाक्यों को प्रोक्ति की संज्ञा देंगे जिसमें तार्किकता यानी कथ्य में तारतम्य है। इधर-उधर से एकत्रित वाक्यों को प्रोक्ति की संज्ञा नहीं दे सकते। कहीं से भी शुरू एकाधिक वाक्यों को प्रोक्ति नहीं कहा जा सकता। वाक्यों में निश्चित संदर्भ रहता है। निश्चित संदर्भ का आधार लिए ही प्रोक्ति आगे बढ़ती है।

6.2 प्रोक्ति और पाठ

'प्रोक्ति और पाठ' के स्वरूप को लेकर भाषाविदों में कई मत रहे हैं। सम्बद्ध एवं तर्कसंगत रूप से अन्वित वाक्यों को पाठ के अंतर्गत माना गया है और उनके अध्ययन को 'पाठ विश्लेषण' कहा गया है। दूसरी ओर सामाजिक अर्थों, कार्यव्यापारों और वाक्यों के बीच के सम्बंधों को 'प्रोक्ति' कहा गया है। इसके अध्ययन को 'प्रोक्ति विश्लेषण' कहा गया है। वस्तुत: 'प्रोक्ति और पाठ' इन दोनों में कोई विशेष अंतर नहीं है। जीवन में वास्तविक

प्रयोग के संदर्भ में भाषा अपने आप में सुनियोजित ताने-बाने जैसी बुनी होती है और उससे होने वाले सम्प्रेषण व्याकरणिक तथा कोशगत अर्थ से ऊपर के स्तर का होता है। अत: यह कहा जा सकता है कि यदि व्याकरणिक संरचना की दृष्टि से वाक्य भाषा की महत्तम इकाई है तो सम्प्रेषणीयता की दृष्टि से प्रोक्ति भाषा की महत्तम इकाई है।

अत: यह मानना ठीक होगा कि प्रोक्ति एक वाक्योपरि इकाई है। यहाँ 'वाक्योपरि' का तात्पर्य वाक्यों की एक व्यवस्थित कड़ी से है। जैसे वाक्य शब्दों की कड़ी है वैसे ही प्रोक्ति वाक्यों की कड़ी है किंतु शब्दों की हर कड़ी वाक्य नहीं होती वैसे ही वाक्यों की हर कड़ी प्रोक्ति नहीं हो सकती। प्रोक्ति के अंतर्गत वाक्यों में परस्पर रूपात्मक संसक्तता का होना आवश्यक है अर्थात वाक्यों का अनुक्रम विषय के अनुरूप होता है। इस तार्किक संसक्ति तथा अर्थ संगति के कारण प्रोक्ति भाषिक व्यवहार की स्वायत्त व स्वतंत्र इकाई मानी जाती है।

भाषा एक प्रकार की सामाजिक संस्था है। हमारे सामाजिक व्यवहार भाषा के ही माध्यम से सम्पन्न होते हैं, जिसमें वक्ता और श्रोता के बीच संवाद या वार्तालाप होता है यह अनेक प्रकार का हो सकता है जैसे-

दो व्यक्तियों का परस्पर संभाषण, अथवा एक व्यक्ति बोले और बहुत लोग सुने जैसे कक्षा में अध्यापक और छात्रगण, अथवा किसी संत का आध्यात्मिक प्रवचन और सामने बैठे हजारों श्रोतागण अथवा चुनावी सभा में प्रत्याशी का भाषण, या कई लोग मिलकर किसी एक व्यक्ति से पूछताछ कर रहे हों। भाषिक व्यवहार के घटित होने में कई बातें शामिल रहती हैं जैसे-

वक्ता और श्रोता के बीच स्थिति कैसी है। उनकी उम्र, व्यवसाय, जाति/वर्ग, धर्म, शिक्षा, स्थान, उद्देश्य आदि भी प्रोक्ति की प्रकृति को निर्धारित करते हैं। साथ ही पराभाषिक तत्व

जैसे हावभाव, आंगिक संचालन, चाक्षुष सम्पर्क, वक्ता श्रोता के बीच की दूरी तथा विविध प्रकार के सुर और अनुतान भी प्रोक्ति को प्रभावित करते हैं।

उदाहरण के लिए ('ब्रह्मास्त्र' कहानी से) -:

""आंटीजी, आप सबको मेरे घर आना है शादी में।"

"जरूर आएंगे बेटा...हम सबकी तरफ से तुम्हें बधाई," माँ ने खुश होते हुए कहा।

"बधाई नहीं आंटीजी, आपका आशिर्वाद चाहिए," अरविंद ने अपनापन दिखाया।

"खुश रहो बेटा...इसी तरह हँसते-खेलते रहो," माँ ने आशीष दिया।

कंवल को चुप देखकर अरविंद ने फिर से ठहाका लगाया, "तुम इतने खामोश क्यों हो गये।"

"नहीं...कोई खास बात नहीं...बैंक में कुछ प्राबलम है...पता नहीं छुट्टी मिलेगी भी या नहीं। मैनेजर ने कर्फ्यू लगा रखा है," कंवल ने निराशा से कहा।

"कंवल, चाहे जो भी हो, तुम्हें बारात में चलना है," अरविंद ने जिद की।

"अरविंद, मैं खुद इस दिन का इंतजार कर रहा था...लेकिन इस मैनेजर का क्या करें ?" कंवल ने दुखी मन से कहा।

"मैं कुछ नहीं जानता...तुम्हें बारात में चलना है...तुम साथ नहीं होगे तो...मेडिकल लीव ले लेना...अपना डॉक्टर नेगी कब आएगा," अरविंद ने जोर देकर कहा।

अरविंद का पक्ष लेते हुए मां ने कहा, "कंवल बारात में जाएगा, परेशान मत हो।" माँ ने अरविंद को आश्वस्त किया।"[161]

---

[161] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 82

इसमें संदर्भ, वाक्यों के तार्किक अनुक्रम तथा अर्थ-संगति से पता चलता है कि अरविंद अपनी शादी के लिए सबको आमंत्रित कर रहा है। वह अपने दोस्त को अपनी शादी में देखना चाहता है इसलिए जिद कर रहा है कि उसे तो कैसे भी करके शादि में आना ही है। दोस्त को छुट्टी न मिलने की दिक्कत से उसे छुट्टी लेने के लिए तरीके बताता है।

इसी प्रकार एक और उदाहरण देखते है ('तीन झूठ' कहानी से) -:

"'मैं तुझे एक फोटो देती हूँ, क्या उसका चित्र बनाओगे ?' पूछती हुई वह अंदर गयी और संदूक खोलने की आवाज आयी।

'कौन सी फोटो जरा देखूं तो...क्या आपकी शादी से पहले की फोटो है ?' वह फोटो लेता हुआ बोला। साड़ी मुँह पर रखे अप्पलरानी हँसने लगी।

'क्यों हँस रही हो ?'

'वह मेरी बहन की फोटो है।'

'अरे! बिल्कुल आप जैसी ही है।'

'अच्छी है ?'

'पूछना जरूरी है!!!'

'शादी करोगे ?'"[162]

संदर्भपरक तुलनीयता में स्थिति विशेष, परिवेश, उद्देश्य, प्रतिपादित विषयवस्तु आदि का विशेष महत्व होता है। इसमें इस बात ध्यान दिया जाता है कि कौन, किससे, कहाँ, क्या और क्यों कह रहा है। इन उदहरणों पर ध्यान दें -:

---

[162] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 73

(i) My Father has gone to Bombay.

(ii) My servant has gone to Bombay.

इन वाक्यों का हिंदी रूपांतरण इस प्रकार होगा -:

(i) मेरे पिता जी बम्बई गए हैं।

(ii) मेरा नौकर बम्बई गया है।

संरचनात्मक स्तर पर अंग्रेजी के दोनों वाक्य समान हैं। किंतु हिंदी में कुछ भिन्नता मिलती है :- सर्वनाम 'मेरे' और 'मेरा' तथा क्रियापद 'गए हैं' और 'गया है' का अंतर संदर्भपरक है। हिंदी का पहला (i) वाक्य आदरसूचक है।

इसी प्रकार उदाहरण के रूप में ('प्रमोशन' कहानी से) जो कि सबसे पहले हंस पत्रिका में 1997 में छपी थी। इस उदाहरण में सुपरवाइजर और अब्दुल कादिर के बीच के हुए वार्तालाप को हम देखते हैं -:

""सुपरवाइजर ने अब्दुल कादिर को इशारे से बुलाया। अब्दुल कादिर सुपरवाइजर का चहेता वर्कर था। उसे एक किनारे ले जाकर उसने पूछा, "अब्दुल...दूध नहीं लेने का क्या चक्कर है ?"

"साहब, जाने दो...नहीं लेते हैं, तो न ले। आपने तो मंगा दिया है, आपकी जिम्मेदारी खत्म।" अब्दुल ने भी टालने की कोशिश की।

"नहीं...लेकिन पता तो चले ?" सुपरवाइजर ने जोर दिया।

"साहब, सुरेश को इस काम पर मत लगाइए," अब्दुल ने कहा।

"लेकिन क्यों ?" सुपरवाइजर ने ताज्जुब से पूछा।

"अब आपको क्या बताएं..." अब्दुल ने टालना चाहा।

"खुलकर बोलो...बात क्या है ?" सुपरवाइजर ने और अधिक जोर देकर पूछा।

"साहब, आपको नहीं पता...सुरेश स्वीपर है...उसके हाथ की चीज कोई कैसे खा-पी सकता है," अब्दुल ने आखिर रहस्य खोल ही दिया।"[163]

इसमें कर्मचारी अब्दुल कादिर सुपरवाइजर के प्रति अत्यधिक आदरभाव की अभिव्यक्ति हुई है, साहब शब्द के प्रयोग से। अत: यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक स्तरभेद से भाषिक व्यवहार में भी स्तरभेद होता है। भाषिक सम्प्रेषण के दो प्रचलित माध्यम है: मौखिक तथा लिखित। दोनों ही प्रकार से भाषिक सम्प्रेषण की पूर्णता के लिए दो तत्त्वों का होना अपरिहार्य है –

1. भाषिक सम्प्रेषण के अंतर्गत भाषा-पक्ष को नियंत्रित करने के लिए एक नियम संहिता होती है जो हर भाषा की अलग-अलग होती है। इस नियम संहिता का ज्ञान वक्ता (लेखक) तथा श्रोता पाठक दोनों को होना चाहिए अन्यथा ठीक-ठीक संप्रेषण नहीं हो पाएगा।
2. भाषिक संप्रेषण के संदर्भ का समुचित ज्ञान भी वक्ता (लेखक) तथा श्रोता (पाठक) दोनों को होना आवश्यक है।

भाषा में शब्दों का अनेकार्थी और पर्यायवाची होना भाषा की सामान्य विशेषता है। शब्दकोशों में शब्द के कई अर्थ और नमूने के तौर पर उनके अलग-अलग प्रयोग दिए रहते हैं। जैसे 'अंक' शब्द का अर्थ 'संख्या' भी है और 'गोद' भी है। शब्द के विशिष्ट प्रयोग में कोई सर्वथा नवीन अर्थ भी निकल आता है, संदर्भ मालूम हो तो आधे-अधूरे अपूर्ण उच्चारणों से भी सही-सही और पूरा अर्थबोध हो सकता है।

---

[163] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 49

उदाहरण के तौर पर ('मैं ब्राहमण नहीं हूँ !' कहानी से) -:

"'ये ढोलक...हारमोनियम...' गुलाटी ने अगला सवाल करना चाहा। लेकिन महिला ने बीच ही में बात काटी, 'ये तो हमारी रोजी-रोटी है। मिरासी के पास ये ना होवे तो वह मिरासी कैसा ?'

'ओह ! आप लोग मिरासी हैं !' गुलाटी ने आश्चर्य व्यक्त किया।"[164]

इस उदाहरण में 'मिरासी' इस एक शब्द का अर्थ सामान्य न होकर संदर्भपरक है।

पाठ और प्रोक्ति अलग दिखने के बावजूद एक दूसरे का इतना अतिक्रमण करते हैं कि एक समय के बाद अनायास ही इनके एक होने का भ्रम हो जाता है। कई बार तो यह एक दूसरे के पर्याय जैसे लगते हैं। इसको प्राकृतिक भाषा संसाधन ने पाठ-संसाधन एवं आलोचना के क्षेत्र में पाठ-विश्लेषण के प्रभाव ने और अधिक उलझा दिया है। पाठ-संसाधन में पाठ को भाषा के लिखित रूप में ही ग्रहण किया जाता है, जबकि साहित्यिक आलोचना की विधा में पाठ का अर्थ कृतिपरकता होता है।

6.2.1 प्रोक्ति के प्रकार

प्रोक्ति की परिकल्पना महावाक्य के समकक्ष है। प्रोक्ति की परिभाषा इस प्रकार से की जा सकती है- एकाधिक वाक्यों की ऐसी व्यवस्थित इकाई जिसमे तर्कसंगत क्रम हो, अर्थ या संरचना की दृष्टि से आंतरिक संगति हो। प्रोक्ति में यद्यपि एकाधिक वाक्यों की अपेक्षा है लेकिन कभी-कभी एक वाक्य में भी प्रोक्ति हो सकती है। जैसे- विद्यालय बंद होने के बाद सभी छात्र अपने घर चले गए। मुहावरे तथा सार्वभौम सत्य को व्यक्त करने वाले वाक्य भी

[164] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 61

भाव या विचार की दृष्टि से पूर्ण होते हैं, इसलिए वे प्रोक्ति के अंतर्गत आते हैं, प्रोक्ति, पैराग्राफ, छंद के साथ- साथ पूरी कहानी, उपन्यास, कुछ भी हो सकता है। प्रोक्ति के पाँच घटक माने गए हैं। वक्ता, श्रोता, कथ्य, संदर्भ और मौखिक सरणि। सरणि लिखित भी हो सकती है। प्रोक्ति का निर्णय भाषिक प्रकार से होता है आकार से नहीं। यह सम्प्रेषण की एक पूर्ण इकाई है प्रोक्ति से वाक्य की संदिग्धता और अधिक स्पष्ट होती है।

प्रोक्ति के अनेक प्रकार बताए गए हैं :-

6.2.1.1 प्रोक्ति का विधागत सम्बंध - 'प्रोक्ति क्या (कौन-सी विधा) है, अथवा किस विधा का अंश है'- इसके आधार पर – इसके आधार पर उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, खंडकाव्य, महाकाव्य, मुक्तक, गीत, निबंध अथवा उपन्यासांश, नाटकांश, खंडकाव्यांश, महाकाव्यांश, गीतांश तथा निबंधांश आदि भेद हो सकते हैं। कहना न होगा कि इन सब में संवादिता, एकालापता, वर्णनात्मकता, आदि दृष्टियो से अंतर होगा जो तत्त्वत: प्रोक्ति की प्रकृति से संबद्ध हैं। उपन्यास, नाटक, कहानी, खंडकाव्य, मुक्तक आदि इसके अनेक भेद हो सकते हैं। इन विधाओ में सम्वाद, एकालाप, वर्णात्मकता आदि दृष्टियो से अंतर होता है।

6.2.1.2 प्रोक्ति का संसक्ति के साधन – प्रोक्ति में संसक्ति विद्यमान रहती है। संसक्ति यानी एक वाक्य से दूसरे वाक्य से मिलने का भाव प्रोक्ति है क्योंकि एकाधिक वाक्यों से अपने अस्तित्व को प्राप्त करती है, इसलिए दो वाक्यों को आपस में जोड़ने का जो काम है, वह संसक्ति करती है। 'प्रोक्ति के वाक्य आपस में किस साधन के द्वारा जोड़े गए हैं' – इसके आधार पर- समुच्चयी संसक्ति–युक्त सर्वनामी संसक्ति-युक्त,

लोपी संसक्ति-युक्त, विरामी संसक्ति-युक्त तथा संदर्भी संसक्ति-युक्त आदि भेद हो सकते हैं। इनमे प्रथम में संसक्ति समुच्चयबोधक अव्यय (जैसे तथा, एवम्, और, कि, जो, जो कि, तो, इसलिए कि, यद्यपि..... तथापि/पर/परंतु/लेकिन, जो....तो, क्या.....क्या, चाहे....परंतु, पर/ लेकिन/ किंतु//मगर, या.....या, न....न आदि) से होती है तो दूसरे में संज्ञा के स्थान पर सर्वनाम का प्रयोग करके। ऐसे ही आगे कर्तालोप, संप्रदान लोप, कर्मलोप, क्रियालोप, विरामचिन्ह तथा संदर्भ आदि के द्वारा। यो सर्वाधिक प्रयोग 'मिश्र संसक्ति-युक्त' प्रोक्ति का होता है जिसमें उपर्युक्त में एकाधिक (अर्थात दो, तीन, चार, पाँच) साधनों का एक ही प्रोक्ति में प्रयोग होता है । मिश्र संसक्ति-युक्त प्रोक्ति को भी द्विसंसक्तियुक्त, त्रिसंसक्तियुक्त, चतुरसंसक्तियुक्त, आदि उपभेदो में संसक्ति-साधनों के प्रकारों की कुल संख्या के आधार पर विभाजित किया जा सकता है। उल्लेख्य है कि 'संसक्ति' का अर्थ होता है 'पूरी तरह आपस में' मिलकर एक इकाई बन जाना। इसमें यह देखना पड़ता है कि वाक्य को किन साधनों के द्वारा जोड़कर एक इकाई बनाया गया। संयोजन के लिए ज्यादातर समुच्चयबोधक अव्ययों का प्रयोग होता है, जैसे- तथा, और, एवम्, इसलिए, कि, परंतु, लेकिन, मगर, या, अथवा आदि। कभी-कभी कारक का लोप कर दिया जाता है और कभी अनेक साधनों का प्रयोग करके वाक्यों को इकाई में समायोजित किया जाता है।

6.2.1.3 सम्वाद में व्यक्तियों की हिस्सेदारी – इसमें यह देखा जाता है कि दो व्यक्तियों की बातचीत हो रही है या केवल एक व्यक्ति बोल रहा है। जिसमें दो या दो से

अधिक व्यक्तियों की बातचीत होती है तो उसे 'संलाप' कहते हैं और यदि अकेले बोल रहा है तो उसे 'एकालाप' कहेंगे।

- **संलाप की संकल्पना-** सभी तरह के भाषा व्यवहार संलाप के अंतर्गत आते हैं। इसके लिए कम-से-कम दो व्यक्तियों का होना आवश्यक है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि 'संलाप भाषा व्यवहार की वह इकाई है जिसमें कम से कम दो पात्रों (वक्ता और श्रोता) के बीच विचारों का परस्पर आदान-प्रदान होता है।' संलाप में वक्ता तथा श्रोता के अनुभवों में साम्य होना जरूरी है। नहीं तो सम्प्रेषण में बाधा आएगी।

जैसे कि ('गिरवी' कहानी से) -:

"शास्त्री ने क्लास से बाहर निकलते ही ओबिलेसु से पूछा – 'पैसे कहाँ है ?'

ओबिलेसु ने 100 का नोट दिया, पर शास्त्री ने नहीं लिया।

शास्त्री ने कहा – 10 हज़ार चाहिए। ओबिलेसु ने पूछा क्यों ?

'उधार जो चुकाना है।'

'फिर इस उधार का क्या ?'

'चुका दूंगा।'

'कब' ओबिलेसु ने पूछा।

'आराम से' शास्त्री ने कहा।"[165]

---

[165] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 26

यहाँ पर शास्त्री और ओबिलेसु में दोस्ती के कारण संवाद सहज रूप में हो रहा है और साथ ही साम्य भी बना हुआ है।

साथ ही संलाप में वक्ता और श्रोता की भूमिका के आधार पर इसके दो उपभेद हैं –

1. **गत्यात्मक संलाप** – इसमें वक्ता तथा श्रोता सक्रियता से आगे बढ़ते हैं। यदि सक्रियता न हो तो संलाप आगे बढ़ ही नहीं सकता साथ ही इसमें वक्ता-श्रोता की भूमिका बदलती रहती है। अर्थात वक्ता जो कहता है, उसे सुनकर श्रोता जवाब देता है, तब श्रोता वक्ता की भूमिका में आ जाता है और उसकी बात सुनने के कारण वक्ता श्रोता हो जाता है। गत्यात्मक संलाप हम ऊपर के उदाहरण में देख सकते हैं।

2. **स्थिर संलाप** – गत्यात्मक संलाप की तुलना में स्थिर संलाप में श्रोता की भूमिका सक्रिय नहीं होती अर्थात वक्ता तो सक्रिय रहता है किंतु श्रोता निष्क्रिय ही रहता है। वह अपने विचार उस रूप में प्रकट नहीं कर सकता जिससे संलाप आगे बढ़ सके। साथ ही स्थिर संलाप में वक्ता व श्रोता की भूमिका भी नहीं बदलती। रेडियो व दूरदर्शन आदि में प्रसारित होने वाले समाचार जैसे कार्यक्रम स्थिर संलाप के उदाहरण हैं।

● **एकालाप की संकल्पना** – ऐसे अवसरों पर जहाँ भावावेश में व्यक्ति स्वयं से कहता है और स्वयं ही उत्तर भी देता है, एकालाप की स्थिति होती है। इसमें भी वक्ता और श्रोता की स्थिति बनी रहती है। अंतर केवल इतना ही है कि श्रोता वहाँ कोई दूसरा व्यक्ति नहीं होकर स्वयं वक्ता ही होता है।

एकालाप के भी दो उपभेद हैं –

1. **गत्यात्मक एकालाप** – इस प्रकार के एकालाप में वक्ता ही स्वयं से प्रश्न करता है और स्वयं ही उसका उत्तर देता चलता है। इस प्रकार एक ही व्यक्ति वक्ता और श्रोता की भूमिका निभाता है। ऐसा लगता है कि मानों दो व्यक्ति परस्पर बातें कर रहे हों।

जैसे कि ('मुम्बई कांड' कहानी से) -:

"कौन जाने कल क्या हो ? कल त्याग पत्र देने के बाद कौन जानता है कि क्या होगा ? सम्भव है यहाँ रहना न हो। तब क्या होगा ? क्या कहीं बाहर जाया जाएगा ? क्या पता ? सुमेर, रवि, सुशीला का क्या होगा ? नहीं, यह नहीं हो सकता कि ये लोग अनाथ हो जाए। लेकिन माँ हैं ही।"[166]

2. **स्थिर एकालाप** – गत्यात्मक एकालाप की तुलना में स्थिर एकालाप में वक्ता स्वयं से प्रश्न नहीं करता बल्कि स्थिर विचार के रूप में एक के बाद एक अपने

---

[166] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 32

भाव प्रकट करता है। स्थिर एकालाप को प्राय: 'स्वगत कथन' भी कहा जाता है। सैद्धांतिक रूप से इन दोनों में कोई अंतर नहीं है किंतु सूक्ष्म अंतर यह है कि स्वगत कथन किसी को सुनाने के लिए नहीं होता जबकि एकालाप में व्यक्ति अपने मनोभावों को प्रकट करने के लिए स्वयं से बातें करता अर्थात वह स्वयं वक्ता और श्रोता होता है। स्वगत कथन में व्यक्ति केवल वक्ता होता है, श्रोता नहीं।

जैसे कि ('जहर' कहानी से) -:

"सरो सवेरे से देर पण्डित ऐसे ही, बिताता रहता है। उस पर भी किसी को दर्द नहीं। दिनभर पलंग पर बैठकर पान खाते हुए, हुकुम चलाते हुए पण्डित को यह दर्द नहीं कि अब तो तीसरा पहर हो गया। खुद तो जानें क्या-क्या दवाइयों के नाम पर खा-पी लेता है तो भूख नहीं लगती, लेकिन इस बे-टके के चाकर को तो भूख लग सकती है न ?"[167]

इसी तरह जहाँ वक्ता और श्रोता आमने-सामने होते हैं वहाँ द्विअभिमुख स्थिति होती है। जैसे- कोई नेता मंच पर भाषण दे रहा हो वहाँ वक्ता और श्रोता आमने सामने होते हैं। वहाँ वक्ता अकेले हो, लेकिन श्रोता सामने न हो उसे एकाभिमुख आलाप कहेंगे। जैसे- रेडियो वार्ता में श्रोता सामने नहीं होता।

---

[167] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 108

6.2.1.4 कथन के आधार पर प्रोक्ति के दो भेद हो सकते हैं - 1. प्रत्यक्ष कथन। 2. अप्रत्यक्ष कथन या परोक्ष कथन।

प्रत्यक्ष कथन – जैसे मोहन, "राम तुम्हारा क्या नाम है। राम, "मुझे राम कहते हैं या मेरा नाम राम है"।

अप्रत्यक्ष कथन – जैसे मोहन ने राम से पूछा कि उसका क्या नाम है।

6.2.1.5 कथन की प्रकृति के आधार पर प्रोक्ति के अनेक रूप हो सकते हैं – विवर्णात्मक, विवेचनात्मक, निर्णयात्मक आदि। प्रभाव उत्पादन की दृष्टि से आश्चर्यसूचक, उत्तेजक, सूचनापरक आदि भेद किए गए हैं। कथन की शैली कैसी है उस आधार पर भी औपचारिक, अनौपचारिक, सामान्य, रूढ़िगत तथा नवीन आदि भेद किए जा सकते हैं।

आगे हम यह देखते हैं कि प्रोक्ति को सही सहारा किसी ने दिया है तो वह है 'संसक्ति' तो आइए हम अब 'संसक्ति' को समझते हैं।

6.3 संसक्ति

अभिव्यक्ति के अंतर्गत संसक्ति का विशेष महत्त्व होता है। संसक्ति का अर्थ है – जुड़ाव। पाठ-निर्माण भी इसी संसक्ति के अंतर्गत किया जाता है। यदि पाठ में जुड़ाव अर्थात संसक्ति नहीं होगी तो वह प्रोक्ति की संज्ञा प्राप्त नहीं कर सकता। इस प्रकार संसक्ति के कई आयाम पाए गये हैं -:

6.3.1 स्थानिक संसक्ति - स्थानीय या स्थानिक संसक्ति निकटता अथवा दूर के निर्देशकों से घटित की जाती हैं ; जैसे – यह, वह, इसी, उसी, तुम, तुम्हारा आदि। स्थानिक संसक्ति का एक रूप शब्द संसक्ति भी है। कभी- कभी शब्दों की पुनरावृत्ति करके अनेक वाक्यों को एक प्रोक्ति के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

जैसे ('दिनेश्पाल जाटव उर्फ दिग्दर्शन' कहानी से) -:

"आपका नाम सुना है...अच्छा लिखते हैं, लिखते रहिए। हमारे साप्ताहिक में भी लिखिए...पत्रिका में भी लिखिए।" [168]

यहाँ पर 'लिखना' शब्द की पुनरावृत्ति दिखाई देती है।

अनेक स्थलों पर गुण और रूप साम्य के आधार पर प्रोक्ति निर्मित की जाती है।

6.3.2 सांकेतिक संसक्ति - जिस प्रोक्ति के अंतर्गत वाक्य निर्देशक तत्त्वों तथा सर्वनामों द्वारा जुड़े होते हैं, वो सांकेतिक संसक्ति कहलाती हैं। ('नो बार' कहानी) में यह विशेषता सरलता से देखी जा सकती है -:

"'तुम पढ़े-लिखे हो, दुनिया को देखते हो। अपना भला-बुरा अच्छी तरह समझते हो। तुम जो भी करोगे ठीक ही करोगे। यदि तुम्हें अच्छा लग रहा है, तुम्हारा मन ठुक रहा है तो हमारे लिए भी अच्छा है। तुम्हारी खुशी में ही हमारी खुशी है।' इतना कहकर वह चुप हो गए थे।" [169]

---

[168] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 69

[169] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 41

6.3.3 शाब्दिक संसक्ति – इसके अंतर्गत पाठांश विलोम, पर्याय शब्दों, विराम चिन्हों द्वारा जुड़े होते हैं। शाब्दिक संसक्ति में ही अनेक नामों का संयोजन है।

जैसे ('नो बार' कहानी से) –:

''हाँ, कांशीराम, मायावती या दूसरे नेताओं के आने से इतना अंतर अवश्य आया है कि पहले दलितों की अपनी पार्टी नहीं होती थी और उनका वोट कांग्रेस या दूसरी पार्टियों को जाता था।'' [170]

यहाँ पर कांशीराम और मायावती नामों के संयोजन में हम शाब्दिक संसक्ति देख सकते हैं।

विराम चिन्ह तथा समुच्चयबोधक शब्दों के प्रयोग से निर्गत वाक्यो को समाहित किया जा सकता है।

जैसे ('मोहरे' कहानी से) –:

''क्यों इन लोगों में थोड़ा सा भी धैर्य नहीं है, क्यों ये लोग मिनट भर, बल्कि कुछेक सेकेंड की जल्दी के लिए अनुशासन को ताक पर रख कर अनुशासनहीन हो जाते हैं। जब खुद ही अनुशासन में नहीं रहते तो विद्यार्थियों को कैसा अनुशासन सिखाएंगे ये।''[171]

[170] वही; पृष्ठ- 45

[171] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ-46

6.3.4 संयोजनपरक संसक्ति - इस संसक्ति के अंतर्गत किसी भी साहित्यिक कृति का वाक्यीय और अंतर्वाक्यीय स्तर पर अध्ययन विश्लेषण किया जाता है। इसमें यह देखा जाता है कि – मिश्र, संयुक्त व उपवाक्य किस प्रकार परस्पर जुड़कर प्रोक्ति का निर्माण करते हैं।

जैसे कि ('मूवमेंट' कहानी) में हम देखते हैं -:

"बच्चे पहले ही सो चुके थे। माँ और छोटा भाई आज घर पर नहीं थे। गाँव में एक मौत हो गयी थी, वे वहाँ गए हुए थे। घर में और कोई नहीं था जिसके साथ 'वह' बातचीत कर सकता। अत: कमरे में जाकर एक पत्रिका के पन्ने पलटने लगा। सुनीता देर तक काम में लगी रही। काम से निवृत्त होकर वह कमरे में आयी और, चुपचाप आँख बंद करके बिस्तर पर लेट गयी जैसे उसे तुरंत नींद आ रही हो। 'आखिर क्या हुआ है सुनीता को, किस बात पर वह इतनी नाराज है' यह जानने की इच्छा से 'उस' ने सुनीता से पूछा, 'क्या बात है सुनीता, कुछ उखड़ी-उखड़ी-सी लग रही हो ?'"[172]

6.3.5 संदर्भपरक संसक्ति – संदर्भ से सम्बंधित वाक्य जब परस्पर जुड़े हों तो वहाँ संदर्भपरक संसक्ति विद्यमान होती है।

डॉ उषा सिंघल के शब्दों में- *"संदर्भपरक संसक्ति से अभिप्राय ऐसी संसक्ति से है, जिसमें पाठांश परस्पर संदर्भ के आधार पर संसक्त होते हैं।"*

जैसे ('जंगल की रानी' कहानी में हम देखते हैं) -:

[172] वही; पृष्ठ- 79

"अस्पताल में भीड़ थी। लेकिन इस भीड़ में भी बूढ़ा अकेला था। उसे हौसला देनेवाला कोई नहीं था। उसके साथ गाँव से आए हेडमास्टर जीवन वानखेड़े जिसने कमली को बेटी की तरह आगे बढ़ने के प्रयास किए थे। उसके भविष्य को नया रूप देने की इस कोशिश में उसने खुद ही को झुलसा लिया था। उसी के कहने पर कमली गाँव से शहर आयी थी, 'ग्रामीण महिला प्रशिक्षण शिविर' में भाग लेने। गाँव में हेडमास्टर का विरोध करने वालों की कमी नहीं थी। इस घटना ने हेडमास्टर को भी तोड़ दिया था। सोमनाथ के पूछने पर वह फफक पड़ा था, "हे कायझालं साहेब... (यह क्या हो गया साहब) ?""[173]

यहाँ पर हम देख सकते हैं कि वाक्य परस्पर जुड़ कर संदर्भ के साथ विद्यमान हैं।

6.3.6 तर्कपूर्ण संसक्ति – जहाँ कोई पात्र मुख्य पात्रों से (नायक-नायिका) से अलग अपना कोई विशेष स्थान बना लेता है, वहाँ इस प्रकार की संसक्ति होती है।

जैसे कि ('हत्यारे' कहानी में) बिरम की माँ मुख्य पात्र से अलग होकर भी अपना विशेष स्थान बनाती है -:

"बिरम की माँ बर्तन मलकर बिरम को जगाने लगी, "चल बेट्टा ! उठ जा ! कुएं ते दो-चार बाल्टी पाणी खेंच दे।" बिरम आँख मलते हुए उठा।

बिरम की माँ सलेसर की कोठरी में गयी। देखा तो सलेसर गहरी नींद में सोया हुआ था। माँ ने आवाज़ दी, "बेट्टा ! इब जी कैसा है ?" सलेसर ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने माथा छुकर देखा। हाथ-पाँव सुन्न हो गये थे। एकदम सर्द। हाथ जैसे हाथ न

---

[173] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 97

हों माँस का एक लोथड़ा-भर रह गया था। बर्फ-सा ठंडा। बिरम की माँ की चीख निकल गयी थी। सुबह की उनींदी नींद से मोहल्ला अचकचाकर जाग गया था। कच्ची मिट्टी की दीवारें कांप उठी थीं।

माँ की आवाज सुनकर बिरम भी कुएं से वापस दौड़ा था। माँ छाती पीट-पीटकर दहाडें मार रही थी। "बिरम के बापू ! हम लुट गए...देखो ! म्हारा जवान बेट्टा हमें छोड़ के चला गया...अरे ! यह सब क्या हो गया रे..." "[174]

6.3.7 वातावरण सम्बंधी संसक्ति – प्रत्येक कृति में किसी न किसी प्रकार का वातावरण अवश्य होता है। इसी वातावरण से जुड़े हुए वाक्यों को वातावरण सम्बंधी संसक्ति कहा जाता है।

उदाहरणस्वरूप ('तलाश' कहानी से) -:

"'आप नहीं जानते साहब, रामबती चूहड़ी है। एक चूहड़ी से खाना बनवाएंगे आप ? माँस-मछली पता नहीं क्या-क्या खाती है। मुझे तो सोचकर ही घिन-सी आ रही है। और वह रसोईघर के अंदर घुसकर सब चीजों को छुएगी।' गुप्ता ने रहस्य पर से पर्दा हटा दिया।"[175]

('मैं ब्राह्मण नहीं हूँ !' कहानी से) -:

---

[174] वही; पृष्ठ- 94

[175] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 26

"'ये ढोलक...हारमोनियम...' गुलाटी ने अगला सवाल करना चाहा । लेकिन महिला ने बीच ही में बात काटी, 'ये तो हमारी रोजी-रोटी है । मिरासी के पास ये ना होवे तो वह मिरासी कैसा ?'

'ओह ! आप लोग मिरासी हैं !' गुलाटी ने आश्चर्य व्यक्त किया ।"[176]

इन दोनों उदाहरण में पात्र का जात बताया जा रहा है । मतलब कि बातों बातों में जाति बताकर और उनके काम और रहन-सहन को दर्शाया जा रहा है । यानि कि एक ही समय अथवा वातावरण का चित्रण दोनों उदाहरणों में देखा जा सकता है ।

6.3.8 प्रतीक संसक्ति – काव्य-क्षेत्र में प्रतीक संसक्ति का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान होता है । पर कथा-साहित्य में भी ऐसे वाक्य या वाक्यों का जोड़ होता है जो कि मिलके प्रतीक संसक्ति बनता है ।

उदाहरण के रूप में ('नो बार' कहानी से) -:

"हाँ, कांशीराम, मायावती या दूसरे नेताओं के आने से इतना अंतर अवश्य आया है कि पहले दलितों की अपनी पार्टी नहीं होती थी और उनका वोट कांग्रेस या दूसरी पार्टियों को जाता था ।"[177]

यहाँ पर कांशीराम और मायावती का नाम लेकर सिर्फ दलित नेताओं की ही ओर इशारा किया जा रहा है ।

---

[176] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 61

[177] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 45

6.3.9 चारित्रिक संसक्ति – किसी रचना के पात्रों के चरित्र की विशेषतायें दर्शाने वाले वाक्यों में चारित्रिक संसक्ति विद्यमान होती है। इस विशेषता को कभी एक वाक्य में तो कभी एक पूरे पैराग्राफ में देखा जा सकता है।

(‘जरूरत’ कहानी से) हम तीन पात्रों के चरित्र की विशेषताएं देखते हैं -:

“हम तीनों में एक राकेश था जो विरमानी यानी सिंधी था। वह आर.एस.एस का सक्रिय सदस्य था। वह न केवल नियमित रूप से शाखा में जाता था बल्कि आर.एस.एस की अन्य गतिविधियों में भी भाग लेता था। दूसरा रामरतन था जो दलित था। उसके अंदर अपनी जाति को लेकर एक काम्प्लेक्स था जिसके चलते वह अपनी जाति छिपाता था और अपने नाम के साथ भी दलित समाज में प्रचलित या प्रतिकात्मक सरनेम न लगाकर सवर्ण होने का आभास देने वाला सरनेम ‘चंदेल’ लगाता था। एक तो सवर्ण होने का आभास देने वाला सरनेम, दूसरे राकेश के साथ आर.एस.एस की शाखा में भी वह जाता था इस कारण से भी लोग उसको सवर्ण समझते थे और उसी के अनुरूप उसके साथ व्यवहार भी करते थे। जहाँ तक मेरा सवाल है, मैं भी दलित था लेकिन जाति को लेकर किसी प्रकार का कोई काम्प्लेक्स मेरे अंदर नहीं था। बल्कि उसके विपरीत मैं एक स्वाभिमानी आदमी था और पूछे जाने पर या आवश्यकता पड़ने पर न केवल बेझिझक अपनी जाति का साफ-साफ

उल्लेख करता था बल्कि अपने समाज संगठनों द्वारा आयोजित किए जाने वाले कार्यक्रमों में भी मैं बढ़-चढ़कर भाग लेता था।"[178]

यहाँ पर एक पूरे पैराग्राफ के जरिए तीन पात्रों की विशेषताएं बताई गयी है जिससे हम यहाँ चारित्रिक संसक्ति के रूप को यहाँ देख सकते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रोक्ति की जो आत्मा है वह है 'संसक्ति' और बिना संसक्ति के प्रोक्ति नहीं हो सकती है। संसक्ति के कई भेदों को कहानी के माध्यम से समझाने का प्रयास किया गया है।

6.4 कथन-शैली

चाहे आप कहीं भी रहे, किसी भी परिस्थिति में रहे आपकी बात आपका कथन बहुत मायने रखता है। आप अपने बातों से, अपने कथन शैली से बड़े से बड़ा काम आसानी से निकाल सकते है। क्योंकि आपका जो कथन शैली है वो सामने वाला पर विशेष प्रभाव डालता है। इसलिए ये समझना जरूरी है कि आखिरकार कथन शैली कैसी होनी चाहिए, इसके क्या क्या तरीके है ? तो इसके लिए आइये देखते है कथन शैली क्या है ? शैली किसे कहते है ? इसके प्रकार क्या क्या है ?

सबसे पहले बात करते हैं कथन की। कथन अर्थात बात या आप जो कहना चाहते है और शैली मतलब कहने का तरीका स्पष्ट से अपनी बात को दूसरे तक प्रेषित करने की कला को ही कथन शैली कहते है। कथन शैली किसी भी वक्ता के लिए अति महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इससे वक्ता अर्थात कहने वालो की अभिव्यक्ति झलकती है। शैली सामान्य कार्य

[178] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 97

पद्धति है। शैली से आशय किसी भी विधि, पद्धति, तरीका, ढंग, प्रणाली आदि से है। कथन शैली के परिपेक्ष्य में इसका अर्थ बात कहने की पद्धति से लगाया जा सकता है। कथन शैली अभिव्यक्ति का तरीका है। प्रत्येक व्यक्ति का कहने का अपना अलग तरीका होता है जिसे कथन शैली कहते हैं। कथन शैली मनुष्यों के विचार भाव से उतपन्न करने का एक अपना तरीका होता है विचार परिधान ही शैली है। संसार में जितने मनुष्य है उन सभी का बोलने का और लिखने का ढंग अलग अलग होता है। अर्थात यह कह सकते है की संसार मे जितने भी लोग है सभी की शैलियां तरह-तरह की हो सकती है। सबका अपना बोलचाल का एक अलग तरीका होता है।

साहित्यिक दृष्टि से देखा जाए तो कथन की मुख्यतः चार शैली है। जिनमें वितरणात्मक शैली, मूल्यांकनपरक शैली, व्याख्यात्मक शैली, और विचारात्मक शैली शामिल है।

6.4.1 विवरणात्मक शैली

इस शैली की बात करें तो ये एक ऐसी शैली है जिसमें कोई भी वक्ता कोई भी बात नहीं कहता किंतु किसी घटना, वस्तु, परिस्थिति का प्रस्तुतिकरण करता है। इसमें वक्ता निरपेक्ष रहता है। अपना कोई भी मत नहीं देता जैसे देखता, सुनता है वैसा ही प्रस्तुत करता है।

जैसे कि ('प्रमोशन' कहानी से) -:

''तू, हमेशा पैसों के ही बारे में सोचेगी। मान-अपमान भी तो कुछ होता है। अरी पगली, अब हम भंगी नहीं रहे। मजदूर हो गए हैं।' 'मजदूर' पर उसने कुछ ज्यादा ही जोर देकर कहा था। 'देखा नहीं था... मई दिवस पर कितना लम्बा जुलूस निकला था। उसमें सब मजदूर ही मजदूर थे... कैसे-कैसे नारे लग रहे थे... इंकलाब जिंदाबाद... मजदूर-मजदूर भाई-भाई... अब

मैं भी उस रैली में जाऊंगा... लाल झंडा उठाकर सबसे आगे चलूंगा... इंकलाब जिंदाबाद...' उसके भीतर गहरा आत्मविश्वास भर गया था, मानो लाल झंडे का रंग उसकी आँखों में उतर आया हो।"[179]

यहाँ पर नायक ने वही वर्णन किया जो उसने देखा है, जो वह जुलूसों में देखता आ रहा है ठीक वैसा ही हू-ब-हू वर्णन करके उसके अंदर भी यह चाह आने लगी कि अब वो भी ऐसा ही करेगा।

6.4.2 मूल्यांकनपरक शैली

मूल्यांकन का अर्थ मूल्य के अंकन से है। अर्थात इस शैली में किसी भी परिस्थिति, घटना, व्यक्ति, वस्तु को देखने या सुनने से ही मनुष्य की मूल्यांकन परक बुद्धि सक्रिय हो जाती है। समालोचन समीक्षा प्रस्तुत करना मूल्यांकन शैली के लक्षण है।

उदाहरणस्वरूप ('जहर' कहानी से) -:

"पण्डित तांगे में बैठी सवारियों को जानता नहीं था किंतु मन में यह मानकर चल रहा था कि सारे भी नहीं तो इनमें से ज्यादातर लोग ऊंची जातियों के होंगे और इसलिए वह दलितों के विरुद्ध खुलकर टिप्पणी कर रहा था। जबकि पण्डित को छोड़कर बाकी सवारियों में दो चमार, एक कुम्हार, एक मुसलमान और दो अहीर थे। पण्डित की बातें इनमें से किसी को भी अच्छी नहीं लग रही थीं। लेकिन कोई उसका प्रतिवाद भी नहीं कर रहा था। पण्डित का यह विष-वमन बिशम्बर को अंदर-ही-अंदर खदबदा रहा था। किसी के द्वारा कोई प्रतिक्रिया नहीं दिए जाने को अपना समर्थन मानते हुए पण्डित ने अपनी बात आगे बढ़ायी, 'सबसे ज्यादा सोचने

---

[179] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 45

की बात तो यह है भइया कि चमारों के लड़के तो पढ़-लिखकर बन जावेंगे अफसर, बाबूजी और हमारे लड़के रह जावेंगे निरे गंवार । कोर्ट- कचहरी में भी चमारों के लड़के होवेंगे । वे तहसीलदार, कलक्टर और जज भी बन जावेंगे । हमारे लड़कों को उनके आगे गिड़गिड़ाना पड़ेगा, हाथ जोड़ने पड़ेगे । यह तो बड़ी डूब मरने वाली बात होवेगी हमारे लिए ।... हमारी रोटियों पर पलने वाले हम पर ही हुकूमत करेंगे । कैसे दिन आ गए हैं भइया ।'

X X X

सवारियाँ अपनी-अपनी जगह पर बैठ गई । पण्डित भी वापस अपनी जगह पर बैठने की कोशिश करता हुआ बोल, 'पर मुझे ही क्यों उतरने को कह रहा है भइया ।'

'इसलिए कि इतनी देर सै सुन रा हूँ तू चमारों के खिलाफ जहर उगल रा है अर गालियाँ दिए जा रा है । मैं भी चमार हूँ । जब चमारों सै इतनी नफरत है तुझकू तै चमार के तांगे में भी क्यू बैठता है । किसी और भारकस सै अइए । मेरे तांगे में बैठकै चमारों कू गाली देवैगा, उन्हें कोसैगा तू ? ऐं !... चल उतर मेरे तांगे सै ।' बिशम्बर ने गुस्से में भरकर कहा ।"[180]

यहाँ पर बिशम्बर पण्डित की बातें सुनकर मूल्यांकन किया है और मूल्यांकन के रूप में ही उसे वह तांगे से उतार देता है ।

6.4.3 व्याख्यात्मक शैली

जैसे की नाम से ही पता चलता है ये कैसी शैली है । इसमें व्याख्याकार का प्रयास दुरुह एवं अस्पष्ट विषय वस्तु को इतना सरल कर देता है की वह सर्वग्राहा हो जाए । सूत्र रूप मे

[180] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 110

लिखी हुई बातों को स्पष्ट करने के लिए व्याख्यात्मक शैली का प्रयोग होता है। किसी भी बात को अनेक प्रकार के अनेक सिद्धांतो के माध्यम से समझाने का प्रयास किया जाता है। जैसे कि ('प्रमोशन' कहानी से) -:

""सुपरवाइजर ने अब्दुल कादिर को इशारे से बुलाया। अब्दुल कादिर सुपरवाइजर का चहेता वर्कर था। उसे एक किनारे ले जाकर उसने पूछा, "अब्दुल...दूध नहीं लेने का क्या चक्कर है ?"

"साहब, जाने दो...नहीं लेते हैं, तो न ले। आपने तो मंगा दिया है, आपकी जिम्मेदारी खत्म।" अब्दुल ने भी टालने की कोशिश की।

"नहीं...लेकिन पता तो चले ?" सुपरवाइजर ने जोर दिया।

"साहब, सुरेश को इस काम पर मत लगाइए," अब्दुल ने कहा।

"लेकिन क्यों ?" सुपरवाइजर ने ताज्जुब से पूछा।

"अब आपको क्या बताएं..." अब्दुल ने टालना चाहा।

"खुलकर बोलो...बात क्या है ?" सुपरवाइजर ने और अधिक जोर देकर पूछा।

"साहब, आपको नहीं पता...सुरेश स्वीपर है...उसके हाथ की चीज कोई कैसे खा-पी सकता है," अब्दुल ने आखिर रहस्य खोल ही दिया।" [181]

यहाँ पर स्वीपर शब्द का इस्तेमाल कर के अब्दुल ने जाति के बारे में बता दिया और इस प्रकार इसकी व्याख्या की गयी।

[181] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 49

6.4.4 विचारात्मक शैली

कथन शैली के चार भागों में ये एक महत्वपूर्ण शैली है। ये एक ऐसी शैली है जिसमें विषय वस्तु की गहराई में जाकर उसकी विविध पक्षों पर तर्कपूर्ति विचार करना विचारात्मक शैली है। इस शैली में तकनीकी शब्दावली एवं तकनीकी भाषावली का प्रयोग किया जाता है।

यहाँ देखते हैं ('कूड़ाघर' कहानी से) -:

''कृष्णराज ने ज्ञापन उसकी ओर बढ़ाया, ज्ञापन देखते ही सहायक भड़क उठा, 'ऐसे कागज सैकडों की संख्या में रोज आते हैं... आरक्षण चाहिए (व्यंग्य से)... जो मिल रहा है उसे मेहरबानी समझो...' ज्ञापन लेकर वह अंदर चला गया था। कृष्णराज ने स्वयं को बहुत अपमानित महसूस किया। वह तो इस उम्मीद मे आया था कि प्रधानमंत्री उसे अंदर बुलाएंगे। भेंट होगी। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। उल्टे उस मामूली से सहायक ने अपमानजनक शब्दों से उसे निराश कर दिया था। उसने फिर से नारेबाजी शूरू कर दी थी।''[182]

यहाँ पर कागज के जरिए आरक्षण की बात कहना विचारात्मक शैली है।

निष्कर्ष

प्रोक्ति का उद्देश्य किसी भी रचना में उस मर्म, उस उद्देश्य को खोजना है, जो रचनाकार अपनी कृति के द्वारा सम्प्रेषित करना चाहता है। जब तक किसी रचना की प्रोक्ति नहीं खुलती उसकी आत्मा उद्घाटित नहीं हो पाती। कृति द्वारा रचनाकार जो संदेश देना चाहता है उसके

[182] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 52

मर्म तक पहुंचना प्रोक्ति द्वारा ही सम्भव है। प्रोक्ति में आकार का कोई बंधन नहीं है। छोटा सा नोटिस 'फूल तोड़ना मना है' एक प्रोक्ति है क्योंकि संदेश प्रेषण की दृष्टि से वह पूर्ण है और दूसरी ओर 'घुसपैठिए' जैसी कहानी भी।

प्रोक्ति एक समाज भाषा वैज्ञानिक इकाई है, जो सम्प्रेषण की दृष्टि से, संदेश की पूर्णता की दृष्टि से और आशय अभिव्यक्ति की दृष्टि से अधूरी नहीं है। इस प्रोक्ति को जब भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से देखते हैं, तब वह एक वाक्य के ऊपर की व्याकरणिक संरचना है। जिस प्रकार रूपिम शब्दों की, शब्द पदबंधों की, पदबंध उपवाक्य की और उपवाक्य वाक्य की उत्तरोत्तर रचना करते हैं , वैसे ही वाक्य 'प्रोक्ति' की रचना करते हैं। अर्थात 'प्रोक्ति' के संरचक घटक 'वाक्य' हैं। संरचक वाक्य परस्पर जुड़कर जब एक संदेश की स्वयंपूर्ण अभिव्यक्ति करते हैं, तब प्रोक्ति बनती है।

अत: भाषा के सामान्य व्यवहार के सभी संदर्भ जैसे बातचीत, एक कहानी या पत्र प्रोक्ति कहलाएंगे। इन्हें प्रोक्ति कहने का एक आधार है, जब व्यापक संदर्भ में भाषा का प्रयोग होता। प्रोक्ति में आकार का कोई बंधन नहीं है। प्रोक्ति के विषय में यह जाना है कि वह सामाजिक अन्योन्य क्रिया के बीच हुआ एक स्वयंपूर्ण भाषिक व्यवहार है। और यही सारी विशेषताएं प्रोक्ति की हम दलित कहानीयों में देखते हैं जो कि प्रोक्ति के सभी प्रकार में उदाहरण रूप में यहाँ दिखाया गया है। आगे के अध्याय में अर्थ विधान को अर्थ की अवधारणा, शब्द-शक्ति, पर्यायवाची, अप्रस्तुत विधान, मुहावरे और लोकोक्तियों के जरिए दलित कहानियों में प्रयुक्त इन सभी भागों को दर्शाया गया है।

सप्तम अध्याय

दलित कहानियों का अर्थ विधान

अर्थ शब्द की आत्मा है, शब्द शरीर है। ध्वनि-विज्ञान, पद-विज्ञान और वाक्य-विज्ञान भाषा के शरीर हैं। इनमें भाषा के शरीर या बाह्य रूप का विवेचन, विश्लेषण किया जाता है। अर्थ आत्मा है। अर्थ विज्ञान में शब्दार्थ के आंतरिक पक्ष का विवेचन, विश्लेषण किया जाता है। जिस प्रकार शरीर के ज्ञान के बाद आत्मा का ज्ञान अपेक्षित है, उसी प्रकार ध्वनि, पद, वाक्य के ज्ञान के बाद अर्थरूपी आत्मा का ज्ञान अपेक्षित एवं अनिवार्य है। अगर नामकरण की बात की जाए तो अर्थ-विषयक विवेचन को आजकल अंग्रेजी में semantics कहते हैं। यह नाम फ्रेंच विद्वान मिशेल ब्रेआल (Michel Bre'al) द्वारा प्रसारित हुआ है। हिंदी में इसके लिए अर्थ विचार, शब्दार्थविचार, शब्दार्थ-विज्ञान आदि नाम भी प्रचलित रहे हैं। संप्रति अर्थविज्ञान नाम ही सर्वप्रिय है। अंग्रेजी में इसके लिए प्रारंभ में अनेक नाम चले। जैसे- Rhematology (रहेमेटोलाजी), Semasialogy (सीमेसिआलाजी), Rhematics (रहेमेटिक्स), Sematology (सीमेटोलाजी), आदि। एक दर्जन से अधिक नामों में से अब Semantics (सीमेंटिक्स) नाम ही शेष रह गया है। और जैसा कि अर्थ आत्मा है तो दलित कहानी में भी अर्थ के कई पक्ष को हम देख सकते हैं। अर्थविज्ञान में शब्दार्थ के आंतरिक पक्ष का विवेचन, विश्लेषण किया जाता है। अर्थ और उसे सम्प्रेषित करने वाला शब्द दोनों ही भाषा के अविछिन्न अंग हैं। 'अर्थ' शब्द से अभिन्न है। किसी भी अर्थ की अभिव्यक्ति और

अर्थ का बोध किसी शब्द विशेष से ही सम्बंध है। अर्थ का लक्षण देते हुए भर्तृहरि ने अपने ग्रंथ 'वाक्यपदीय' में कहा है कि "जिस शब्द के उच्चारण से जिस अर्थ की प्रतीति होती है, वही उसका 'अर्थ' है।' शब्द और उससे निर्मित विभिन्न भाषिक इकाईयों के माध्यम से ही हम सोच पाते हैं और अपने भावों विचारों को व्यक्त कर पाते हैं। किसी भी शब्द का यह सम्प्रेषित अर्थ प्रयोक्ता और श्रोता दोनों पर निर्भर करता है। अत: शब्द विशेष से उनके मस्तिष्क में उभरने वाले अर्थ-बिम्ब या अर्थ-छवि में पर्याप्त अंतर हो सकता है। इससे स्पष्ट है कि किसी शब्द का उसके अर्थ से स्थिर या नित्य संबंध नहीं होता। साथ ही, यह भी आवश्यक नहीं कि किसी शब्द विशेष का एक ही अर्थ हो। एक शब्द के एक से अधिक अर्थ भी हो सकते हैं जो कि संदर्भ विशेष में प्रयोग किए जाने पर ही पूर्ण रूप से समझे जा सकते हैं।

जैसे-: अर्थ शब्द – अभिप्राय, धन, हेतु, कारण, प्रयोजन- आदि के लिए प्रयुक्त होता है। इसलिए 'अर्थशास्त्र' (Economics) के संदर्भ में जब हम 'अर्थ' का प्रयोग करते हैं तो वहाँ इसका सम्बंध 'धन' से होता है। जबकि 'भाषाविज्ञान' के सम्बंध में इसी 'अर्थ' का प्रयोग 'अभिप्राय' के लिए होता है। अत: शब्द अर्थों के वाहक मात्र नहीं होते, उनमें पारस्परिक सम्बन्ध भी होता है। इस शाब्दिक सम्बंध से ही सही अर्थ-प्राप्ति सम्भव है।

7.1 अर्थ की अवधारणा

भाषाविज्ञान की वह शाखा जिसमें शब्दों के अर्थ का अध्ययन किया जाता है, अर्थविज्ञान कहलाता है। इस अनुशासन का मुख्य उद्देश्य भाषा के अंतर्गत अर्थ की संरचना, सम्प्रेषण एवं ग्रहण की प्रकिया का विश्लेषण करना होता है। अर्थात अर्थविज्ञान के अंतर्गत

अर्थ के स्वरूप, शब्दार्थ सम्बंध, शब्दार्थ बोध के साधन, अनेकार्थवाची शब्द के अर्थ-निर्णय का आधार आदि विषयों का अध्ययन किया जाता है।

यह एक सामान्य अवधारणा है कि शब्द से अर्थ का बोध होता है किंतु सभी शब्दों से सभी अर्थों का बोध नहीं होता अपितु किसी निश्चित शब्द से किसी निश्चित अर्थ का ही बोध होता है, अन्य असंबध अर्थ का नहीं। अत: शब्द और अर्थ के मध्य एक ऐसे सम्बंध को स्वीकार करना होगा जो निश्चित शब्द से निश्चित अर्थ के बोध का नियामक हो, अन्यथा किसी भी शब्द से किसी भी अर्थ का बोध स्वीकारना होगा। शब्द और अर्थ का यह सम्बंध प्रत्येक व्यक्ति अपनी भाषा-व्यवहार की परम्परा से सीखता है। क्योंकि मनुष्य को जगत में विद्यमान असंख्य वस्तुओं का अनुभव होता है और ये वस्तुएं परस्पर भिन्न होती है। अत: अपनी विशिष्ट सत्तात्मक पहचान रखती है। वस्तुओं की इस मूर्त सत्ता के लिए तकनीकी शब्दावली में 'रूप' शब्द व्यव्हृत किया जाता है। चूंकि प्रत्येक भाषा समुदाय में प्रत्येक विशिष्ट मूर्त सत्ता के लिए एक विशिष्ट 'नाम' का प्रयोग किया जाता है और सम्बंधित भाषा समुदाय का व्यक्ति इस 'नाम' और 'रूप' के निश्चित सम्बंध को भाषा-प्रयोग से सीखता है, फलत: यह सम्बंध उसके मस्तिष्क में स्थायी रूप से विद्यमान हो जाता है। सामान्य रूप से इसे ही 'अर्थ' कहा जाता है।

आचार्य पाणिनि ने भाषा का सार 'अर्थ' माना है। एतदर्थ शब्दों को ही 'प्रातिपदिक' (मूल संज्ञा शब्द या प्रकृति) माना है-

अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्।

यास्क ने अपने ग्रंथ 'निरुक्त' अर्थात निर्वचन, निरुक्ति (Etymology) का आधार ही अर्थ को माना है। अर्थ-ज्ञान के बिना निर्वचन असम्भव है-

अर्थनित्य: परीक्षेत।

वस्तुत: शब्द केवल अर्थों का संग्रह या समुच्चय मात्र नहीं होता अपितु शब्द एवं अर्थ परस्पर सम्बंधित भी होते हैं तथा शब्द एवं अर्थ का यह सम्बंध भाषा व्यवहार की परम्परा द्वारा निश्चित एवं स्थिर होता है। दैनिक बातचीत में किसी शब्द के अर्थ का प्रयोग इसी सम्बंध के द्वारा किया जाता है।

उदाहरणार्थ ('रिहाई' कहानी से) -:

''दिसम्बर का महीना था। रात ग्यारह बजे बड़े गेट पर ट्रकों के रूकने और जोर-जोर से होनेवाली बातचीत सुनकर सुगनी जाग गयी थी। वह अनिच्छा से उठी थी। मिट्ठन को दो दिन से बुखार चढ़ा हुआ था। वह कुछ देर पहले ही सोया था। सुगनी ने उसे जगाना ठीक नहीं समझा। वह स्वयं ही खेस की बुक्कल मारकर अपनी कोठरी से बाहर आ गयी थी।''[183]

यहाँ पर अगर कोई **अनिच्छा** शब्द का अर्थ पूछे तो सहजता से कहा जा सकता है कि **अपनी इच्छा के बिना**। इसी प्रकार अन्य उदाहरण देख सकते हैं।

('जरूरत' कहानी से) -:

''शिक्षित और सम्भ्रांत लोगों की बस्ती थी वह। मुख्यत: वकील, प्रोफेसर, सरकारी अफसर और व्यापारी लोग रहते थे वहाँ। न केवल सामाजिक कार्यों से बल्कि स्थानीय और प्रदेश की राजनीति से भी कुछ लोग सरोकार रखते थे। यूं इलाहाबाद में आए दिन छेड़-छाड़, चोरी, हत्या, लूटपाट और बम फटने की घटनायें होती रहती थीं किंतु मीरापुर में प्राय: ऐसा कुछ

---

[183] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 74

नहीं होता था । नगरीय संस्कृति के अनुरूप यहाँ पर भी लोगों का आपस में एक-दूसरे से न ज्यादा परिचय था, न वास्ता ।" [184]

यहाँ पर **शिक्षित** और **नगरीय** शब्द का अर्थ जानने के लिए कोई भी बता सकता है कि यह **अशिक्षित** और **ग्रामीण** का विलोम है। और भी उदाहरण देखिए।

('कामरेड का घर' कहानी से) -:

"प्रत्येक रविवार को किसी-न-किसी सदस्य के घर वे लोग बैठक करते थे। पिछले कई महीनों से यह उनका नियमित क्रियाकलाप था। ये बैठकें सदस्यों के घरों पर क्रमिक रूप से होती थीं। पहले एक सदस्य के घर, फिर दूसरे के, फिर तीसरे के। साहित्य की दुनिया में एक नई संस्कृति का सूत्रपात वे लोग कर रहे थे।" [185]

यहाँ पर **रविवार** शब्द का अर्थ कोई जानना चाहता है तो उसे समझाया जा सकता है कि **यह हफ्ते का एक दिन होता है**।

अत: स्पष्ट है कि शब्द के अर्थ को व्यक्त करने की प्रक्रिया में शब्द के लक्षण द्वारा अर्थ का निर्धारण नहीं किया जाता बल्कि शब्द एवं उसके द्वारा संकेतित मूर्त सत्ता के परस्पर सम्बंध के द्वारा अर्थ का निर्धारण होता है।

उपर्युक्त विवेचन से यह भी स्पष्ट हो रहा है कि प्रत्येक शब्द का अपना एक अर्थ, भाव या विचार होता है, जो उसे सार्थक बनाता है। इसे ही पारिभाषिक शब्दावली में अर्थग्राम (Semanteme) कहा जाता है। प्रत्येक काल-खंड में किसी शब्द का अर्थ सदैव एक-सा नहीं रहता अपितु उसमें समय के साथ-साथ विकार, परिवर्तन या विकास होता रहता है और

---

[184] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 97

[185] वही; पृष्ठ- 115

यह परिवर्तन सम्बंधित भाषा समुदाय के व्यक्तियों की मानसिकता से जुड़ा हुआ होता है। शब्दों के अर्थ में आने वाले इस विकार का अध्ययन अर्थविज्ञान का महत्वपूर्ण क्षेत्र है। अर्थविज्ञान के अंतर्गत शब्द के अर्थ का अध्ययन करते समय सर्वप्रथम शब्द के अर्थ को रीति के अनुसार देखा जाता है, न कि शब्द के प्रयोगकर्ता द्वारा प्रस्तुत तात्पर्य से।

शब्दार्थ अध्ययन के दौरान भाषावैज्ञानिक सर्वप्रथम मस्तिष्क के द्वारा लिए गए अर्थ का ही अध्ययन करता है तथा उस शब्द के प्रस्तुतिकरण की शैली में निहित अर्थ एवं उस शब्द विशेष से सम्बंधित अन्य प्रसंगार्थों को उस दौरान अनदेखा करता है। मस्तिष्क के द्वारा ग्रहण किये गए अर्थ को ही शब्द के मूल अर्थ के रूप में लिया जाता है, जिसको प्राथमिक शाब्दिक अर्थ (Primary Lexical Meaning) कहा जाता है और कोशविज्ञान के दृष्टिकोण से भी इसी अर्थ को प्राथमिकता दी जाती है।

जैसे कि ('शीत लहर' कहानी से) -:

"चंद्रप्रकाश का पूरा मन था कि सेवानिवृत्त होने तक वह लक्ष्मीबाई नगर के इस मकान में ही रहेगा। इतने सुविधाजनक स्थान को छोड़कर द्वारका के सूनेपन में जाने का उसे कोई औचित्य दिखाई नहीं देता था। कम-से-कम द्वारका से केंन्द्रीय सचिवालय तक मैट्रो रेल शुरु होने से पहले वह कतई द्वारका जाने के पक्ष में नहीं था।" [186]

यहाँ पर औचित्य के कई अर्थ हो सकते हैं, परंतु मुख्यार्थ के अनुसार इसका तात्पर्य उस औचित्य से है जो उचित है न कि योग्यता से है। एक दूसरे अर्थ के सम्बंध में समर्थन भी है पर वह यहाँ लिखना और समझना ठीक नहीं। औचित्य के कुछ अन्य अर्थ भी हैं जैसे- दोषमुक्ति, शुद्धता, शिष्टता, विनय। परंतु औचित्य शब्द सुनने पर हिंदी भाषा-भाषी के

[186] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 138

मस्तिष्क में सर्वप्रथम उचित, सही, ठीक का ही बिम्ब उभरता है जिसके अपने विशिष्ट लक्षण/गुण होते हैं। किसी शब्द के मुख्यार्थ के अतिरिक्त अन्य अर्थ भी महत्वहीन नहीं होते क्योंकि कवि एवं विज्ञापन-विशेषज्ञ शब्द से जुड़े अतिरिक्त अर्थों का अधिक प्रयोग करते हैं।

विचारों के आदान-प्रदान, भावों के सम्प्रेषण के लिए मानव समूह भाषा का प्रयोग करता है। भाषा की आत्मा 'अर्थ' है। अर्थविज्ञान के अंतर्गत भाषा के इसी अर्थपक्ष का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाता है। अर्थविज्ञान में भाषा की आत्मा अर्थात 'अर्थ' के ज्ञान, संकेत, बिम्ब निर्माण और अर्थबोध का विवेचन विश्लेषण किया जाता है। अर्थ का महत्त्व बताते हुए यास्क ने 'निरूक्त' में लिखा है –

स्थाणुरयं भारहार: किलामूदधीत्य वेदं न विजानाति योडर्थम्

योडर्थज्ञ इत् सकलं भद्रमनुश्यते नाकमेति ज्ञानविधूतपाप्मा।

अर्थात अर्थ जाने बिना वेदों का अध्ययन व्यर्थ भारवाहन के समान हैं। अर्थ का ज्ञाता ही समस्त कल्याणों का भागी होता है और ज्ञान ज्योति से समस्त दोषों को दूर कर ब्रह्मत्व को प्राप्त करता है।

महाभाष्य में अर्थ का सम्बंध बुद्धि से माना गया है –

बुद्धौ कृत्वा सर्वा चेष्टा: कर्ता धीरस्तत्वन्नीति:

शब्देनार्थांवाच्यांदृष्ट्वा बुद्धौ कुर्यात्पौर्वापर्यन्म्।

अर्थात अर्थ का विषय बाहर रहता है, किंतु अर्थ रहता है भीतर, अर्थ का सम्बंध भीतर की बुद्धि से है।

भर्तृहरि ने 'वाक्यपदीय' में अर्थ के विषय में कहा है कि 'जिस अर्थ या प्रयोजन की प्रतीति होती है, वही उस शब्द का अर्थ है। अर्थ का अन्य कोई लक्षण नहीं। जब उच्चारण समकाल होने वाली प्रतीति ही अर्थ है, तब उसके लक्ष्य- व्यंग्यादि विविध भेद माने ही नहीं जा सकते, क्योंकि शब्द (अभिधान) और अर्थ (अभिधेय) के बीच एक ही प्रकार आ सम्बंध हो सकता है : अभिधा का।'

अर्थ को भर्तृहरि ने अखण्डनीय अभिव्यक्ति माना है। न तो उसके भाग किए जा सकते हैं न उसके जुड़ने से किसी समग्र वाक्यार्थ की सृष्टि सम्भव मानी जा सकती है। यहाँ तक कि 'नाम', 'अख्यात', 'उपसर्ग', 'निपात' आदि की दृष्टि से भी अर्थ का विभाजन नहीं किया जा सकता।

अर्थविज्ञान के अंतर्गत शब्द और अर्थ से सम्बंधित विविध विषयों आ अध्ययन किया जाता है। पर्यायवाची शब्दों के सूक्ष्म अर्थ-भेदों का ज्ञान, विलोम शब्दों का उचित प्रयोग, शाब्दिक और लाक्षणिक अर्थ में भेद, मुहावरों का यथोचित प्रयोग- इन सबए द्वारा भाषिक अभिव्यक्ति को प्रभावपूर्ण बनाया जा सकता है। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि अर्थविज्ञान का व्यवस्थित अध्ययन शब्दों का उचित प्रयोग सीखने में सहायक होता है और यही अर्थविज्ञान के अध्ययन की उपयोगिता है।

7.2 शब्द शक्ति

शब्द से अर्थ का बोध होता है। इसमें शब्द बोधक है और अर्थ बोध।

जैसे ('रिहाई' कहानी से) -:

"लेकिन लात मारने से बोरे पर कोई असर नहीं हुआ । वह कोठरी की ओर दौड़ा । कोठरी के आले में एक माचिस रखी थी । उसी पर अचानक उसकी नजर पड़ी । उसने लपककर माचिस उठाई । दौड़ते हुए गोदाम में घुसा ।" [187]

इस उदाहरण में **कोठरी** और **माचिस** दोनों शब्द हैं, इनसे **कोठरी- स्थान** और **माचिस- वस्तु** का बोध कराया जाता है । प्रयोग या उपयोग में अर्थ (वस्तु) ही आता है, शब्द नहीं । शब्द अर्थ (वस्तु) का बोध कराकर निवृत्त हो जाता है । इसलिए भाषा में महत्त्व अर्थ का है । शब्द और अर्थ के सम्बंध को वाच्य-वाचक या बोध्य-बोधक सम्बंध कहते हैं । शब्द वाचक या बोधक है, अर्थ वाच्य या बोध्य ।

शब्द तथा अर्थ के संबंध को शक्ति या शब्दशक्ति कहते हैं । इसको व्यापार भी कहा गया हैं । शब्द में निहित अर्थ-संपत्ति को प्रकट करने वाला तत्त्व शब्दव्यापार या शब्दशक्ति है । शब्दशक्तियाँ साधन के रूप में समादृत हैं । शब्द कारण है और अर्थ कार्य और शब्दशक्तियाँ साधन या व्यापार-रूप हैं । शब्दशक्ति के बिना शब्द के अर्थ का ज्ञान संभव नहीं है । शब्द तथा अर्थ के संबंध में विचार करनेवाले तत्व को शब्दशक्ति कहते हैं । शब्द तथा अर्थ के संबंध को शक्ति या शब्दशक्ति कहते हैं । इसको व्यापार भी कहा गया हैं । शब्द में निहित अर्थ-संपत्ति को प्रकट करने वाला तत्त्व शब्दव्यापार या शब्दशक्ति है । शब्दशक्तियाँ साधन के रूप में समादृत हैं । शब्द कारण है और अर्थ कार्य और शब्दशक्तियाँ साधन या व्यापार-रूप हैं । शब्दशक्ति के बिना शब्द के अर्थ का ज्ञान संभव नहीं है । शब्द तथा अर्थ के संबंध में विचार करनेवाले तत्व को शब्दशक्ति कहते हैं । संस्कृत के काव्यशास्त्रियों ने शब्द और अर्थ के सम्बंध में गहन मनन-चिंतन किया है । इस विवेचन को वे 'शब्द शक्ति' या 'वृत्ति-

---

[187] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 79

निरुपण' नाम से प्रस्तुत करते हैं। शब्दों से होने वाला अर्थ तीन प्रकार का है - वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य। इसी आधार पर शब्द भी तीन प्रकार का होता है - वाचक, लक्षक और व्यंजक। इन तीनों में विद्यमान शक्ति या वृत्ति को अभिधा, लक्षणा और व्यंजना कहते हैं।

शक्ति या वृत्ति	**शब्द**	**अर्थ**	**उदाहरण**
अभिधा	वाचक	वाच्य (मुख्य)	कोठरी, माचिस, गोदाम
लक्षणा	लक्षक	लक्ष्य (गौण)	वह बाहर आंगन में निकल आया था
व्यंजना	व्यंजक	व्यंग्य (प्रतीयमान)	शाम हो गई

यहाँ पर काव्यशास्त्रीय ढंग से इनका विस्तृत वर्णन, भेदों-उपभेदों की चर्चा, अभीष्ट नहीं है। यहाँ पर केवल इनका सारांश दिया जा रहा है।

7.2.1 अभिधा शब्द शक्ति

अभिधा को परिभाषित करते हुए आचार्य विश्वनाथ कहते हैं-

'तत्र संकेतितार्थस्य बोधनादग्रिमाभिधा'

अर्थात् उनमें (वाक्य में) संकेतित यानि कि मुख्य अर्थ का बोध कराने वाली वृत्ति या शक्ति को अभिधा कहते हैं। चार प्रकार के शब्द होते हैं- जातिवाचक, गुणवाचक, द्रव्यवाचक और क्रियावाचक। इन शब्दों के अर्थ का बोध कराने में जहाँ किसी अन्य दूसरी शक्ति की आवश्यकता नहीं होती, वहाँ मुख्य अर्थ का व्यवधान रहित बोध कराने वाली शब्द की शक्ति अभिधा कहलाती है।

जैसे ('रिहाई' कहानी से) -:

"गोदाम धुएं से भर गया था। छुटकू के लिए गोदाम में खड़ा रहना अब मुश्किल था।"[188]

यह मुख्य वृत्ति या शक्ति है। अभिधा से बताया जाने वाला अर्थ मुख्य होता है। यह शब्द का लौकिक और व्यवहारिक अर्थ है।

पण्डित रामदहिन मिश्र के अनुसार, *"साक्षात संकेतित अर्थ के बोधक व्यापार को अभिधा शब्द शक्ति कहते हैं।"*[189]

आचार्य मम्मट के अनुसार, *"साक्षात संकेतित अर्थ जिसे मुख्यार्थ कहा जाता है उसका बोध कराने वाले व्यापार को अभिधा व्यापार कहते हैं।"*[190]

रीतिकालीन आचार्य के अनुसार, *"अनेकार्थक तू सबद में, एक अर्थ की भक्ति। तिहि वाच्यार्थ को कहे, सज्जन अभिधा शक्ति॥"*

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि किसी शब्द के मुख्यार्थ का, वाच्यार्थ का, संकेतित अर्थ का, सरलार्थ का, शब्दकोशीय अर्थ का, नामवाची अर्थ का, लोक प्रचलित अर्थ या अभिधेय अर्थ का बोध कराने वाली शक्ति अभिधा शब्द शक्ति होती है। अत: शब्द की जिस शक्ति के कारण किसी शब्द का मुख्य अर्थ समझा जाता है वह अभिधा शब्द शक्ति कहलाती है।

जैसे ('ब्रह्मास्त्र' कहानी से) -:

"अरविंद नैथानी और कंवल कुमार दोनों ने डी.ए.वी. कालेज से एक साथ डिग्री ली थी। अरविंद को सर्वे आफ इंडिया में नौकरी मिल गई थी कंवल को बैंक में। कंवल की शादी में अभी देर थी। पिताजी गुजर चुके थे। छोटी बहन और माँ की जिम्मेदारी कंवल पर आ गयी

---

[188] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 79

[189] काव्यालोक; रामदहिन मिश्र

[190] काव्य प्रकाश; मम्मट

थी। कंवल के पिताजी छावनी में सफाई कर्मचारी थे, और गढ़ी डाकरे में रहते थे। अरविंद के पिताजी भी सर्वे आफ इंडिया में थे और हाथी बड़कला सर्वे कालोनी में रहते थे। कंवल के पिताजी ने रिटायरमेंट के बाद करनपुर में एक छोटा-सा मकान खरीद लिया था।" [191]

और भी उदाहरण हम देखते हैं ('प्रस्थान' कहानी से) -:

"मालच्छी आंध्रा प्रदेश के उत्तर प्रांत की रहने वाली थी। मालच्छी की माँ आंध्र प्रदेश की दक्षिण प्रांत के लोगों से अपनी बेटी की सगाई नहीं करना चाहती थी। पर लच्छरसु को मालच्छी पसंद आई, इसी कारण लच्छरसु की माँ ने सगाई के समय शगुन की रस्म में कई सामग्री दी (रीति-रिवाज़ से भी बढ़कर)। सगाई के बाद जल्दी ही मालच्छी और लच्छरसु ने ही, दुल्हन बनकर ससुराल आ गई।"[192]

यहाँ दोनों ही उदाहरणों में चरित्र के नाम के साथ-साथ बैंक, कालोनी, पसंद, सगाई, पिताजी, मकान, रस्म जैसे शब्द लोक-प्रचलित अर्थ देते हैं तथा यह अर्थ बताने वाली शक्ति को 'अभिधा' कहते हैं।

अभिधा तीन प्रकार के हैं -: 1) रूढ़ 2) यौगिक 3) यौगरूढ़

7.2.1.1 रूढ़ अभिधा -: जो शब्द परम्परा से प्रचलित हैं, जिनमें प्रत्यय आदि जोड़कर परिवर्तन नहीं होता, जिनके खण्ड भी नहीं हो सकते, अत: इनका अर्थ सर्वमान्य प्रचलित अर्थ होता है।

जैसे ('हत्यारे' कहानी से) -:

---

[191] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 81

[192] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 38

"सुअर के ऊपर आग ठीक करते हुए कालू बोला, 'हो जागा। मीट भी तो बहोत है। तू घबरा क्यों रही है। कम पड़ेगा तो देखा जागा। अब तू फटाफट भीतर का काम देख।"[193]

यहाँ पर सुअर, आग, मीट जैसे शब्द रूढ़ अभिधा को दर्शा रहे हैं।

7.2.1.2 यौगिक अभिधा -: ये शब्द दो शब्दों के योग से बने होते हैं। ये अपने मूल अर्थ से दूसरे अर्थ को भी प्रकट करते हैं। यौगिक का अर्थ है 'मिलाया हुआ'।

जैसे ('शीत लहर' कहानी से) -:

"चंद्रप्रकाश का पूरा मन था कि सेवानिवृत्त होने तक वह लक्ष्मीबाई नगर के इस मकान में ही रहेगा। इतने सुविधाजनक स्थान को छोड़कर द्वारका के सूनेपन में जाने का उसे कोई औचित्य दिखाई नहीं देता था। कम-से-कम द्वारका से केंन्द्रीय सचिवालय तक मैट्रो रेल शुरु होने से पहले वह कतई द्वारका जाने के पक्ष में नहीं था।"[194]

यहाँ पर चंद्रप्रकाश, सेवानिवृत्त, लक्ष्मीबाई, केंद्रीय जैसे शब्दों से यह उदाहरण यौगिक अभिधा को दर्शाता है।

7.2.1.3 यौगरूढ़ अभिधा –: ऐसे शब्द जो साधारण अर्थ को छोड़ विशेष अर्थ ग्रहण करे, उसे यौगरूढ़ कहते हैं। इनका अर्थबोध समुदाय और अवयवों की शक्ति से होता है, ये शब्द यौगिक होते हुए भी रूढ़ होते हैं।

जैसे ('हत्यारे' कहानी से) -:

---

[193] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 90

[194] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 138

"चारपाइयों पर पसरे लोगों की चर्चा का विषय भी बदल गया था। भरे-पूरे जिस्म का सूरजा भगत रोबीले व्यक्तित्व का मालिक था।"[195]

यहाँ पर चारपाई का अर्थ सीधे से बिस्तर (बेड) से है और रोबीले का अर्थ हष्ट-पुष्ट व्यक्ति से है।

7.2.2 लक्षणा शब्द शक्ति

जब किसी शब्द या वाक्यांश का मुख्य अर्थ प्रकट न हो और शब्द के लक्षणों के आधार पर अर्थ ग्रहण किया जाये, वहाँ लक्षणा शब्द शक्ति होती है। या फिर निहितार्थ को ग्रहण करने में कठिनाई आये और रूढ़ अथवा प्रयोजन के अनुसार अर्थ को ग्रहण किया जाये उसे लक्षणा शब्द शक्ति के नाम से जाना जाता है। इसमें दो बातों का ध्यान रखना होता है –

1) मुख्य अर्थ का बाधित होना- अर्थात लक्षणा शब्द शक्ति में मुख्य अर्थ (व्याकरणिक कोश में दिया गया अर्थ) प्रकट न हो।

जैसे ('जंगल की रानी' कहानी से) -:

"जब तक वह संभल पाता, वे भूखे लकड़बग्घों की तरह उस पर टूट पड़े थे। उनके हाथों में लोहे की चैन और डंडे थे।"[196]

---

[195] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 91

[196] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 96

यहाँ पर असल में लकड़बग्घा का इस्तेमाल नहीं किया गया है परंतु लकड़बग्घा का कोशगत अर्थ एक चार पैरों का पशु है। परंतु वाक्य का मुख्य अर्थ भूखे लकड़बग्घा जैसा जंगलीपन से है जो बाधित हुआ है इसलिए यहाँ लक्षणा शब्द शक्ति है।

2) आरोपित अर्थ को ग्रहण करना- मुख्य अर्थ के स्थान पर अनिवार्य अर्थ को ही ग्रहण कर पाना।

जैसे ऊपर के उदाहरण में लकड़बग्घा जैसा गुण यानि जंगलीपन को ग्रहण करना है। आरोपित अर्थ प्रयोजन या रूढ़ि पर आधारित हो- वे (जिन लोगों को बताया जा रहा) जंगली बताने के प्रयोजन के लिए आरोपितार्थ को ग्रहण किया।

लक्षणा के दो प्रकार हैं – 1) रूढ़ा लक्षणा 2) प्रयोजनवती लक्षणा

7.2.2.1 रूढ़ा लक्षणा -: जब किसी काव्य रूढ़ि या परम्परा को आधार बनाकर शब्द का प्रयोग लक्ष्यार्थ में किया जाता है वहाँ रूढ़ा लक्षणा शब्द शक्ति होती है। अर्थात रूढ़ा लक्षणा शब्द शक्ति में शब्द अपना नियत या मुख्य अर्थ छोड़कर रूढ़ि या परम्परा प्रयोग के कारण भिन्न अर्थ यानि लक्ष्यार्थ का बोध कराता है।

जैसे ('जंगल की रानी' कहानी से) -:

"अस्पताल में भीड़ थी। लेकिन इस भीड़ में भी बूढ़ा अकेला था।"[197]

('घुसपैठिये' कहानी से) -:

---

[197] वही; पृष्ठ- 97

"लगता था जैसे इस शहर की संवेदनाओं को लकवा मार गया है। दो-दो हत्याओं के बाद भी यह शहर गूंगा ही बना रहा।"[198]

7.2.2.2 प्रयोजनवती लक्षणा -: जब किसी विशेष प्रयोजन से प्रेरित होकर शब्द का प्रयोग लक्ष्यार्थ में किया जाता है, अर्थात जहाँ मुख्यार्थ किसी प्रयोजन के कारण लक्ष्यार्थ का बोध कराता है वहाँ प्रयोजनवती लक्षणा होती है।

जैसे ('यह अंत नहीं' कहानी से) -:

"उसका आश्रम गंगा में है। बिरमा की हिचकियाँ बंध गई थीं। सरबती के ढाढस देने पर उसने सारा किस्सा कह सुनाया।" [199]

('शीत लहर' कहानी से) -:

"लक्ष्मी बाई ने कहा, चंद्रप्रकाश तो गधा है। उसे रास्ते में कई जगह दिखे पर बिना कहीं रूके सीधे घर को आ गया।"[200]

7.2.3 व्यंजना शब्द शक्ति

जहाँ शब्द का अर्थ ना तो अभिधा से निकलता है, और ना ही लक्ष्णा से अर्थात दोनों ही शब्द शक्तियाँ जहाँ अर्थ स्पष्ट करने में चुप रह जाती है। वहाँ तीसरी शक्ति आगे बढ़ती है और उस तीसरी व्यंजना शक्ति से अर्थ का बोध ग्रहण होता है। व्यंजना से प्राप्त अर्थ को व्यंजनार्थ या व्यंग्यार्थ कहते हैं। कविता में प्रायः व्यंजना का अधिक प्रयोग किया जाता है। अभिधा और लक्षणा का संबंध केवल शब्दों से होता है। परंतु व्यंजना शब्द पर ही नहीं अर्थ

[198] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 13

[199] वही; पृष्ठ- 23

[200] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 139

और परिस्थिति पर भी आधारित होती है। 'व्यंजना' का अर्थ है विकसित करना, स्पष्ट करना, रहस्य खोलना। अत: किसी शब्द का छुपा हुआ अन्य अर्थ ज्ञात करना ही व्यंजना शब्द शक्ति कहलाती है। इसमें कथन के संदर्भ के अनुसार एक ही शब्द के अलग-अलग अर्थ प्रकट होते हैं तो कभी श्रोता या पाठक की कल्पना शक्ति कोई नया अर्थ गढ़ लेती है। इस प्रकार व्यंजना शब्द शक्ति विविध आयामी अर्थ अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है।

उदाहरण के लिए ('कूड़ाघर' कहानी से) -:

"वह जब से कृष्णराज के सम्पर्क में आया था, उसे जैसे पंख लग गए थे। उसे लगने लगा था कि अब अधिकारों की लड़ाई का संघर्ष नहीं रूकेगा।"[201]

('ब्रह्मास्त्र' कहानी से) -:

"बहस तीखी हो गई थी। इर्द-गिर्द बैठे लोग रविकुमार और ढौंडियाल की इस बहस में रूचि ले रहे थे। टिपटाप का महौल ही ऐसा था। कभी-कभी तो बहसें इतनी ऊंची हो जाती थीं कि सडक से गुजरते लोग भी खड़े होकर सुनने लगते थे।"[202]

दोनों ही उदाहरणों में 'पंख लग गए' और 'बहस तीखी हो गई' विभिन्न अर्थ बता रहा है। 'बहस तीखी हो गई' मतलब कि गरमागरमी हो गई, बहुत ज्यादा बात हो गई और 'पंख लग गए' यानि कि उड़ान भरने लगा, कार्य पूरा होने की आशा जाग गई।

व्यंजना विशिष्ट के अर्थ का बोध कराती है, साहित्य में व्यंजना प्रधान काव्य को श्रेष्ठ माना जाता है।

('गंवार' कहानी से) -:

---

[201] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 51

[202] वही; पृष्ठ- 81

"आभा के बारे में यह सब जानकर प्रभात का मन भी करूणा से भर गया, 'अरे, यह तो बहुत दु:खद हुआ उसके साथ, लेकिन आर्थिक स्थिति तो ठीक होगी उसकी। उसका पति सम्पन्न रहा होगा ?' कहने के साथ प्रभात ने प्रश्नसूचक दृष्टि से रचना की ओर देखा। प्रभात ने आभा की ओर सहानुभूति जताते हुए सहज भाव से ही य जानना चाहा था। किंतु रचना को लगा कि प्रभात यह सब व्यंग्यार्थ में कह रहा है। इस व्यंग्यार्थ के पीछे निहित कारण को भी वह समझती थी इसलिए उसी अंदाज में उसने बताया, 'अरे कहाँ का सम्पन्न ! कुछ नहीं था वह। उसका बाप रिटायर्ड अफसर था कहीं पर उनकी एक कोठी थी। बस उसकी चकाचौंध में ही पगला गई थी आभा। उसका पति किसी काम का नहीं था।'"[203]

व्यंजना शब्द शक्ति से प्राप्त अर्थ को दो भागों में विभक्त करते हैं- 1) शाब्दी व्यंजना 2) आर्थी व्यंजना

7.2.3.1 शाब्दी व्यंजना -: वाक्य में प्रयुक्त व्यंग्यार्थ जब किसी शब्द विशेष के प्रयोग पर ही निर्भर करता है अर्थात उस शब्द के हटाने पर या उसके स्थान पर उसके किसी पर्यायवाची शब्द रखने पर व्यंजना नहीं रह पाती, वहाँ शाब्दी व्यंजना होती है। अत: शाब्दी व्यंजना केवल अनेकार्थ शब्दों में ही होती है।

जैसे ('ब्रह्मास्त्र' कहानी से) -:

"'तू अपनी औकात में रह... यह बारात टिहरी जा रही है... और टिहरी देहरादून नहीं है। यह ध्यान रखना... जा, वापस अपने घर... इसी में खैर है,' पंडित का एक-एक शब्द उपेक्षा और घृणा की आग से भरा था।"[204]

---

[203] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 126

[204] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 83

यहाँ पर ‘औकात’ शब्द के और भी कई अर्थ है ‘प्रतिष्ठा’, ‘इज्ज़त’, ‘मान-मर्यादा’ पर यहाँ पर और किसी भी अर्थ या पर्याय का उपयोग ठीक नहीं है।

7.2.3.2 आर्थी व्यंजना -: जब शब्दार्थ की व्यंजना अर्थ पर निर्भर रहती है। उसका पर्याय रख देने पर भी अभीष्ट की पूर्ति हो जाती है वहाँ आर्थी व्यंजना हो जाती है। आर्थी व्यंजना में बोलनेवाले, सुननेवाले, प्रकरण, देशकाल, कंठस्वर आदि का बोध कराती है।

जैसे (‘मुम्बई कांड’ कहानी से) -:

“सुबह से ही कुछ न कुछ ऐसा घटित हो रहा था जिसने उसे तनावग्रस्त कर रखा था। दफ्तर जाते ही गुप्ता से झड़प हो गई थी। वह तो चुप ही था लेकिन गुप्ता ने ही ऐसा कुछ कह दिया था कि वह आपे से बाहर हो गया था। दफ्तर न होता तो शायद मारपीट हो जाती।”[205]

यहाँ पर आर्थी व्यंजना के प्रयोग को सहज रूप से देख सकते हैं।

7.3 पर्यायवाचक

'पर्याय' का अर्थ है- 'समान' तथा 'वाची' का अर्थ है- 'बोले जाने वाले' अर्थात जिन शब्दों का अर्थ एक जैसा होता है, उन्हें 'पर्यायवाची शब्द' कहते हैं। इसे हम ऐसे भी कह सकते है- जिन शब्दों के अर्थ में समानता हो, उन्हें 'पर्यायवाची शब्द' कहते है। दूसरे अर्थ में- समान अर्थवाले शब्दों को 'पर्यायवाची शब्द' या समानार्थक भी कहते है। जैसे- सूर्य, दिनकर, दिवाकर, रवि, भास्कर, भानु, दिनेश- इन सभी शब्दों का अर्थ है 'सूरज'। इस प्रकार ये सभी शब्द 'सूरज' के पर्यायवाची शब्द कहलायेंगे।

---

[205] वही; पृष्ठ- 30

पर्यायवाची शब्द को 'प्रतिशब्द' भी कहते है। अर्थ की दृष्टि से शब्दों के अनेक रूप है; जैसे- पर्यायवाची शब्द, युग्म शब्द, एकार्थक शब्द, विपरीतार्थक शब्द, समोच्चरितप्राय शब्द इत्यादि। किसी भी समृद्ध भाषा में पर्यायवाची शब्दों की अधिकता रहती है। जो भाषा जितनी ही सम्पत्र होगी, उसमें पर्यायवाची शब्दों की संख्या उतनी ही अधिक होगी। संस्कृत में इनकी अधिकता है। हिन्दी के पर्यायवाची शब्द संस्कृत के तत्सम शब्द है, जिन्हें हिन्दी भाषा ने ज्यों-का-त्यों ग्रहण कर लिया है। यहाँ एक बात ध्यान रखने की यह है कि इन शब्दों में अर्थ की समानता होते हुए भी इनके प्रयोग एक तरह के नहीं हैं। ये शब्द अपने में इतने पूर्ण हैं कि एक ही शब्द का प्रयोग सभी स्थितियों में और सभी स्थलों पर अच्छा नहीं लगता- कहीं कोई शब्द ठीक बैठता है और कहीं कोई। प्रत्येक शब्द की महत्ता विषय और स्थान के अनुसार होती है।

पर्यायवाचक शब्दों को (Synonyms) सीनोनीम्स कहा जाता है। Syn (सिन) = सदृश, समान + onym (ओनिम) = नाम या अर्थ, अत: समानार्थक या एकार्थक। विभिन्न विचारधाराओं के कारण एक ही वस्तु के अनेक नाम पड़ जाते हैं। प्राम्भ में इनमें भावात्मक अंतर रहता है। बाद में वह भेद विस्मृत हो जाने से पर्याय के रूप में इनका प्रयोग होता है। जैसे (‘शवयात्रा’ कहानी से) -:

“*चमारों* के गाँव में बल्हारों का एक परिवार था, जो *जोहड़* के पार रहता था। *चमारों* और बल्हारों के बीच एक सीमा रेखा की तरह था *जोहड़*। बरसात के दिनों में जब *जोहड़* पानी से भर जाता था तब बल्हारों का सम्पर्क गाँव से एकदम कट जाता था।”[206]

[206] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 36

यहाँ पर चमार का पर्यायवाची ‘एक प्रकार की जाति’, ‘मोची’, ‘पादुकाकार’ है, और जोहड़ शब्द का पर्यायवाची ‘तालाब’, ‘तलैया’, ‘तडाग’, ‘सरोवर’, ‘जलाशय’ है। पर इन सभी शब्दों के अर्थों में समानता होते हुए भी इनका प्रयोग एक तरह का नहीं है।

पर्यायवाची शब्द के दो प्रकार हैं – 1) पूर्ण पर्याय   2) अपूर्ण पर्याय

7.3.1 पूर्ण पर्याय -: पूर्ण पर्याय वे शब्द हैं जो पूर्णतया एकार्थक हैं। इनमें एक के स्थान पर दूसरे शब्द का प्रयोग किया जा सकता है।

जैसे (‘प्रस्थान’ कहानी से) -:

“मालच्छी मायके चली गई। वहाँ भी अपनी सास की प्रशंसा रही। फिर एक दिन उसको याद आया- पहली बार ससुराल गई थी, तब उसने उस घर का अवलोकन किया था घर में अधिक चीज़ें न थी, दो चार बर्तन ही थे।”[207]

यहाँ पर ‘**प्रशंसा**’ शब्द के और पर्यायवाची शब्द स्तुति, **तारीफ**, अभिनंदन, गुणगान, **बड़ाई**, महिमागान है जिसमें कि ऊपर के उदाहरण में **तारीफ** या **बड़ाई** शब्द का भी प्रयोग किया जा सकता है।

7.3.2 अपूर्ण पर्याय -: अपूर्ण पर्याय वे शब्द हैं, जो अर्थ की दृष्टि से समानार्थक हैं परंतु प्रयोग की दृष्टि से इनमें भेद है। प्रत्येक स्थान पर एक के स्थान पर दूसरे का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। इनमें तीन प्रकार का अंतर होता है –

1. **शैली मूलक भेद** – यह भेद शैली की दृष्टि से किया जाता है।

   जैसे (‘शवयात्रा’ कहानी से) -:

[207] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 38

"कल्लन अजीब-सी दुविधा में फंस गया था। भावावेश में आकर वह ईंटें तो ले आया था, पर गाँव के हालात देखकर उसे डर लग रहा था ।"[208]

यहाँ **दुविधा** के कई पर्याय है - **असमंजस, अनिश्चय, उलझन**। ये सभी अर्थ की दृष्टि से तो समान हैं पर प्रयोग की दृष्टि से अलग हैं।

('प्रमोशन' कहानी से) -:

"शांति के मन में काफी देर से एक सवाल खदबदा रहा था, जिसे वह चाहकर भी टाल नहीं पा रही थी। उसे डर था, कहीं उसका सवाल खुशी में कोई खलल न डाल दे ।"[209]

यहाँ भी **खुशी** शब्द में यही देखा जा सकता है कि इसके पर्याय **प्रसन्न्ता** को यहाँ पर नहीं इस्तेमाल किया जा सकता।

इसके अलावा कुछ शब्द जैसे आज्ञा- इजाजत, दया-रहम, कृपालु-रहीम, शुद्ध-पाक, अशुद्ध-नापाक भी इन कहानियों में देखने को मिलते हैं।

2. **विचारमूलक भेद** – इसमें विचार और भावना की दृष्टि से भेद होता है।

जैसे ('घुसपैठिये' कहानी से) -:

---

[208] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 39

[209] वही; पृष्ठ- 44

"राकेश कुछ अटपटा-सा गया था। रमेश चौधरी ने भी इशारा समझ लिया था। वह सहज बने रहना चाहता था। उसने राकेश को धीरे से कहा, 'साहब, हम आपका ज्यादा समय नहीं लेंगे... बस इन लड़कों को कोई रास्ता सुझाइए... डॉक्टर तो इन्हें बनना ही है...।'"

"उसने साफ मना कर दिया था कि वह किसी भंगी-चमार के साथ अपना रूम शेयर नहीं कर सकता है। जब उसने होस्टल वार्डन से शिकायत की तो उसने भी उसकी जाति पूछी थी और उसे एक दलित छात्र के साथ रख दिया था।"[210]

ऊपर दोनों ही उदाहरणों में डॉक्टर और वार्डन शब्द के और भी अलग-अलग पर्याय हैं जैसे 'डॉक्टर-हकीम-वैद्य', 'वार्डन-अभिभावक-छात्रावासों में छात्रों के प्रतिपालक' परंतु इन पर्यायों का प्रयोग नहीं किया ज सकता है।
ऐसे ही और भी शब्द हैं जैसे ईश्वर-अल्लाह-गॉड, रानी-बेगम-क्वीन, फूल-गुल, मंदिर-मस्जिद-चर्च, प्रार्थना-नमाज-प्रेयर, विद्यालय-मकतब-स्कूल, देखना-घूरना, लेना-हरण जो कि कहानी-संग्रह से ली गयी हैं।

3. **प्रयोगमूलक भेद -** कुछ शब्द समानार्थक होने पर भी एक के स्थान पर दूसरा नहीं आ सकता है।

---

[210] वही; पृष्ठ- 17

जैसे (‘घुसपैठिये’ कहानी से) -:

“‘कल पिंकी की सहेली कह रही थी... रैदास तो जूते बनाता था... तुम लोग भी जूते बनाते हो... पिंकी रोते हुए घर आई थी... मेरा तो जी करता है बच्चों को लेकर कहीं चली जाऊं...’ इंदु की यह तानाकशी राकेश को बौना बना देती है।”[211]

यहाँ पर **रैदास** का पर्याय कई है जैसे **‘उच्च कोटि के संत’, ‘चमार’, ‘रामानंद का शिष्य’** पर रैदास के स्थान पर और कोई भी पर्याय का प्रयोग नहीं किया जा सकता। और भी शब्द हैं जैसे- ‘जलपान’ के स्थान पर ‘वारिपान’, ‘’यज्ञवेदि’ के स्थान पर ‘यज्ञ-चबूतरा’, ‘’नीर-क्षीर-विवेक’ के स्थान पर ‘जल-दुग्ध-विवेक’ का प्रयोग नहीं हो सकता।

7.4 अप्रस्तुत विधान

साहित्य में जिसका वर्णन हो उसे प्रस्तुत कहते हैं। इसके विपरीत अप्रस्तुत उसे कहते हैं जो ‘प्रस्तुत’ के वर्णन के लिए प्रयुक्त हो।

जैसे (‘घुसपैठिये’ कहानी से) -:

“‘कल पिंकी की सहेली कह रही थी... रैदास तो जूते बनाता था... तुम लोग भी जूते बनाते हो... पिंकी रोते हुए घर आई थी... मेरा तो जी करता है बच्चों को लेकर कहीं चली जाऊं...’ इंदु की यह तानाकशी राकेश को बौना बना देती है।”[212]

---

[211] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि’ पृष्ठ- 14

[212] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 14

यहाँ रैदास वर्ण्य विषय है, अत: प्रस्तुत है और जूते वर्णन के लिए एक साधन के रूप में लाया गया है , अत: यह अप्रस्तुत है। इसी को उपमान भी कहते हैं।

साहित्य में अप्रस्तुत का विधान करना 'अप्रस्तुत' लाना या उसकी व्यवस्था करना 'अप्रस्तुत-विधान' कहलाता है।

अप्रस्तुत काव्य भाषा का बड़ा ही सशक्त उपकरण है, यह कहना भी गलत न होगा कि काव्यभाषा अपने उपकरणों में अनादिकाल से यदि किसी का सर्वाधिक प्रयोग करती रही है तो 'अप्रस्तुत' या 'अप्रस्तुत-विधान' ही है। यह बात सभी काल की सभी काव्य भाषाओं पर समान रूप से लागू होती हैं।

सामान्य भाषा और काव्य भाषा को अलगाने वाला एक मुख्य तत्व अथवा इन दोनों का मुख्य भेदक तत्त्व अप्रस्तुत विधान ही है। सामान्य भाषा अप्रस्तुत का प्रयोग नहीं करती। वह कहेगी- रैदास चमार था। किंतु काव्यभाषा बात को अधिक प्रभावशाली, आकर्षक तथा बिम्बात्मक बनाने के लिए अप्रस्तुत की सहायता से कहेगी कि रैदास तो जूते बनाता था।

एक उदाहरण और ('घुसपैठिये' कहानी से) -:

''सोनकर को पहली ही परीक्षा में फेल कर दिया गया था। क्योंकि उसने प्रणव मिश्रा के खिलाफ पुलिस में नामजद रपट लिखाने का दुस्साहस किया था, डीन और अन्य प्रोफेसरों तक शिकायत पहुंचाने की हिमाकत की थी, यह भूलकर कि वह इस चक्रव्यूह में अकेला फंस गया है, जहाँ से बाहर आने के लिए उसे कौरवों की कई अक्षौहिणी सेना और अनेक महारथियों से टकराना पड़ेगा। परीक्षाफल का व्यूह भेदकर सोनकर बाहर नहीं आ पाया था

। कई महारथियों ने निहत्थे सोनकर की हत्या कर दी थी। जिसे आत्महत्या कहकर प्रचारित किया गया था।"[213]

यहाँ पर भी पूरे समस्या का अवलोकन महाभारत के चक्रव्यूह से जोड़कर बताया जा रहा है अत: यहाँ स्पष्ट ही अप्रस्तुत विधान है।

यदि कभी सामान्य भाषा अप्रस्तुत का प्रयोग करती है तो उसका वह अंश 'सामान्य भाषा' न होकर 'काव्य भाषा' बन जाती है।

शैली तात्विक अध्ययन करते समय अप्रस्तुत विधान कवि या रचनाकार की कलात्मक भाषा को स्पष्ट करने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। अप्रस्तुत शब्दावली का प्रयोग वर्ण्य विषय या प्रस्तुत वर्णन के लिए साधन की तरह किया जाता है। जैसे अधिकांश रचनाकारों ने रैदास के बारे में बताने के समय उसे सीधे चमार जाति का बताया है। जूते बनाने वाला का प्रयोग साहित्य में अप्रस्तुत विधान के रूप में प्रस्तुत को उजागर करने के लिए साधन माना गया है। भावोत्कर्ष और वस्तुओं के रूप, क्रिया, गुण आदि सह्‌दय-ह्‌दयं-गम्य बनाने में जब भाषा और उसकी शब्द शक्तियाँ जवाब दे जाती हैं, तब रचनाकार अप्रस्तुत विधान की ओर उन्मुख होता है। शब्दों की अर्थ-सम्पदा को अक्षम मानकर जब रचनाकार अप्रस्तुत विधान की ओर उन्मुख होता है तो वह भाषा से इतर मार्ग को ग्रहण करता है।

अप्रस्तुत विधान के द्वारा विशेषण, क्रिया विशेषण एवं प्रक्रिया विशेषण का रूप तैयार किया जाता है। इस प्रकार का भाषा तत्त्व एक ओर शब्द के अर्थ को बहुआयामी रूप प्रदान करता है तो दूसरी ओर प्रस्तुत विधान को बिम्बात्मक रूप- निर्माण करने का साधन होता है। नवीनता का प्रयोग ह्‌दय की उदारता, कोमलता एवं सहनशीलता के साथ-साथ ह्‌दय की

---

[213] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 19

मक्खन जैसी स्थिति की ओर भी संकेत करता है, जो अप्रस्तुत विधान (प्रयोग) का ही परिणाम है।

अप्रस्तुत योजना के लिए प्रस्तुत और अप्रस्तुत में सम्बद्धता न होकर साम्यता के आधार पर सम्बद्धता की सूचना देते हैं। इस प्रकार की भाषिक संरचना में साम्यरूपता निम्न रूपों में दृष्टिगोचर होती है।

1. आकार साम्य के रूप में
2. रूप साम्य के रूप में
3. धर्म साम्य के रूप में
4. प्रभाव साम्य के रूप में
5. क्रिया साम्य के रूप में

उल्लिखित अप्रस्तुत विधान के रूप अलंकारों के साथ ही इनका प्रयोग भी भिन्न-भिन्न रूपों में होता है। विशेषण, विशेषण के विशेषण, क्रिया, क्रिया विशेषण, अलंकार आदि भाषा प्रयोग में अप्रस्तुत विधान का विशिष्ट योगदान है। इसके अलावा अन्योक्ति वर्णन तथा मुहावरों के प्रयोग में भी अप्रस्तुत योजना दिखाई पड़ती है।

7.5 मुहावरे और लोकोक्तियाँ

7.5.1 मुहावरा

ऐसे पदबन्ध को कहा जाता है, जिसका शाब्दिक अर्थ तो कुछ और निकलना है, परन्तु लाक्षणिक अर्थ कुछ और निकलता है। जैसे 'वह चैकन्ना हो गया' इस वाक्य में चैकन्ना का अर्थ 'चार कानों वाला' होता है, परन्तु कोई भी मनुष्य चार कानों वाला नहीं होता। अतः

इसका लाक्षणिक अर्थ हुआ 'बहुत सावधान' । मुहावरा शब्द मूलतः अरबी भाषा का शब्द है, जिसका शाब्दिक अर्थ होता है- अभ्यास करना। मुहावरा एक ऐसा वाक्यांश है, जो रचना में अपना एक विशेष अर्थ प्रकट है। रचना में भावगत सौंदर्य की दृष्टि सी मुहावरों का विशेष महत्त्व है। इनके प्रयोग से भाषा सरस, रोचक एवं प्रभावपूर्ण बन जाती है। इनके मूल रूप में कभी परिवर्तन नहीं होता अर्थात इनमें से किसी भी शब्द का पर्यायावाची शब्द प्रयुक्त नहीं किया जा सकता। हाँ, क्रिया पद में काल, पुरूष, वचन आदि के अनुसार परिवर्तन अवश्य होता है। मुहावरा अपूर्ण वाक्य होता है। वाक्य प्रयोग करते समय यह वाक्य का अभिन्न अंग बन जाता है। मुहावरे के प्रयोग से वाक्य में व्यंगार्थ उत्पन्न होता है। मुहवरा प्रसंग के अनुरूप अर्थ देता है। मुहावरा पूर्ण वाक्य नहीं होता है। मुहावरे का सामान्य अर्थ नहीं, विशिष्ट अर्थ लिया जाता है। अत: मुहावरे का शाब्दिक अर्थ न लेकर उसका भावार्थ ग्रहण करना चाहिए
।

मुहावरों को निम्नलिखित आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है-:

(1) सादृश्य पर आधारित

(2) शारीरिक अंगों पर आधारित

(3) असंभव स्थितियों पर आधारित

(4) कथाओं पर आधारित

(5) प्रतीकों पर आधारित

(6) घटनाओं पर आधारित

7.5.1.1 सादृश्य पर आधारित मुहावरे - बहुत से मुहावरे सादृश्य या समानता पर आधारित होते हैं।

जैसे- चूड़ियाँ पहनना, दाल न गलना, सोने पर सुहागा, कुंदन-सा चमकना, पापड़ बेलना आदि।

7.5.1.2 शारीरिक अंगों पर आधारित मुहावरे - हिंदी भाषा के अंतर्गत इस वर्ग में बहुत मुहावरे मिलते हैं।

जैसे- अंग-अंग ढीला होना, आँखें चुराना, अँगूठा दिखाना, आँखों से गिरना, सिर हिलाना, उँगली उठाना, कमर टूटना, कलेजा मुँह को आना, गरदन पर सवार होना, छाती पर साँप लोटना, तलवे चाटना, दाँत खट्टे करना, नाक रगड़ना, पीठ दिखाना, बगलें झाँकन, मुँह काला करना आदि।

7.5.1.3 असंभव स्थितियों पर आधारित मुहावरे - इस तरह के मुहावरों में वाच्यार्थ के स्तर पर इस तरह की स्थितियाँ दिखाई देती हैं जो असंभव प्रतीत होती हैं।

जैसे- पानी में आग लगाना, पत्थर का कलेजा होना, जमीन आसमान एक करना, सिर पर पाँव रखकर भागना, हथेली पर सरसों जमाना, हवाई किले बनाना, दिन में तारे दिखाई देना आदि।

7.5.1.4 कथाओं पर आधारित मुहावरे - कुछ मुहावरों का जन्म लोक में प्रचलित कुछ कथा-कहानियों से होता हैं।

जैसे-टेढ़ी खीर होना, एक और एक ग्यारह होना, हाथों-हाथ बिक जाना, साँप को दूध पिलाना, रँगा सियार होना, दुम दबाकर भागना, काठ में पाँव देना आदि।

7.5.1.5 प्रतीकों पर आधारित मुहावरे - कुछ मुहावरे प्रतीकों पर आधारित होते हैं।

जैसे- एक आँख से देखना, एक ही लकड़ी से हाँकना, एक ही थैले के चट्टे-बट्टे होना, तीनों मुहावरों में प्रयुक्त 'एक' शब्द 'समानता' का प्रतीक है।

इसी तरह से डेढ़ पसली का होना, ढाई चावल की खीर पकाना, ढाई दिन की बादशाहत होना, में डेढ़ तथा ढाई शब्द 'नगण्यता' के प्रतीक है।

7.5.1.6 घटनाओं पर आधारित मुहावरे - कुछ मुहावरों के मूल में कोई घटना भी रहती है।

जैसे- काँटा निकालना, काँव-काँव करना, ऊपर की आमदनी, गड़े मुर्दे उखाड़ना आदि।

चयनित कहानी-संग्रहों में उदाहरण देखते हैं ('बिट्टन मर गई' कहानी से) -:

''नजरें मिलते ही वह जैसे लजा-सी गई थी और नजरें झुकाकर मंद-मंद मुस्कान बिखेरती हुई अपने घर के अंदर चली गई थी।''[214]

इसका अर्थ हुआ 'मन ही मन खुश होना'।

('बिट्टन मर गई' कहानी से) -:

''पानी बल्लाना अच्छे भले आदमी की भी होश गादले हो जाती है।''[215] इसका अर्थ हुआ- ''बहुत डर जाना'।

('बिट्टन मर गई' कहानी से) -:

[214] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 61

[215] वही; पृष्ठ- 72

"बिट्टन की उदास, तन्हा जिंदगी सहारा मांगती है। कोई सहारा नहीं मिलता इसलिये वह खीजती है, चिड़चिड़ाती है, गुस्सा करती है और अंदर ही अंदर धधकती रहती है। उसे प्यार और खुशी के दो क्षण चाहिए।"[216]

इसका अर्थ हुआ- 'मन ही मन धुखी होना'।

('जरूरत' कहानी से) -:

"क्यों उसकी खुशामद कर रही हो।"[217] इसका अर्थ हुआ – 'नखरे उठाना'।

('जरूरत' कहानी से) -:

"संगीता को कमरे में देखकर मैं हक्का-बक्का रह गया।"[218] इसका अर्थ हुआ – 'हैरान रह जाना'।

('मोहरे' कहानी से) -:

"भय और विस्मय से मेरा दिल धक-धक करने लगा। मेरे खिलाफ कम्पलेंट ? सत्यप्रकाश को विस्मय हुआ प्रधानाचार्य के मुँह से यह सुनकर। उसने मन ही मन सोचा, 'पता नहीं किस बात की कम्पलेंट है। कोई कम्पलेंट होनी तो नहीं मेरे खिलाफ।'"[219] इसका अर्थ हुआ- 'घबराहट होना'।

('यह अंत नहीं' कहानी से) –:

"कुछ क्षण उनके बाहर निकलने का इंतजार किया। वे टस से मस नहीं हुए तो अजीब सी मुद्रा बनाकर बोला, 'फूल खिलेगा तो भौंरे मंडराएंगे ही...' उसने बेशर्मी से खींसे निपोरी।"[220]

---

[216] वही; पृष्ठ- 73

[217] वही; पृष्ठ- 103

[218] वही; पृष्ठ- 103

[219] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 47

[220] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 24

यहाँ पर टस से मस का अर्थ हुआ- बिलकुल भी नहीं हिलना और दूसरे मुहावरे का अर्थ हुआ- लुभावनीय मधु का लालच। और खींसे निपोरी का अर्थ हुआ- गिड़गिड़ाकर माँगना, लज्जा का भाव प्रकट करते हुए दाँत दिखाना।

('यह अंत नहीं' कहानी से) -:

"किसन के बहुत उकसाने पर बूढ़ा धरमू सुस्त थकी आवाज में बोला, 'ये कोई नई बात ना है। गरीब की इज्जत का कोई मतलब ही ना होवे है। ये सब तो होता ही रहा है। चुप रहणे में ही भला है। पाणी में रहके मगरमच्छ से बैर लेणा ठीक ना है।"[221]

इसका अर्थ हुआ - पास में रहकर ख़तरनाक व्यक्ति से दुश्मनी रखना।

ऐसे ही और भी कई मुहावरों का प्रयोग इन कहानी-सग्रहों में किया गया है जिसे हम आगे इस टेबल में देखते हैं-

	कहानियों में प्रयुक्त मुहावरे	**उसके अर्थ**
1.	एक ही थाली के चट्टे बट्टे हैं	सब एक समान
2.	डोलती नौका	अस्थिर अव्यवस्था
3.	दाम लगाना	मूल्य आंकना
4.	तीन तेरह हो जाना	तितर बितर होना
5.	हुलिया बिगाड़ देना	दुर्गत करना
6.	हाथ खींच लेना	साथ न देना
7.	सिर धुनना	पछताना

[221] वही; पृष्ठ- 25

8.	सिर से पानी गुजर रहा	सहनशीलता समाप्त होना
9.	अंधे की लाठी है	एकमात्र सहारा
10.	उखड़ी-उखड़ी बातें कर रहा	उदासीन बातें करना
11.	**इज़्ज़त ख़ाक में मिल गई**	परिवारिक प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचना
12.	कान भरती	किसी के ख़िलाफ़ किसी के मन में कोई बात बैठाना
13.	चिकना घड़ा हो गया है	बेशर्म होना, किसी बात का प्रभाव न पड़ना
14.	**मेरी छाती पर मूँग दल रहा**	पास रहकर कष्ट देना
15.	जौहर खुलना	भेद का पता लगना
16.	लंगोटी में फाग हो गई	दरिद्रता में आनंद मनाना
17.	उसका माथा ठनका	अनिष्ट की आशंका होना
18.	आधा तीतर आधा बटेर हो गए हो	बेमेल तथा बेढंगा होना
19.	फिसल पड़े तो हर गंगे	मजबूरी में काम पड़ना
20.	गुलर का फूल होना	कभी भी दिखाई न देना
21.	टोपी उछाल दी	अपमानित करना
22.	ठगा-सा रह गया	बहुत छोटा महसूस करना, अपमानित महसूस करना

23.	हाथ पाँव मारना	प्रयास करना
24.	टोपी पहना गया	बेवकूफ़ बनाना, झाँसा देना
25.	नील का टीका लगाना	कलंक लगाना, कलंकित करना
26.	दाँत खट्टे करना	प्रतिद्वंद्विता या लड़ाई में पछाड़ना
27.	चोली-दामन का साथ	गहरी मित्रता होना, अत्यधिक घनिष्ठता होना, बहुत मधुर सम्बन्ध होना
28.	इसका क्रोध वश में नहीं है	आपे से बाहर होना
29.	शैतान की आँत	बहुत लम्बी वस्तु
30.	सूरत नजर आना	बहुत दिनों बाद दिखाई पड़ना
31.	कौड़ी को न पूछना	निकम्मा होना

7.5.2 लोकोक्ति

लोकोक्ति का अर्थ है, लोक की उक्ति अर्थात जन-कथन। लोकोक्तियाँ अथवा कहावतें लोक-जीवन की किसी घटना या अंतर्कथा से जुड़ी रहती हैं। इनका जन्म लोक-जीवन में ही होता है। प्रत्येक लोकोक्ति समाज में प्रचलित होने से पूर्व में अनेक बार लोगों के अनुभव की कसौटी पर कसी गई है और सभी लोगों के अनुभव उस लोकोक्ति के साथ एक से रहे हैं, तब वह कथन सर्वमान्य रूप से हमारे सामने हैं। लोकोक्तियाँ दिखने में छोटी लगती हैं, परंतु उनमें अधिक भाव रहता है। लोकोक्तियों के प्रयोग से रचना में भावगत विशेषता आ जाती है।

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार, *"विभिन्न प्रकार के अनुभवों, पौराणिक तथा ऐतिहासिक व्यक्तियों एवं कथाओं, प्राकृतिक नियमों एवं लोक विश्वास आदि पर आधारित चुटीला, सरगर्भित, सजीव, संक्षिप्त लोक प्रचलित ऐसी उक्तियों को लोकोक्ति कहते हैं जिनका प्रयोग बात की पुष्टि या विरोध, सीख तथा भविष्य कथन आदि के लिए किया जाता है।"*[222]

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, *"जनता में प्रचलित कोई छोटा सा सारगर्भित वचन, अनुभव अथवा निरीक्षण द्वारा निश्चित या सबको ज्ञात किसी सत्य को प्रकट करने वाली कोई संक्षिप्त उक्ति लोकोक्ति है।"*[223]

अरस्तु के अनुसार, *"संक्षिप्त और प्रयोग करने के लिए उपयुक्त होने के कारण तत्वज्ञान के खंडहरों में से चुनकर निकाले हुए टुकड़े बचा लिए गए अंश को लोकोक्ति की संज्ञा से अभिहित किया जा सकता है।"*[224]

धीरेंद्र वर्मा के अनुसार, *"लोकोक्तियां ग्रामीण जनता की नीति शास्त्र है। यह मानवीय ज्ञान के घनीभूत रत्न हैं।"*[225]

साधारणतया लोक में प्रचलित उक्तियों को लोकोक्ति कहा जाता है। 'लोकोक्तियों' को 'कहावतों' के नाम से भी जाना जाता है। लोकोक्तियाँ अंतर्कथाओं से भी संबंध रखती हैं। लोकोक्तियाँ स्वतंत्र वाक्य होती हैं, जिनमें एक पूरा भाव छिपा रहता है। किसी दृष्टान्त, घटना या परिस्थिति पर आधारित कथन होता है। लोकोक्तियाँ सामाजिक नीति और आदर्श स्थापित करने का माध्यम बनती हैं। लोकोक्तियों को सूक्ति अथवा सुभाषित भी कहा जाता

---

[222] वृहत हिंदी लोकोक्ति कोश; डॉ. भोलानाथ तिवारी; पृष्ठ- 13

[223] आक्सफोर्ड डिक्शनरी

[224] पोएटिक्स; अरस्तु

[225] हिंदी साहित्य का इतिहास; धीरेंद्र वर्मा; पृष्ठ- 102

है। लोकोक्तियों की सबसे खूबसूरत बात यह होती है कि लोकोक्तियाँ किसी कटु बात को भी मनोरंजक अंदाज में बयाँ करती हैं, जिससे बात कहने और सुनने वाले के मध्य किसी तरह का तनाव उत्पन्न नहीं होता। लोकोक्तियाँ समाज को धर्म और नैतिकता की राह पर चलने का मार्ग बताती हैं, जिससे समाज में स्थिरता बनी रहती है। लोकोक्तियाँ समाज के प्रत्येक वर्ग को एक स्तर पर जोड़ने का काम करती हैं। लोकोक्तियों का चलन प्राचीन समय से ही है। अतः लोकोक्तियों के माध्यम से हम, हमारे पूर्वजों का जीवन के प्रति दृष्टिकोण और उस समय की व्यवस्था को समझ सकते हैं।

उदाहरण के रूप में ('बिट्टन मर गई' कहानी से) -:

"गुल्लू की बतायी बातों पर कुछ देर तक वह शून्य में आंखें गड़ाकर सोचता रहा। फिर उसने एक लम्बी सांस छोड़ी और गुल्लू की ओर देखते हुए बोला, 'खैर, बिट्टन की क्या राय है ?'"[226]

इसका अर्थ है- एकटक देखते जाना।

('मूवमेंट' कहानी से) -:

"'यदि वह कुछ जिम्मेदारी समझता तो यह नौबत ही क्यों आती ? आँख का अँधा नाम नयनसुख हो गया है' एक विवशतापूर्ण दृष्टि 'उस' ने सुनीता पर डाली और अपनी बात पूरी की, 'उससे तो न पहले कोई उम्मीद थी, न अब है।'"[227]

इसका अर्थ हुआ - गुण के विरुद्ध नाम होना।

('लाठी' कहानी से) -:

---

[226] तलाश; जयप्रकाश कर्दम; पृष्ठ- 72

[227] वही; पृष्ठ- 86

"हाथों से हरिसिंह की कमर को सहलाने के साथ-साथ वह मुँह से बदनी के लिए गालियाँ निकालती रही । ढेर सारी गालियाँ निकाल चुकने के बाद उसने कहा बाड़ ही जब खेत को खाए तो रखवाली कौन करे । बहुत देर तक कमर दबाते रहने से उसके हाथ भी थक गए थे । आखिरी बार उसने फिर बदनी को कोसा और हरिसिंह की कमर दबाना बंद कर वह अपनी खाट पर जाकर एट गई ।"[228] इसका अर्थ हुआ - रक्षक का भक्षक हो जाना ।

('तीन झूठ' कहानी से) -:

" 'नाम बड़े और दर्शन छोटे' मुस्कुराते हुए अप्पलरानी ने कहा । अप्पलरानी साफ मन की युवती थी । वह खुलकर हँसती थी । वह किसी के सामने न आती थी । पर वह सभी से बातें करती थीं । सुवर्ण रंग की अप्पलरानी का चेहरा पसीने के कारण चमकता रहता था ।"[229]

इसका अर्थ हुआ - किसी चीज का उस तरह न होना जैसा उसके बारे मे बताया गया हो ।

('रिहाई' कहानी से) -:

"ट्रकों के आने से ही सुगनी सहम गई थी । मिट्ठन को तेज बुखार है, उसे कैसे उठाए...यह ख्याल ही उसे भयभीत कर रहा था । उसने हड़बड़ाहट में लाला से पूछा, 'इतनी रात में...' बात पूरी होने से पहले ही लाला ने उसे डपट दिया, 'ज्यादा जबान न चला...जा उसे उठा...बासी बचे न कुत्ता खाय...इतना टाइम नहीं है । जल्दी से माल उतारना है ।"[230]

इसका अर्थ हुआ - जरूरत के अनुसार ही सामान बनाना ।

ऐसे ही और भी कई लोकोक्तियों का प्रयोग इन कहानी-सग्रहों में किया गया है जिसे हम आगे इस टेबल में देखते हैं-

---

[228] वही; पृष्ठ- 90

[229] श्रेष्ठ दलित कहानियां; डॉ. जी. वी. रत्नाकर; पृष्ठ- 70

[230] घुसपैठिये; ओमप्रकाश वाल्मीकि; पृष्ठ- 74

	कहानियों में प्रयुक्त लोकोक्तियाँ	उसके अर्थ
1.	अधजल गगरी छलकत जाए	थोड़ा होने पर अधिक दिखावा करना
2.	बारह गाँव का चौधरी अस्सी गाँव का राव, अपने काम न आवे तो ऐसी-तैसी में जाव	बड़ा होकर यदि किसी के काम न आए, तो बड़प्पन व्यर्थ है
3.	बासी कढ़ी में उबाल नहीं आता	काम करने के लिए शक्ति का होना आवश्यक होता है
4.	बीमार की रात पहाड़ बराबर	खराब समय मुश्किल से कटता है
5.	बुढ़िया मरी तो आगरा तो देखा	प्रत्येक घटना के दो पहलू होते हैं – अच्छा और बुरा
6.	अपना घर दूर से सूझता है	अपने मतलब की बात कोई नहीं भूलता या प्रियजन सबको याद रहते हैं
7.	अशुभस्य काल हरणम्	जहां तक हो सके, अशुभ समय टालने का प्रयत्न करना चाहिए
8.	आगे कुआं, पीछे खाई	दोनों तरफ विपत्ति होना
9.	आप मियाँ मांगते दरवाजे खड़ा दरवेश	जो मनुष्य स्वयं दरिद्र है वह दूसरों को क्या सहायता कर सकता है
10.	इक नागिन अस पंख लगाई	किसी भयंकर चीज का किसी कारणवश और भी भयंकर हो जाना

11.	इब्तिदा-ए-इश्क है । रोता है क्या, आगे-आगे देखिए, होता है क्या	अभी तो कार्य का आरंभ है; इसे ही देखकर घबरा गए, आगे देखो क्या होता है
12.	ईश रजाय सीस सबही के	ईश्वर की आज्ञा सभी को माननी पड़ती है
13.	ढाक तले की फूहड़, महुए तले की सुघड़	जिसके पास धन नहीं होता वह गुणहीन और धनी व्यक्ति गुणवान् माना जाता है
14.	टेर-टेर के रोवे, अपनी लाज खोवे	जो अपनी हानि की बात सबसे कहा करता है उसकी साख जाती रहती है
15.	जोगी जुगत जानी नहीं, कपड़े रंगे तो क्या हुआ	गैरिक वस्त्र पहनने से ही कोई जोगी नहीं हो जाता
16.	जो गुड़ खाय वही कान छिदावे	जो आनंद लेता हो वही परिश्रम भी करे और कष्ट भी उठावे
17.	जैसा देश वैसा वेश	जहाँ रहना हो वहीं की रीतियों के अनुसार आचरण करना चाहिए
18.	जान है तो जहान है	यदि जीवन है तो सब कुछ है इसलिए सब तरह से प्राण-रक्षा की चेष्टा करनी चाहिए
19.	एक पंथ दो काज	एक काम से दूसरा काम हो जाना

20.	ऊँची दुकान फीका पकवान	केवल बाह्य प्रदर्शन
21.	भेड़ की ऊन कोई नहीं छोड़ता	जो कमजोर है, उसका हर कोई शोषण करता है
22.	पुचकारता कुत्ता सिर चढ़े	ओछे लोग मुँह लगाने पर अनुचित लाभ उठाते हैं
23.	मखमली जूते मारना	मीठी बातों से लज्जित करना
24.	चूहे घर में डण्ड पेलते है	अत्यधिक दयनीय स्थिति
25.	डंके की चोट पर कहना	सबके सामने घोषित करना
26.	भेड़ की लात घुटनों तक	कमजोर आदमी किसी का अधिक नुकसान नहीं कर सकता
27.	चमड़ी जाए पर दमड़ी न जाए	अत्यधिक कंजूस होना
28.	पगड़ी उछालना	अपमानित करना
29.	घर में नहीं दाने, अम्मा चली भुनाने	झूठी शान दिखाना
30.	खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचे	दूसरे के क्रोध को अनुचित स्थान पर निकालना
31.	हाथ फैलाना	किसी से विवशतापूर्ण माँगना
32.	इमली के पात पर दण्ड पेलना	संसाधनों के अभाव में बड़े कार्य को करने की कोशिश करना

33.	उतर गई लोई तो क्या करेगा कोई	बेशर्म व्यक्ति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता
34.	कानी के ब्याह में कौतुक ही कौतुक	किसी में दोष होने पर परेशानियां आती ही रहती हैं
35.	चुपड़ी और दो-दो	किसी अच्छी चीज़ का अधिक मात्रा में होना

इस प्रकार से इन कहानी-संग्रह में और भी कई मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग हुआ है।

निष्कर्ष

यह भाषाविज्ञान का वह भाग है जो किसी भाषा में शब्दों, वाक्यांशों और वाक्यों के अर्थ के अध्ययन और विश्लेषण से संबंधित है। इसमें शब्दों के अर्थों का अध्ययन शामिल है कि उनकी व्याख्या, अवलोकन, स्पष्टीकरण, सरलीकरण, विरोधाभास और उत्पत्ति कैसे की जाती है। यह भाषाविज्ञान का वह भाग है जो किसी भाषा में शब्दों, वाक्यांशों और वाक्यों के अर्थ के अध्ययन और विश्लेषण से संबंधित है। समाज में प्रचलित व्यव्हार से शब्दों के अर्थ का बोध हो जाता है। व्यक्ति समाज से ही भाषा सीखता है। और उस व्यव्हार से ही अर्थ ग्रहण सीखता है। शब्द शक्ति किसी भी शब्द के वास्तविक रूप को प्रकट करने का सामर्थ्य रखती है। इसके माध्यम से शब्दों की बारीकियों का प्रयोग किया जाता है। अपने भावों को प्रकट करने के लिए व्यक्ति शब्दों का प्रयोग करता है उन्हें और अधिक प्रभावी बनाने के लिए इसका प्रयोग करता है। मुहावरों का प्रयोग मुहावरों में भी लाक्षणिक अर्थ जुड़ जाते हैं। मुहावरों में दो या अधिक शब्दों का प्रयोग होता है, जो लाक्षणिक अर्थों को

अभिव्यक्त करते हैं। लोकोक्ति समाज का सही मार्गदर्शन कर धार्मिक एवं नैतिक उपदेश देता है। हास्य और मनोरंजन में प्रयोग आता व सर्वव्यापी एवं सर्वग्राही है। प्राचीन परम्परा से यह चली आ रही और जीवन के सभी पहलुओं को स्पर्श करती हुई अनुभव पर आधारित एवं जीवनोपयोगी बातों के बारे में सुझाव देती हैं। लोकोक्ति और मुहावरों में अन्तर है। मुहावरा पूर्णतः स्वतंत्र नहीं होता है, अकेले मुहावरे से वाक्य पूरा नहीं होता है। लोकोक्ति पूरे वाक्य का निर्माण करने में समर्थ होती है। मुहावरा भाषा में चमत्कार उत्पन्न करता है जबकि लोकोक्ति उसमें स्थिरता लाती है। मुहावरा छोटा होता है जबकि लोकोक्ति बड़ी और भावपूर्ण होती है। लोकोक्ति का वाक्य में ज्यों का त्यों उपयोग होता है। मुहावरे का उपयोग क्रिया के अनुसार बदल जाता है लेकिन लोकोक्ति का प्रयोग करते समय इसे बिना बदलाव के रखा जाता है। हाँ, कभी-कभी काल के अनुसार परिवर्तन सम्भव है। और अंत में अपने सभी अध्यायों का और साथ ही अपने शोध कार्य के निचोड़ को उपसंहार में स्पष्ट करते हैं।

उपसंहार

दलित साहित्य ने भारतीय साहित्य को नया आशय एवं अभिव्यक्ति दी है। जो समाज युगों-युगों से हाशिये पर था उसे केंद्र में लाकर उसके यथार्थ को भारतीय समाज के सामने रखा है। दलित साहित्य ने दलित लेखन को एक वैज्ञानिक सोच दी है। जीवन को सभी दृष्टियों से देखकर उसके सत्य पक्ष को स्वीकार करने की वैज्ञानिक सोच दलित साहित्य ने रचनाकार को दी है। समाज में जो क्रिया-प्रतिक्रियायें घटती होती हैं, उसका अंकन साहित्य में दिखाई देता है। मानव और समाज जीवन में अलग-अलग प्रकार के प्रसंग अलग-अलग प्रकार की घटनायें घटित होती हैं। उसका प्रभाव साहित्यकार के दिलों-दिमाग पर पड़ता है। ऐसे संवेदनशील सहृदय के प्रबुद्ध चेता साहित्यकार अपने युगीन परिवेश को और युगीन घटनाओं को आधार मानकर साहित्य सृजन करता है।

दलित साहित्य लिखने वालों में एक पक्ष हम यह देखते हैं कि दलित साहित्यकार और गैर-दलित साहित्यकार। दलित साहित्यकार, गैर-दलित साहित्यकारों को दलित रचनाकार नहीं मान रहे हैं। इसका मूल कारण यह है कि दलित साहित्यकार का विचार है कि गैर-दलित साहित्यकार दलित लोगों के जीवन को दूर से महसूस करते हैं। लेकिन दलित साहित्यकार अपने में भोगे हुए निजी

घटनाओं और अनुभवों को शब्दबद्ध करते हैं। इस प्रकार उनके लेखन में सच्चाई ज्यादा होने के कारण गैर-दलित साहित्यकारों को कम मान्यता दी जा रही है।

कहानी विधा की पहली शर्त रोचकता, पठनीयता तथा संप्रेषणीयता है। कहानी में मानवीय सम्भावना ही उसकी विश्वसनीयता का आधार होती है। जीवन में होने वाली घटनाओं में संयोग का भी स्थान होता है आकस्मिकतायें भी होती हैं। कहानी विभिन्न वर्गों तथा मानसिक ऊहापोहों की जटिलता का मानस स्वरूप होती अपने बृहत्तर विन्यास होती है। हिंदी दलित कहानियों में दलित समाज में हो रहे परिवर्तनों की आहट साफ सुनाई दे रही है, चाहे वह व्यक्ति के भीतर हो रहे हो या बाहर। दलित कहानी का प्रभाव उसके सच की बेखौफ अभिव्यक्ति में है। दलित कहानी सामाजिक बदलाव का दस्तावेज है। दलित कहानी सृजन में चेतना की अपरिहार्यता व उपयोगिता आवश्यक ही नहीं बल्कि अपरिहार्य है। दलित कहानी में दलितों की अस्मिता एवं अस्तित्व का संघर्ष शब्दों के माध्यम से आकार पता है। दलित कहानी परम्परागत कलात्मकता से इतर अनगढ़ व अटपटे शब्दों में सामाजिक अन्याय के खिलाफ विद्रोह की कहानी है। दलितों की कहानी वही निखरता है, जहाँ सदियों का संताप जो दलितों ने सहे है वह यथार्थ अभिव्यक्ति पाता है। यहाँ कोमल और मधुर शब्दों का प्रयोग न होकर सीधी सपाट प्रभावोत्कर्ष पूर्ण अभिव्यक्ति होती है। यहाँ जो कुछ सामने है पूर्ण रूप में नग्न और यथार्थ रूप में अभिव्यक्ति पाता है।

शोध की शुरुआत में साहित्य का शाब्दिक अर्थ और उसकी अवधारणा को समझा गया है। दलितों की परम्परा पुरानी होने के कारण ही आज हमारे साहित्य में इनकी प्रमुखता बनी हुई है। साहित्य की विधाओं में कहानी विधा को चुनकर पूरे भारतीय साहित्य के स्वर को एक नयी दिशा दी गयी है। यही **प्रथम अध्याय** कि समग्रता में देखें तो हिंदी में दलित साहित्य का आना उसके लिए सुखद ही रहा क्योंकि यह सच है कि हिंदी साहित्य से जुड़ते ही दलित साहित्य व्यापक स्तर पर चर्चित हुआ जिसे कि हिंदी साहित्य में दलित वाद, हिंदी साहित्य में दलित साहित्य का स्थान जैसे उप-अधयायों में समझा गया है। दलित साहित्य की अवधारणा और स्वरूप, दलित कहानी का उद्भव और विकास में इनके शाब्दिक और शब्दकोशीय अर्थों को समझा गया है और साथ ही विद्वानों की परिभाषाओं के साथ-साथ पीढ़ी-दर-पीढ़ी दलित कहानी के विकास और साथ ही दलित तेलुगु साहित्य की भी चर्चा की गयी है।

द्वितीय अध्याय में दलित साहित्य में रचित 1980 और 1990 के दशक और उसके बाद की कहानियों की बात की गयी है साथ ही ओमप्रकाश वाल्मीकि, जयप्रकाश कर्दम और डॉ. जी. वी. रत्नाकर जैसे दलित कहानीकारों का विवेचन किया है। दलित कहानी के विभिन्न रूप एवं पक्ष में यह कहा जा सकता है कि दलित कहानीकारों ने अपनी कहानियों के द्वारा दलित समाज की विविध समस्याओं, मुद्दों और जीवित यथार्थ को सत्यता और अनुभव के साथ अपनी कहानियों में रचा है।

विषयवस्तु, कथानक, चरित्र-चित्रण, देशकाल तथा वातावरण और भाषा के जरिये दलित कहानियों पर बात की गयी है। मिश्रित भाषा, अमानक भाषा का प्रयोग, भाषा में आंचलिकता का होना यह सभी गुण दर्शाए गये हैं। इसके आगे के अध्यायों व उप-अध्यायों में भाषा की अलग-अलग परतों का विश्लेषण किया गया है।

संरचना जो कि एक से अधिक घटकों के अंत:सम्बंधों का नाम है, को समझते हुए संज्ञा, संज्ञा के प्रकार- व्यक्तिवाचक, जातिवाचक, भाववाचक, समूहवाचक और द्रव्यवाचक संज्ञा किसी वस्तु, प्राणी, व्यक्ति, गुण, भाव या स्थान के लिये नहीं अपितु 'नाम' के लिये किया जाता है और संज्ञा की विशेषता को उदाहरणों के द्वारा **तृतीय अध्याय** में समझाया गया है। विशेषण जो किसी संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताएं, विशेषण वस्तु का स्वरूप स्पष्ट करता है। इसका प्रयोग वस्तु को सजीव व मूर्तीमत करता है। प्रविशेषण, विशेषण के प्रकार- गुणवाचक, संख्यावचक, परिमाणवाचक और संकेतवाचक विशेषण संज्ञा के आभूषण है और इनके प्रयोग उसी प्रकार विभूषित होते हैं। क्रिया के प्रयोगों में विचलन अर्थात विचलन व्याकरणिक होता है, सोदेश्य होता है, उसमें लेखक का उद्देश्य अपनी बात को अग्रप्रस्तुत करने का होता है। क्रिया के भेद- अकर्मक व सकर्मक क्रिया में उदाहरण के जरिए बात को रखा गया है। संज्ञा का क्रियारूप प्रयोग में संज्ञा या सर्वनाम या विशेषण के अंत में प्रत्यय लगाने से जो क्रिया बनती है उन शब्दों को दिखाया गया है, क्रिया का संज्ञारूप प्रयोग में क्रिया में निर्धारक शब्द जोडकर वाक्य को फिर से

पुनर्व्यवस्थित करने से इसका प्रयोग किया जाता है। विशिष्ट विशेषण, विशेषण पदबंध, सादृश्यमूलक विशेषण के जरिये चयनित दलित कहानियों का उदाहरण सहित विश्लेषण किया गया है।

सबसे जरूरी होता है कि शब्दों का चयन कैसा हो क्योंकि साहित्यिक कृति का एक टुकड़ा लिखते समय भी विभिन्न प्रकार की शब्दावली को संयोजित करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है। तत्सम शब्द, तद्भव शब्द, देशज शब्द, देशज शब्द के प्रकार- अनुकरण वाचक देशज शब्द और अनुकरण रहित देशज शब्द यानी कि किसी जीव या वस्तु की काल्पनिक या वास्तविक ध्वनि को ध्यान में रखकर शब्दों का निर्माण और साथ ही वो शब्द जिसके निर्माण की प्रक्रिया का पता ही न हो। विदेशी शब्द जिसमें कि अरबी, फारसी, पुर्तगाली, तुर्की और अंग्रेजी सभी शब्दों का प्रयोग इन कहानियों में कहानीकारों ने किया है। आंचलिक शब्द जो किसी क्षेत्र विशेष को दर्शाते हैं तो वहीं कोड मिश्रण जो कि मूल भाषा में शब्द होने के बावजूद दूसरी भाषा के शब्द का प्रयोग करते है ऐसे कई उदाहरण इन चयनित कहानियों में देखे गये हैं। समास रूप, समास के प्रकार और पारिभाषिक शब्द जो कि आम बोलचाल की भाषा के शब्द न होकर ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों से जुडे होते हैं और ये शब्द एक ही शब्द होकर भी कई क्षेत्रों में मिलते हैं और इनके अर्थ भी अलग-अलग जगह अलग होते है तो ऐसे शब्दों की भरमार भी कहानियों में पायी गयी है। पारिभाषिक शब्दों के प्रकार- पारिभाषिक, अर्द्ध पारिभाषिक और सामान्य शब्द के

साथ पारिभाषिक शब्दों के निर्माण की परतों द्वारा चयनित दलित कहानियों का उदाहरण के साथ विश्लेषण **चतुर्थ अध्याय** में किया गया है।

पंचम अध्याय: दलित कहानियों का वाक्यविन्यासात्मक विश्लेषण के अंतर्गत वाक्य के पाँच लक्षण बताए गये हैं और साथ ही भर्तहरि और पतंजलि की परिभाषाओं का जिक्र किया गया है। वाक्यविन्यास का वर्गीकरण का दो आधार किया गया है- रचना के आधार पर वर्गीकरण और अर्थ के आधार पर वर्गीकरण जहाँ रचना के आधार पर सरल, मिश्र और संयुक्त वाक्य को देखा गया है तो वहीं अर्थ के आधार पर विधिवाचक, निषेधवाचक, आज्ञावाचक, विस्मयवाचक, संदेहवाचक, इच्छावाचक, संकेतवाचक और प्रशनवाचक वाक्य हैं। पदक्रम जो कि शब्द से बड़ी किसी भी रचना में शब्दों का पूर्वापर क्रम कहलाता है तो वहीं पदक्रम के कुछ नियमों के द्वारा चयनित कहानियों के उदाहरणों को भी समझा गया है। सभी भाषाओं में वाक्य-रचना के लिए पदों के क्रम पर अल्प-अनल्प ध्यान रखा जाता है, जिससे लिखित वाक्य अपने निश्चित अर्थ का बोध करा सके। पदबंध जो कि अनेक पदों का समूह होता है के अलावा पदबंध के कार्य, पदबंध के प्रकार और उपवाक्य जो कि दो या अधिक सरल वाक्य मिलकर एक वाक्य बनाते हैं और उन मिले हुए वाक्यों को उपवाक्य कहा गया है और इनका साथ ही प्रकार की भी चर्चा कहानियों के उदाहरण के जरिये की गयी है। और इस अध्याय के अंत में उप-अध्याय के रूप में वाक्य का चयन किस प्रकार से दलित कहानियों में किया गया है, वाक्य-चयन के

प्रकार दो आधारों पर किए गए हैं। और जब बात पदक्रम और पदबंध की हो रही हो तो मेल या अनुरूपता यानी कि अन्विति की चर्चा भी की गयी है साथ ही अन्विति सम्बंधी महत्वपूर्ण नियम, दलित कहानियों में प्रयुक्त होने वाली अमानक भाषा का प्रयोग, इन सभी भेदों के अंतर्गत चयनित दलित कहानियों का उदाहरण बताकर विश्लेषण किया गया है।

दलित कहानियों की प्रोक्ति संरचना के अंतर्गत प्रोक्ति को समझना, प्रोक्ति की अवधारणा, प्रोक्ति के पांच घटक, प्रोक्ति और पाठ, प्रोक्ति के प्रकार, संलाप और एकालाप की चर्चा और उनके प्रकार, संसक्ति, संसक्ति के आयाम, अपनी बात कहने का ढंग यानी कि कथन-शैली, कथन-शैली के प्रकार, इन सब के द्वारा चयनित दलित कहानियों का उदाहरणस्वरूप विश्लेषण किया गया है। जहाँ सम्प्रेषण के स्तर पर भाषा की मूल इकाई 'प्रोक्ति' है वहीं व्याकरणिक संरचना के स्तर पर भाषा की सबसे बडी इकाई 'वाक्य' है। प्रोक्ति शब्द प्र+उक्ति = प्रोक्ति बन जाता है। तर्कपूर्ण क्रमयुक्त और आपस में आंतरिक रूप से सुसंबद्ध, एकाधिक वाक्यों की ऐसी व्यवस्थित इकाई को प्रोक्ति कहते हैं जो संदर्भ-विशेष में अर्थद्योतन की दृष्टि से पूर्ण हो। प्रोक्ति मूलत: बातचीत है, उसका निर्णय आका से नहीं प्रकार्य से होता है जैसी और भी कई घटकों को यहाँ दर्शाया गया है। 'प्रोक्ति और पाठ' जो कि **षष्ठम अध्याय** के अंतर्गत आते हैं उसका सम्बद्ध एवं तर्कसंगत रूप से अन्वित वाक्यों को पाठ के अंतर्गत माना गया है और उनके अध्ययन को 'पाठ विश्लेषण' कहा गया है। संसक्ति का अर्थ होता है-

जुड़ाव अर्थात यदि पाठ में जुड़ाव अर्थात संसक्ति नहीं होगी तो वह प्रोक्ति की संज्ञा प्राप्त नहीं कर सकता। संसक्ति के प्रकारों में चयनित कहानियों के उदाहरण सहित उन्हें समझने की कोशिश की गयी है। और आखिरी उप-अध्याय कथन-शैली यानी कि लेखक जो कहना चाहता है और अपनी बात को स्पष्ट रूप से पाठक वर्ग तक पहुंचाने की कला को हम इन दलित कहानियों में देख सकते हैं क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति का कहने का अपना अलग तरीका होता है और कथन-शैली अभिव्यक्ति का तरीका है।

सप्तम अध्याय: दलित कहानियों का अर्थ विधान के अंतर्गत अर्थ का शाब्दिक रूप, अर्थ की अवधारणा, शब्द शक्ति, शब्द शक्ति के प्रकार, अभिधा शब्द शक्ति, अभिधा शब्द शक्ति के प्रकार, लक्षणा शब्द शक्ति, लक्षणा शब्द शक्ति के प्रकार, व्यंजना शब्द शक्ति, व्यंजना शब्द शक्ति के प्रकार, पर्यायवाचक, पर्यायवाची शब्द के प्रकार, अप्रस्तुत विधान, मुहावरा, मुहावरों का वर्गीकरण, लोकोक्तियाँ, इन सभी में उदाहरणों के जरिये चयनित दलित कहानियों का विश्लेषण कर उन्हें समझा गया है। अर्थ शब्द की आत्मा है और शब्द शरीर है और अर्थ विज्ञान में शब्दार्थ के आंतरिक पक्ष का विवेचन, विश्लेषण किया जाता है। इसे अंग्रेजी में 'semantics' भी कहते हैं। शब्द से अर्थ का बोध तो होता है किंतु सभी शब्दों से सभी अर्थों का बोध नहीं होता अपितु किसी निश्चित शब्द से किसी निश्चित अर्थ का ही बोध होता है और इन्हीं सब बातों को अर्थ की अवधारणा में उदाहरण के रूप में समझा गया है

। शब्द तथा अर्थ के सम्बंध को शब्द शक्ति कहते हैं और साथ ही इसे व्यापार भी कहा है और यह मुख्यता तीन प्रकार में विभाजित है- अभिधा, लक्षणा और व्यंजना । किसी भी शब्द का पर्याय जरूर होता है और ऐसे दुनिया में कई पर्यायवाची शब्द बने हैं तो दलित कहानियों के अलग से तो कुछ 'समान' शब्द तो नहीं है पर हाँ क्षेत्रीय भाषा के प्रभाव के कारण थोड़ा अंतर जरूर मिलता है ।

इस प्रकार दलित कहानियों की कथा भाषा की जो विशेषताएं उपर्युक्त सोदाहरण विवेचन, विश्लेषण से उभरकर सामने आयी है । उनमें सबसे प्रमुख तो यह है दलित कहानीकारों ने दलित जीवन के विषय यथार्थ को मानक अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए साधारण बोलचाल की भाषा को अपनाया है । इसके लिए उन्होंने जहाँ एक ओर देशज और बोलीगत शब्दों का चयन किया है वहीं लोक जीवन में बहुप्रचलित मुहावरों और लोकोतियों का सफल प्रयोग किया है और वहीं प्रोक्ति और अर्थ विधान को भी दर्शाया है । इन कहानियों के भाषिक सौंदर्य का पहलू यह है कि इनमें अप्रस्तुत विधान वास्तविकता का बोध लिए हुए हैं । इसी प्रकार विविध स्थितियों, पात्रों और मनोभावों के विवरणों में भी दलित वातावरण और दलित मानसिकता का प्रभावशाली अंकन हुआ है ।

दलित कहानियों के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि ये सारी कहानियाँ आम दलित जनता की भाषा में कही गयी हैं । इनमें ज्यादातर पात्र अशिक्षित मजदूर और दबे हुए वर्ग के प्रतिनिधि होने के कारण इनकी भाषा में औपचारिकता कम है ।

दलितों की भाषा तो अपने जीवन संग्राम की भाषा है, उनके साहित्य में यही भाषा तो अभिव्यक्त होती है। उसमें अधिक रूप से क्षेत्रीय शब्दों का प्रयोग हुआ है। यह आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि ये कहानियाँ पिछड़े गाँव में रहने वाली जनता की कहानियाँ हैं। दलित कहानियों के भाषा पक्ष पर विचार करने की सही दृष्टि यही हो सकती है।

इस शोध-कार्य की उपलब्धियों को आगे बताया गया है -

- प्रस्तुत शोध-कार्य में चयनित दलित कहानी-संग्रहों का व्याकरणपरक विश्लेषण किया गया है।
- मेरी सीमित जानकारी के अनुसार 'दलित कहानियों का भाषिक विश्लेषण' में चयनित कहानियों पर शोध की दृष्टि से किया गया यह प्रथम प्रयास है।
- यहाँ सिर्फ आम बोलचाल की भाषा पर ही ध्यान नहीं दिया गया अपितु रूपपरक, शब्दपरक, वाक्यविन्यासात्मक रूप से भी दलित कहानियों का विवेचन किया गया है।
- भाषा के क्षेत्र में दलित कहानियों पर ज्यादा काम न होकर यह एक नया द्वार खोलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

आधार ग्रंथ

- कर्दम,जयप्रकाश; तलाश; विक्रम प्रकाशन,2005,प्रथम संस्करण,दिल्ली
- रत्नाकर, डॉ. जी. वी.; श्रेष्ठ दलित कहानियाँ; गीता प्रकाशन,2005,प्रथम संस्करण,हैदराबाद
- वाल्मीकि,ओमप्रकाश; घुसपैठिये; राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,2003,पहला संस्करण,नई दिल्ली

सहायक ग्रंथ

- ओमवेट,गेल; दलित दृष्टि; वाणी प्रकाशन,2011,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- कर्दम, जयप्रकाश; दलित साहित्य सामाजिक बदलाव की पटकथा; अमन प्रकाशन,2016,पहला संस्करण,कानपुर
- कर्दम,डॉ. जयप्रकाश; दलित साहित्य-2011(वार्षिकी); ज्योति प्रकाशन,2011,प्रथम संस्करण,गाजियाबाद

- कुमार, निरंजन; मनुष्यता के आईने में दलित साहित्य का समाजशास्त्र; अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड,2010,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- कुमार,डॉ. सुरेश; शैलीविज्ञान; वाणी प्रकाशन,2010,तृतीय संस्करण,नई दिल्ली
- ‘कमल’,डॉ. राजवीर सिंह; दलित समाज: दशा और दिशा; कांती पब्लिकेशंस,2007,प्रथम संस्करण,दिल्ली
- कट्टीमनी,टी. वी.; दलित साहित्य का समाजविज्ञान; शिल्पायन,2013,संस्करण,दिल्ली
- कुमार,डॉ. सुरेश; शैलीविज्ञान; वाणी प्रकाशन,2010,तृतीय संस्करण,नई दिल्ली
- कपूर,बदरीनाथ; वाक्य-संरचना और विश्लेषण नय प्रतिमान; राधाकृष्ण प्रकाशन,2008,पहली संस्करण,नई दिल्ली
- गुरू,पण्डित कामताप्रसाद; हिंदी व्याकरण; तक्षशिला प्रकाशन,2013,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- गुप्ता,रमणिका; दलित चेतना साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकार; समीक्षा पब्लिकेशन्स,2008,संस्करण,दिल्ली

- गुप्ता,रमणिका; दलित हस्तक्षेप; अक्षर शिल्पी प्रकाशन,2012,संस्करण,दिल्ली
- गुप्ता,डॉ. दीप्ति; दलित आंदोलन और सामाजिक न्याय; राधा पब्लिकेशंस,2010,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- गोस्वामी,कृष्ण कुमार; शैक्षणिक व्याकरण और व्यावहारिक हिंदी; आलेख प्रकाशन,1981,प्रथम संस्करण,दिल्ली
- गोदरे,डॉ. विनोद; प्रयोजनमूलक हिंदी; वाणी प्रकाशन,2016,आवृत्ति,नई दिल्ली
- जैन,पी. सी.; हिंदी प्रयोग एक शैक्षिक व्याकरण; वाणी प्रकाशन,2002,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- ठाकुर,हरिनारायण; दलित साहित्य का समाजशास्त्र; भारतीय ज्ञानपीठ,2010,पहला संस्करण,नई दिल्ली
- डॉ. महेशानंद; हिंदी वाक्य रचना का विकास; सूर्य-भारती प्रकाशन,1999,प्रथम संस्करण,दिल्ली
- डॉ. ब्रजमोहन; अर्थविज्ञान; वाणी प्रकाशन,2009,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- तिवारी,डॉ. भोलानाथ; हिंदी भाषा; किताब महल,2009,प्रस्तुत संस्करण,इलाहाबाद

- थोरात,विमल; दलित साहित्य का स्त्रीवादी स्वर; अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्राइवेट लिमिटेड,2008,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- दलवी,डॉ. शिवाजी सुखदेव; जयप्रकाश कर्दम के साहित्य में दलित जीवन का अनुशीलन; मनभावन प्रकाशन,2014,प्रथम संस्करण,दिल्ली
- दुबे,अभय कुमार(संपादक); आधुनिकता के आईने में दलित; वाणी प्रकाशन,2017,आवृत्ति,नई दिल्ली
- पांडेय,मैनेजर; साहित्य और दलित दृष्टि; स्वराज प्रकाशन,2015,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- पांडेय,पृथ्वीनाथ; आधुनिक हिंदी व्याकरण; भारतीय पुस्तक परिषद,2015,संस्करण,नई दिल्ली
- पांडे,हेमचंद्र; समसामयिक हिंदी व्याकरण; ग्रंथलोक,2012,प्रथम संस्करण,दिल्ली
- पाण्डेय,शशिभूषण 'शीतांशु'; शैलीविज्ञान प्रतिमान और विश्लेषण; देवदार प्रकाशन,1984,संस्करण,दिल्ली
- पिल्लै,डॉ. एन. पी. कुट्टन; हिंदी पर्याय-कोश; मिलिंद प्रकाशन,2000,द्वितीय प्रकाशन,हैदराबाद

- प्रो. चमनलाल; दलित साहित्य एक मूल्यांकन; राजपाल एंड संस,2017,संस्करण,दिल्ली
- बाहरी,हरदेव; हिंदी सिमैंटिक्स; लोकभारती प्रकाशन,1985,न्यू एडिशन,इलाहाबाद
- भारती,कंवल; दलित साहित्य और विमर्श के आलोचक; स्वराज प्रकाशन,2009,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- भारती,कंवल; दलितधर्म की अवधारणा और बौद्धधर्म; स्वराज प्रकाश,2012,संस्करण,नई दिल्ली
- मल,डॉ. पूरण; अस्पृश्यता एवं दलित चेतना; पोइन्टर पब्लिशर्स,1999,प्रथम संस्करण,जयपुर
- मौर्य, सर्वेश कुमार; यथार्थवाद और हिंदी दलित साहित्य; स्वराज प्रकाशन,2012,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- 'मीनू', रजत रानी; हिंदी दलित कथा-साहित्य: अवधारणाएं और विधाएं; अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स प्राइवेट लिमिटेड,2010,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली

- यादव,डॉ. वीरेंद्र सिंह (संपादक); इक्कीसवीं सदी का दलित आंदोलन: साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकार; राधा पब्लिकेशंस,2010,पहला संस्करण,नई दिल्ली
- यादव,बीर पाल सिंह(संपादक); दलित मुक्ति के प्रश्न वाया मुक्ति-पथ; स्वराज प्रकाशन,2010,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- वाल्मीकि,ओमप्रकाश; दलित साहित्य: अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ; राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,2013,पहला संस्करण,नई दिल्ली
- वर्मा,रामचंद्र; कोशकला; लोकभारती प्रकाशन,2007,नवीन संस्करण,इलाहाबाद
- 'विवेक',रामलाल; दलित क्रांति-दर्शन; संघी प्रकाशन,1991,प्रथम संस्करण,उदयपुर
- वाजपेयी,आचार्य किशोरीदास; हिंदी शब्द मीमांसा; मैत्रेय पब्लिकेशंस,2006,संस्करण,नई दिल्ली
- शर्मा,डॉ. प्रणव; केशव के काव्य का शैलीवैज्ञानिक अध्ययन; वाणी प्रकाशन,2009,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- शर्मा,रामकिशोर; भाषाविज्ञान हिंदी भाषा और लिपि; लोकभारती प्रकाशन,2015,द्वितीय संस्करण,इलाहाबाद

- शीतांशु,डॉ. इंदु; प्रोक्ति: स्वरूप, संरचना और शैली; प्रतिभा प्रकाशन,1989,प्रथम संस्करण,होशियारपुर
- सहाय,रामनाथ(अनुवादक); वाक्यविन्यास का सैद्धांतिक पक्ष; राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी,1975,प्रथम संस्करण,जयपुर
- सांभरिया,रत्नकुमार; दलित समाज की कहानियाँ; अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स प्राइवेट लिमिटेड,2011,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- सिंघल,उषा; शैली विज्ञान और नाटक; वाणी प्रकाशन,2000,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली
- सिंह,डॉ एन; दलित साहित्य परम्परा और विन्यास; वाग्देवी प्रकाशन,2011,प्रथम संस्करण,गाजियाबाद
- सिंह, डॉ. एन(संपादक); दलित साहित्य: चिंतन के विविध आयाम; आकाश पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रिब्यूटर्स,2009,द्वितीय आवृत्ति,गाजियाबाद
- सिंह,पी.एन.; हिंदी दलित साहित्य संवेदना और विमर्श; लोकभारती प्रकाशन,2019,प्रथम संस्करण,इलाहाबाद
- श्रीवास्तव,रविंद्रनाथ; व्यावहारिक हिंदी; वाणी प्रकाशन,2007,संस्करण,नई दिल्ली

- श्रीवास्तव,गरिमा; भाषा और भाषा विज्ञान; संजय प्रकाशन,2006,प्रथम संस्करण,नई दिल्ली

शब्द-कोश

- डॉ. युगेश्वर; हिंदी कोश विज्ञान का उद्भव और विकास; भारतीय विद्या प्रकाशन,1971,प्रथम संस्करण,वाराणसी
- बाहरी,डॉ. हरदेव(संपादक); कोश विज्ञान-सिद्धांत और प्रयोग; विश्वविद्यालय प्रकाशन,1989,प्रथम संस्करण,वाराणसी

पत्र-पत्रिकाएँ

- दलित अस्मिता; विमल थोरात(संपादक); अप्रैल-सितम्बर-2015
- दलित विशेषांक; कथा-क्रम; नवम्बर-2000
- दलित साहित्य; डॉ. जयप्रकाश कर्दम(संपादक); वार्षिकी-2013
- समकालीन दलित कहानी: कुछ वैचारिक बिंदु; रचना समय; मार्च-2016,कहानी विशेषांक-2

वेब सामग्री

- ए प्रोग्राम फॉर दि डिफिनेशन ऑफ़ लिटरेचर; सोल सपोर्टा; यूनिवर्सिटी ऑफ़ टैक्साज स्टडीज इन इंग्लिश,अंक-37,1958
- ओमप्रकाश वाल्मीकि के साहित्य में दलित प्रशन; visionsanjay.blogspot.in
- दलित कहानी की कथावस्तु-विशिष्ट्ता, सामाजिक-सांस्कृतिक सरोकार; IGNOU
- दलित साहित्य में साठोत्तर परिवर्तन; गद्य कोश
- दलित साहित्य और ओमप्रकाश वाल्मीकि का लेखन; vle.du.ac.in
- बियोंड दि स्टेटस लिंग्विस्टिक्स एण्ड लिटरेचर; रेमण्ड चैपमैन; एडवर्ड आर्नल्ड लिमिटेड,लंदन,1973

परिशिष्ट

साक्षात्कार - 1

'तलाश' कहानी-संग्रह के कहानीकार जयप्रकाश कर्दम जी के साथ बातचीत

शोधार्थी: सर आपको कहानी लिखने की प्रेरणा कहाँ से मिली ?

जयप्रकाश कर्दम: देखिये कहानी जब मैं विद्यार्थी था और ग्यारहवीं कक्षा में पढ़ता था तो उस समय से मुझे कहानी और उपन्यास पढ़ने में मेरी गहरी रूचि हो गयी और उस दौरान मैंने जैसे प्रेमचंद जी की बहुत सारी कहानियाँ पढ़ डाली । उसमें और भी जैसे जयशंकर प्रसाद की भी पढ़ी या और समकालीन यशपाल की पढ़ी, जैनेन्द्र की पढ़ी, आत्मकथा पढ़ी, लूसून की छोटी कहानियाँ पढ़ी । तो ये जो कहानियाँ जो ये पढ़ता गया तो ये कहीं न कहीं ये प्रेरित करते गए कि मैं भी लिख सकता हूँ । मुझे भी लिखना चाहिए और उसी दौरान मैंने 1976 में एक कहानी लिखी और वो गाजियाबाद में एक पत्रिका निकलती थी 'भारत सावित्री' उसके सम्पादक थे राधाचरण विद्यार्थी तो उनकी पत्रिका के बारे में मैंने कहीं पढ़ा और मैंने संपादक के नाम वो भेज दिए । तो उस समय टेलीफोन जैसी ये व्यवस्था नहीं थी हैं न और घरों में टेलीफोन बहुत कम तो हमारे यहाँ तो मतलब ही नहीं था । तो बाद में फिर उनका एक पोस्टकार्ड

आया कि आपकी कहानी हमने पढ़ी और उसे हम प्रकाशित करेंगे और आप अपना एक फोटो भेज दीजिए। तो मैंने अपना डाक से एक फोटो भेज दिया तो वो बोले अरे आप तो बहुत युवा हैं आके मिलिए तो मैं गया साइकिल उठा के। तो वहां से जब कहानी प्रकाशित हुई तो उससे मुझे प्रेरणा मिली। मेरी कहानी छप गयी तो इसका मतलब मैं लिख सकता हूँ तो फिर वहां से आगे फिर मैं लिखता गया। पत्रकारिता करता था तो वहां के कई पत्रों में वहां के गाजियाबाद के क्षेत्र के थे साप्ताहिकों में और एक पाक्षिक में तो एक कॉलम ही लिखता था। और उनके लिए रिपोर्टिंग करता, लेख लिखता था। जब भी कोई अवसर आया मतलब ईश्वरचंद्र विद्यासागर का जन्मदिन आया तो उनके ऊपर लिख दिया। मतलब सुभाष चंद्र बोस का जन्मदिन आया तो संपादक ने कहा कि एक लेख लिख दो तो उनके ऊपर लिख दिया। राजा राममोहन राय का जन्मदिन आया उनके ऊपर लिख दिया। कोई विशेष जब-जब भी संपादक कहते थे तो वो चीजें लिखते रहे लेकिन साथ-साथ में वो कहानी भी जब-जब कोई मन होता था, समय होता था तो लिखता था। तो प्रेरणा तो मुझे वहीं से मिली है कहानी लिखने की।

शोधार्थी: सर आजतक में आपकी सबसे पसंदीदा कहानी कौन सी रही है और क्यों ?

जयप्रकाश कर्दम: देखिये ये तो कहना बड़ा मुश्किल है एक लेखक के लिए कि उसकी पसंदीदा कहानी कौन सी है। जैसे कि एक माँ को अपने सारे बच्चे प्यारे

लगते हैं वैसे लेखक के लिए सभी रचनाएँ बराबर हैं। तो उसमें हम ये नहीं कह सकते लेकिन हाँ कुछ कहानियाँ चर्चित हो जाती हैं। कुछ चर्चित नहीं होती हैं या कम चर्चित रहती हैं उसके आधार पर हम कह सकते हैं। या फिर पाठ्यक्रम में लगती हैं यही एक आधार बन सकता है। तो उसके आधार पर मैं कहूँ तो 'नो बार' कहानी और मेरी 'लाठी' कहानी, 'पगड़ी' कहानी, 'तलाश', 'शीत लहर', 'मजदूर खाता' और 'कामरेड का घर' ये कहानियाँ वो हैं जो विभिन्न विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जा रही हैं। इसमें कुछ कहानियाँ ऐसी भी है जो अनुवाद हो कर दूसरी भाषा जैसी की अंग्रेजी में पढ़ाई जा रही है। और साथ ही अमरकंटक में इंदिरा गांधी नेशनल ट्राइबल यूनिवर्सिटी में भी कुछ कहानियाँ पढ़ाई जा रही है। तो इस तरह से कुछ कहानियाँ चर्चित हैं तो मैं भी कह सकता हूँ कि ये मेरी पसंदीदा कहानियाँ हैं।

शोधार्थी: दलित और हिंदी कहानियों की जब बात करें तो आपने अपनी दलित कहानियों में मानक और अमानक भाषा का प्रयोग किस तरह से किया है ?

जयप्रकाश कर्दम: शब्द जो प्रशासनिक क्षेत्र में आप मानक शब्दों का प्रयोग कर सकते हैं। साहित्य में कोई शब्दावली मानक नहीं होती क्योंकि अर स्थान पर भाषा की बोलियाँ अलग-अलग होती हैं। गाँव और शहरों की भाषा अलग-अलग होती है तो कहानी की कथावस्तु क्या है, कहानी के जो पात्र हैं वो किस परिवेश के हैं उस आधार पर भाषा आती है। शिक्षित

व्यक्ति की भाषा पर प्रांज्वलता होगी। कम शिक्षित या अर्ध शिक्षित या श्रमिक वर्ग की शब्दावली अलग होगी तो कोई मानक नहीं बनता। भाषा में देशज, विदेशज, तत्सम और तद्भव शब्द भी हैं। अंग्रेजी शब्दों का भी प्रयोग अनपढ़ आदमी कर रहा है जो शब्द सम्भावित होकर आ रहे हैं। तो मैं नहीं मानता कि कहानी के लिए कोई मानक भाषा हो सकती है। केवल कथावस्तु, परिवेश और पात्र के मांग पर उस भाषा का प्रयोग होता है।

शोधार्थी: क्या आज की आधुनिक दलित स्त्रियाँ आपकी कहानियों में देखने को मिलती हैं?

जयप्रकाश कर्दम: देखिये बहुत ज्यादा बदलाव नहीं आता है। बदलाव थोड़ा बहुत आता है जब आज से दस, बीस, पचास साल पहले साक्षरता कम था या न के बराबर था। लेकिन इस आधार पर हम ये नहीं कह सकते कि सारी दलित स्त्रियाँ साक्षर हो गयी। गैर दलित स्त्रियों की तुलना में साक्षरता बहुत कम है। लेकिन सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश में थोड़ा सा बदलाव आया है क्योंकि पहले की जो रूढ़ियाँ हैं, परम्परायें है जो पहले जितने गहरे थे अधिकांशता वह उन रूढ़ियों से मुक्ति हुई है। बहुत सी दलित स्त्रियों के अंदर स्वालम्बन, स्वतंत्रता की भावना आयी है। और वो पुरूष सत्ता और जाति सत्ता से लड़ती है। वो अपनी गरिमा और अस्मिता को पहचान कर स्थापित करने की कोशिश करती हैं। और इन बातों को आप कहानियों के साथ-साथ आत्मकथाओं में देख सकते

हैं। और ये स्त्रियाँ खासतौर से अपनी बेटियों को तैयार करती हैं। तो ये बदलाव की चेतना हम देख सकते हैं।

शोधार्थी: सर क्या आपकी कहानियों के जरिए संदेश पाठकवर्ग तक पहुंच पाया है ?

जयप्रकाश कर्दम: देखिए मेरा काम संदेश देना है। पाठक की प्रतिक्रिया हमें पता नहीं चलता क्योंकि हम किसी के जीवन में नहीं झांकते। ये तो दूसरे लोग से पता चलता है क्योंकि हम पूछते नहीं है कि किसको कैसी लगी क्योंकि लेखक की भी एक गरिमा होती है। तो एक ईमानदार लेखक कभी इस बात को जज नहीं कर सकता। एक लेखक का काम केवल रचना करना है, संदेश देना है। संदेश कहाँ जा रहा है ये समाज देखेगा और पाठक वर्ग देखेगा।

शोधार्थी: सर मैंने देखा है कि आपकी कहानियों मे जब हम दलित समाज दिखा रहे हैं तो दलित कैरेक्टर्स कम हैं। ऐसा क्यों ?

जयप्रकाश कर्दम: ऐसा तो नहीं है। पर हाँ कुछ कहानियाँ ऐसी हैं। पहले तो ये कि हमारे ऊपर एक ठप्पा है दलित लेखक होने का। इससे लोग ये मानकर चलते हैं कि दलित पात्र होने चाहिए और विषय भी वही होना चाहिए। लोग ये मानकर चलते हैं कि हम ठाकुरों को गाली देने वाले होने चाहिए या ब्राह्मण को गाली देने वाले होने चाहिए। ये एक संकीर्ण सोच है। दलित भी मनुष्य है उसके अंदर भी आवेग है, संवेग है, वही संवेदनाएं हैं, वही सब आम अनुभूतियाँ हैं जो किसी की भी होती हैं। बहुत सी समस्यायें

सिर्फ मुझसे जुड़ी हुई नहीं आपसे जुडी हुई भी होती हैं। जैसे 'शीत लहर' कहानी है तो वहाँ पर मानवीय संवेदनाएं है कोई दलित नहीं है। मैं बहुतायत से दलित कहानी लिखता हूँ पर मैं और भी विषयों पर लिखता हूँ। सिर्फ दलित समाज ही नहीं 'शीत लहर', 'छिपकली' जैसी कहानियों पर लिखा है और मुझे लिखनी भी चाहिए। साहित्य संवेदना दर्शाता है और उसकी भाषा कभी कठोर तो कभी प्यार की भाषा देने के लिए कोमल भाषा का इस्तेमाल करता है। तो ये आवश्यकता के अनुरूप प्रयोग होते हैं।

शोधार्थी: कोई कहानी आपकी निजी जीवन या किसी घटना से प्रेरित है क्या ?

जयप्रकाश कर्दम: 'लाठी' कहानी है। ये मेरे पिताजी के साथ घटी घटना थी। मैं उस समय छोटा सा था पाँचवीं में होऊंगा। तो वो जो पूरी कहानी है वो घटना मेरे साथ तो नहीं पर मेरे घरवालों के साथ घटी है। एक और कहानी 'मोनिटर' भी है और वो कहानी मेरे साथ घटी है। क्योंकि जब मैं पढ़ता था तो क्लास का सबसे अव्वल विद्यार्थी होता था तो गरीबी बहुत थी तो समय-समय पर मैं मजदूरी करने जाता था। तो उस समय मजदूरी करते वक्त मुझे मेरे क्लासमेट्स ने देख लिया था तो वहाँ पर उन लोगों ने बोला अरे देखो 'मोनिटर' मजदूरी कर रहा है। तो इससे ये सीख भी लेनी चाहिए उन युवाओं को जो मजदूरी कर रहे हैं कि उन्हें शर्मिंदगी नहीं होनी चाहिए कोई भी काम करते समय क्योंकि अगर हम वहीं ठहर जाए तो आगे नहीं बढ़ सकते।

शोधार्थी: सर आजकल आप कुछ नया लिख रहे हैं ?

जयप्रकाश कर्दम: नया तो मेरी कुछ 2-3 कविता-संग्रह और आ रहे हैं। और मैं फिलहाल तो एक कहानी-संग्रह पर भी काम कर रहा हूँ।

परिशिष्ट

साक्षात्कार- 2

‘श्रेष्ठ दलित कहानियाँ’ कहानी-संग्रह के रचनाकार डॉ. जी. वी. रत्नाकर जी के साथ बातचीत

शोधार्थी: आपने जब अनुवाद किया इन सारी कहानियों का तेलुगु से हिंदी में तो पाठक वर्ग से आपको क्या अपेक्षाएं रहीं ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: पहली बात तो जो ये तेलुगु की स्टोरीज़ हैं वो बहुत फेमस है और इसके राइटर्स भी बहुत फेमस है और ये सब साहित्य लिखते हैं। इनाक साहब की ‘अस्पृश्य गंगा’ कहानी मे किस प्रकार से पानी भी नहीं दिया जाता था दलितों को यह दर्शाया गया है। और ‘गिरवी’ कहानी भी अनंतपुर डिस्ट्रिक्ट और रायलसीमा की तरफ की स्थिति को दर्शा रहा है। साथ ही कल्याण राव क्रांतिकारी लेखक हैं वो लाइफ को लेकर बात करते हैं। और तेलुगु में सतीशचंद्र है उनकी कहानी ‘तीन झूठ’ है और वो थोड़ा व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग करते हैं। तो इस तरह से तेलुगु में फेमस स्टोरीज़ हैं। तो ये किताब जो है वो शायद पहली रचना है जो तेलुगु से हिंदी में आयी है। अभी और भी काम करना है क्योंकि इसमें दिक्कत ये है कि जो हिंदी पहचानते हैं उनको तेलुगु

नहीं मालूम और जो तेलुगु पहचानते हैं उनको हिंदी नहीं मालूम इसलिए तेलुगु साहित्य को हिंदी में अभी और भी लाना बाकी है। तो हम भी अभी और सीख रहे हैं क्योंकि हम लोग नॉन-हिंदी बेल्ट से हैं तो साऊथ से जो है उनको हम रिकार्ड कर रहे हैं इसलिए अच्छा रिस्पांस तो आ रहा है।

शोधार्थी: इन कहानियों में दलित के अलावा दूसरे वर्ग भी है पर क्या सर आपको नहीं लगता कि दलित कैरेक्टर्स का ज्यादा प्रयोग किया गया है ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: इसमें एक 'जेल' कहानी है जो कि आदिवासी कहानी है लेकिन आदिवासी दलित नहीं है। मेरे हिसाब से अनटचाबिलिटी को टच करते हैं वो ही दलित हैं ये लाल-झंडा लेकर घूमने वाले नहीं। और ओबीसी में एक-एक स्टेट में वो भी कुछ-कुछ दलित में आते हैं जैसे कुम्हार कम्युनिटी या फिर धोबी कम्युनिटी वाले जो है। तो इस तरह का डिफरेंस सब जगह है। और एक कहानी 'माँ' वो भी जनरल स्टोरी है दलित कहानी नहीं है। ऐसा अलग-अलग है फिफ्टी परसेंट जो है वो दलित स्टोरी और दलित राइटर हैं। दलितों की डिविजन पर भी तिरिष बाबू की स्टोरी है तो इस तरह से बैलेंस बनाए रखने की कोशिश की गयी है।

शोधार्थी: सर आपने अपने इस कहानी-संग्रह में इन्हीं बारह कहानियों को क्यों चुना ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: मतलब जो मशहूर कहानियाँ हैं डिफरेंट एंगल से है, मुस्लिम्स पर है और बंजारा पर है और एक कहानी 'लक्ष्मी' बोलकर है वो जनरल ब्राह्मण कम्युनिटी पर है और इनाक साहब की जनरल दलित लाइफ पर है और तिरिष बाबू, सतीशचंद्र और मेरी कहानियाँ ये सब मैंने ले लिया क्योंकि ये सभी मशहूर कहानियाँ हैं और ये अलग ट्रेंड को लेती हैं।

शोधार्थी: तो सर आपने ये बताया कि इस कहानी-संग्रह में अलग-अलग कम्युनिटी की कहानियाँ हैं तो आपको अनुवाद करने में कैसी दिक्कतें आयीं ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: क्योंकि बेसिकली मैं तेलुगु बैकग्राउंड से हूँ और तेलुगु पढ़ना-लिखना भी जानता हूँ और साथ ही मुझे एरिया को समझने में भी दिक्कत नहीं है। हाँ लेकिन सुभद्रा का जो भाषा है वो तेलंगाना की भाषा का इस्तेमाल करते हैं तो वहाँ थोड़ा दिक्कत हुआ पर वो भी उनसे पूछ के ठीक किया मैंने और कुछ शब्द बी. एस. रामुलु जी हैं तो उनसे भी पूछ कर किया लेकिन ज्यादा दिक्कत तो नहीं आया क्योंकि मैं भी पोएट्री लिखता हूँ या कुछ न कुछ पढ़ता रहता हूँ। ये भी पूरा एक साल का काम है ट्रांसलेट करना, इकट्ठा करना तो ज्यादा तो नहीं पर थोड़ी बहुत दिक्कतें आयी।

शोधार्थी: तो सर भाषा की बात अगर करें तो दलित साहित्य और हिंदी साहित्य की भाषा में क्या अंतर है ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: अलग तो है क्योंकि जो मैनस्ट्रीम की भाषा है उसमें एट्टी-नाइंटी परसेंट भाषा बैकग्राउंड कम्युनिटीज़ का नहीं है उसमें कुछ न कुछ रिकार्ड हो रहा है और भी हमें रिकार्ड करने की जरूरत है। साथ ही भाषा भी चेंज हो रही है जैसे कि कुछ भाषाएं खत्म भी हो रही हैं। लेकिन अब दलित लिटरेचर को भी थर्टी-फोर्टी परसेंट दलित भाषा को यूज़ कर रहें हैं। अभी भी थोड़ा चेंज हुआ है।

शोधार्थी: तो सर आपको ऐसा लगता है कि दलित साहित्य में अमानक शब्दावली का ज्यादा प्रयोग होता है ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: कुछ ऐसे भी लोग है जो बोलते कि दलित भाषा है तो गालियाँ देते हैं, गंदी भाषा का प्रचार करते रहते हैं। लेकिन दलित घर में जो बात करता हैं वही यूज़ करते हैं। लेकिन जैसे हम लोग हैं मैं सेकेंड जनरेशन टीचर हूँ तो ठीक वैसी भाषा यूज़ नहीं करते ठीक वैसी ही समानार्थक शब्द यूज़ करते हैं। 'जूठन' का मैंने अनुवाद किया है उसमें वैसी ही दलित भाषा का इस्तेमाल हुआ है। लेकिन अब थोड़ा परिवर्तन दलित शब्दों का मैनस्ट्रीम पोएट्री में आया है। तो दलित लिटरेचर में दलित शब्दों के प्रयोग को रिकार्ड करना भी है।

शोधार्थी: आज की दलित कहानियों और शुरूआत की कहानियों में क्या अंतर पाते हैं ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: बिगिनिंग में जो दलित स्टोरी लिखे इनाक साहब और कल्याण राव जी ने वो समय में दलित कहानियों ओ पत्रिका में भी स्थान नहीं है। बाद में थोड़ा-थोड़ा राजेंद्र यादव जी ने प्रकाशित किया अपनी पत्रिका हंस में और जयप्रकाश कर्दम, ओमप्रकाश वाल्मीकि, सुशीला टाकभौरे जी मैनस्ट्रीम में आ गये। लेकिन आजकल अगर कोई लिख रहें हैं तो उसको पत्रिकाओं में प्रकाशित करने में दिक्कत नहीं है। आलरेडी फिफ्टी परसेंट दलित कहानियाँ मैनस्ट्रीम में आ गयी हैं और अभी और बीस-तीस साल हैं उसमें आ जाएंगी।

शोधार्थी: सहानुभूति और स्वानुभूति में क्या अंतर हम पाते है ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: स्वानुभूति मैन है और सहानुभूति देखकर उनके फिलिंग्स से लिखते है जैसे प्रेमचंद जी ने 'कफन' कहानी लिखा लेकिन जो भोगे हुए यथार्थ है उसका वर्णन अलग है। आप दूसरे की पीड़ा के बारे में जितना भी सोचो वो जिसपर बीत रही है वो उससे अलग ही होगी। गैर-दलित राइटर भी ठीक हैं लेकिन मैं मैन दलित राइटर को प्रमाणित मानता हूँ।

शोधार्थी: तो सर आपकी ये कहानी-संग्रह में आपकी प्रिय कहानी कौनसी है और क्यों ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: मेरी प्रिय कहानी तिरिष बाबू की स्टोरी जो दलितों में डिविजन करती है वो है और इनाक साहब की 'गिरवी' जो कि एक मेसेज दे रही है वो कहानी है। तो ये दो कहानियों को मैं पसंद करता हूँ।

शोधार्थी: सर अभी आप कुछ नया लिख रहे हैं या हाल फिलहाल में कोई अनुवाद किया हो ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: हाँ रिसेंटली मैं किताब ये 'मातादीन' जो कि सूरजपाल चौहान का है जो कि मंगल पाण्डे पर है उस पर काम हो गया है और वो किताब भी आ गयी है। और अभी टाकभौरे जी का 'शिकंजे का दर्द' पर काम कर रहा हूँ जो 2-3 मंथ्स में कम्पलीट करना है। नेक्स्ट स्वामी अछूतानंद का है वो भी काम हो गया उसका भी थोड़ा रह गया है वो भी करना है।

शोधार्थी: इस कहानी-संग्रह के सभी कहानियों के शीर्षकों के शब्दानुवाद हुए हैं या भावानुवाद हुए हैं ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: श्ब्दानुवाद से कभी भी न्याय नहीं कर सकते भावानुवाद लेना ही पड़ता है। और बेसिकली मैं पोएट हूँ तो हम श्ब्दानुवाद को पसंद नहीं करते हम भावानुवाद में चले जाते हैं। भावानुवाद से करना सही है। शब्दानुवाद मशीन ट्रांसलेशन जैसा है। रेयर संदर्भ में शब्दानुवाद का प्रयोग होता है लेकिन मैक्सिमम भावानुवाद का प्रयोग करते हैं।

शोधार्थी: तेलुगु दलित साहित्य को अभी और कितना समय लगेगा मैनस्ट्रीम में आने में ?

डॉ. जी. वी. रत्नाकर: मराठी में शुरूआत हो गया लेकिन तेलुगु बहुत आगे हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि और जयप्रकाश कर्दम जो लिख रहे हैं वो सब तेलुगु में भी है। मुझे लगता है हिंदी से भी बहुत आगे है तेलुगु क्योंकि तेलुगु में लिखने वाले और पढ़ने वाले बहुत हैं। लेकिन अनुवाद करना है क्योंकि अनुवाद अंग्रेजी में चला है और हिंदी में बहुत कम चला है। तेलुगु से हिंदी में कृष्णा जी ने किया है और सर्राजु जी ने भी किया है और अपना मानिकम्बा मैडम वो कुछ ट्रांसलेट की हैं। मैंने भी प्रोजेक्ट किया कृष्णा जी के साथ, 1998 में हमने प्रोजेक्ट के लिये चीजे इकट्ठी की और उसमें काम किया और फिर उसको कृष्णा जी ने सेंटर बना दिया है।

शोध आलेख

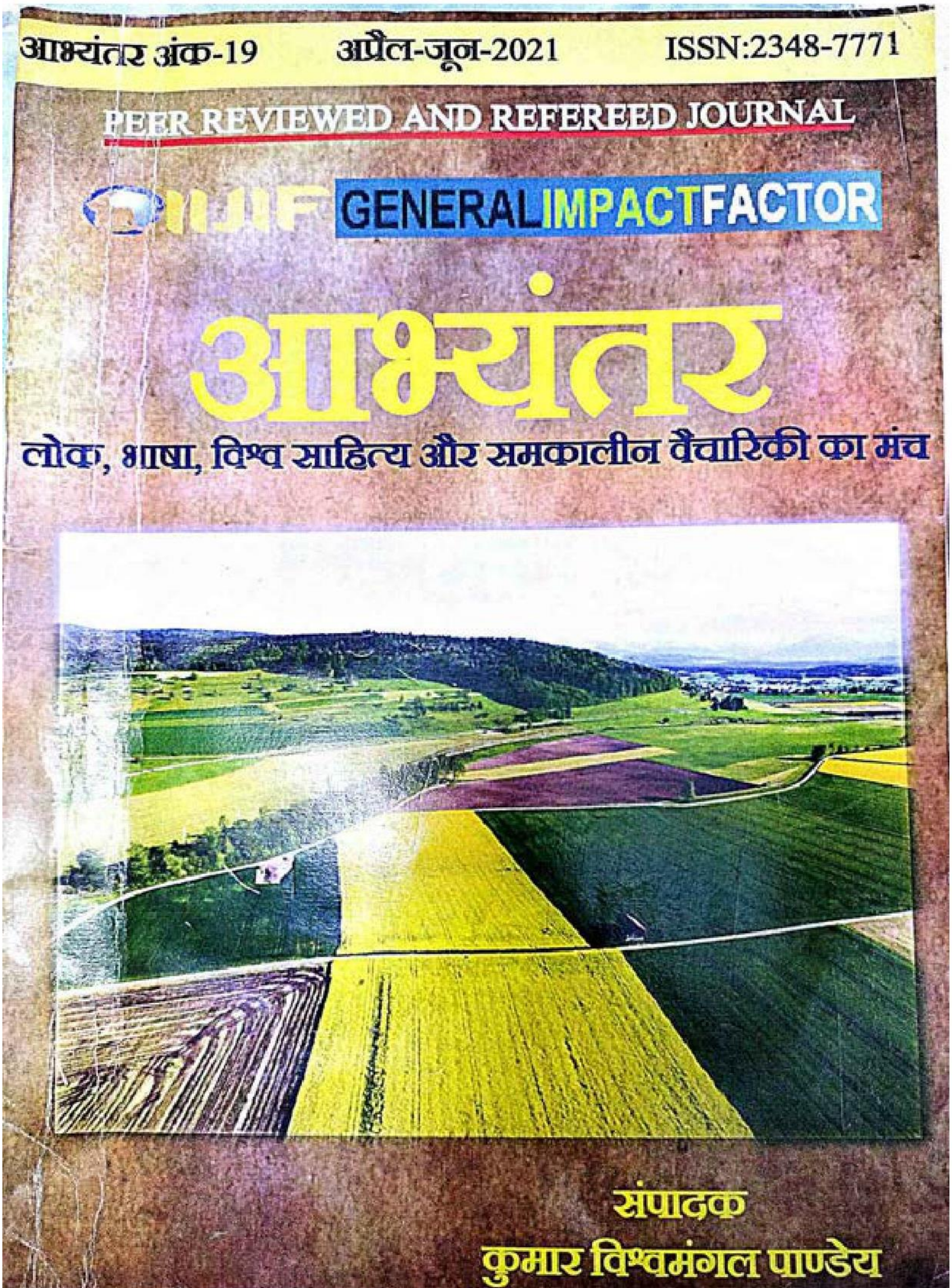
आभ्यंतर अंक-19
अप्रैल-जून-2021
ISSN:2348-7771
PEER REVIEWED AND REFEREED JOURNAL
GENERALIMPACTFACTOR
आभ्यंतर
लोक, भाषा, विश्व साहित्य और समकालीन वैचारिकी का मंच
संपादक
कुमार विश्वमंगल पाण्डेय

आभ्यंतर

लोक, भाषा, विश्व साहित्य और समकालीन वैचारिकी का मंच

AABHYANTAR

PEER REVIEWED AND REFEREED JOURNAL

IIJIF INDEXED-74

GIF IMPACT FACTOR- 2.0032

ISSN:2348-7771

अंक 19 अप्रैल-जून 2021

संस्थापक

अखिलेश कुमार द्विवेदी

(संस्कृत शिक्षक, ग्राम-हंटरगंज, जिला-चतरा, राज्य-झारखण्ड)

परामर्श

प्रो. अनिल राय

(हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय)

डॉ. मौना कौशिक

साहित्यकार और प्रख्यात कवयित्री

(सोफिया विश्वविद्यालय, बुल्गेरिया)

डॉ. विनोद तिवारी

(हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय)

डॉ. रामनारायण पटेल

(हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय)

डॉ. सुधांशु शुक्ल

(हिंदी विभाग, हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय)

डॉ. राजेश शर्मा

(हिंदी विभाग, हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय)

डॉ. यांचा पाण्डेय

(हिंदी विभाग, रामनारायण उच्च महाविद्यालय,

विनोबा भावे विश्वविद्यालय, झारखण्ड)

डॉ. पारसेन्द्र पंकज

(सहा. प्रो. दिल्ली विश्वविद्यालय)

इस अंक में...

...आलेख

➢ संपादकीय...कुमार विश्वमंगल पाण्डेय

शोध आलेख...

1.पत्रकार के रूप में रघुवीर सहाय...डॉ. कुसुम नेहरा...9
2.विविध समस्याएं और प्रेमचंद...डॉ. आलमगीर...12
3.बंग महिला और उनकी कहानी 'दुलाई वाली'...सितारे हिन्द...17
4.मुक्तिबोध की कविताओं में युगीन-चेतना...डॉ. मेधा...21
5.निर्मल वर्मा के निबंधों में इतिहास और स्मृति विषयक चिंतन...श्रुति पाण्डेय...25
6.शिक्षा में शोध का महत्त्व...सुबोध ठाकुर...28
7.निर्गुण भक्ति काव्य में गुरु नानक देव का स्थान...ऋतु...31
8.लोक रंग और कवि हलधर नाग...पी. अंजली...33
9.दलित कहानियों की भाषा: मुद्दे और चुनौतियाँ (चयनित कहानी-संग्रहों के सन्दर्भ में)...नम्रता सिंह...36
10.सूर के काव्य में नारी चेतना...माधवी...39
11.महात्मा गाँधी के शिक्षा-दर्शन का हिंदी साहित्य पर प्रभाव....सदफ इश्त्याक/गुरुप्रीत कौर...46
12.समय और समाज के आईने में महादेवी...नेहा साहू...50
13.नई शिक्षा नीति, नये आयाम...तृप्ति माहौर...53
14.समकालीन मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में 'रामचरित मानस' की प्रासंगिकता...शीतल प्रसाद...55
15.दलित कहानियों में अभिव्यक्त स्त्री शिक्षा...ज़रीना दीवान...60
16.आदिवासी कविताओं में महिला मानवाधिकार...डॉ. राठोड पुंडलिक...64
17.महेश कटारे की कहानियों में नारी विमर्श...हुडगे नीरज...68
18.कथक नृत्य : सांस्कृतिक आयाम...शुभांगी...72
19.जगदीश पंकज के नवगीतों में सामाजिक यथार्थ...मदनलाल...74
20.राजनीति का अपराधीकरण एवं चुनाव आयोग...मोना कुमारी...78
21.मछुआरा समाज की समस्याएँ और संजीव का उपन्यास 'रह गई दिशाएँ इसी पार'...ओम प्रकाश...83
22.आलोचना के घेरे में रामविलास शर्मा...अनुज यादव...87
23.स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में स्थानीय स्वशासन का विकास...रमेश राम...92
24.आचार्य रामचंद्र शुक्ल की भाषिक-दृष्टि में संवेदना और भारतीयता...डॉ. रूपा आर्या...97

समीक्षात्मक लेख...

25.समकालीन हिंदी समीक्षा में युवाओं का दखल और डॉ प्रभात कुमार 'प्रभाकर' की आलोचकीय दृष्टि...जियाउर रहमान जाफरी...101

कहानी...

26.गरीब की हाय...प्रेमचंद...104

निबंध...

27.सोभित कर नवनीत लिए...अमृत राय...110

दलित कहानियों की भाषा: मुद्दे और चुनौतियाँ

(चयनित कहानी-संग्रहों के सन्दर्भ में)

नम्रता सिंह
पीएच.डी (चतुर्थ वर्ष)
दलित-आदिवासी अध्ययन एवं अनुवाद केंद्र
हैदराबाद विश्वविद्यालय

हिंदी साहित्य और दलितवाद कहने से दोनों को अलग तरीके से देखा जाता है। जबकि हिंदी साहित्य से ही दलित साहित्य भी उभरा है। पर यहाँ हम बात दलितवाद की अगर करें तो भारत में जातियों को चार प्रकार में खंडित किया गया है जो कि इस प्रकार हैं- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शुद्रा ये शुद्र ही आगे चलकर दलित कहलाते हैं और इस शुद्र को ही आगे चलकर और भी कई सह-जातियों में बाँट दिया गया। हिंदी साहित्य और दलितवाद में अंतर इतना है कि हिंदी साहित्य अपने में सब समेटे हुए है यहाँ तक कि दलित साहित्य को भी पर दलितवाद बात सिर्फ और सिर्फ दलित की करता है। दलित साहित्य को नकार का साहित्य कहा जा सकता है जो संघर्ष से उपजा है तथा जिसमें समता, स्वतंत्रता और बन्धुता का भाव है और वर्णव्यवस्था से उपजे जातिवाद का विरोध है। महार, चमार, भंगी, कसाई जैसी जातियों की स्थितियों के प्रश्नों पर विचार तथा रचनाओं द्वारा उसे प्रस्तुत करने वाला साहित्य ही दलित साहित्य है। दलित कहानियों में जो सच है वो कड़वा है। वैसे तो सम्पूर्ण

दलित साहित्य प्रतिरोध का साहित्य है, लेकिन कहानी विधा में विरोध प्रतिरोध का तेवर अपेक्षाकृत ज्यादा मुखर और धारदार होता है। इसका कारण यह है कि आत्मकथा जो कि दलित साहित्य की प्रतिनिधि विधा है, व्यक्ति विशेष की संघर्ष गाथा बन जाती है, कविता कवि का आक्रोश, नाटक स्थितियों का बयान। परन्तु कहानी लेखक, पात्रों, घटनाओं, परिवेश आदि का ऐसा समग्र बिम्ब प्रस्तुत कर देती है कि पाठक के चेतन अवचेतन का हिस्सा बन जाती है। दलित कहानी जाति के अलावा सामाजिक न्याय, साम्प्रदायिक विसंगतियों, प्रशासनिक घालमेल और शोषण के बारीक तंतुओं को भी पकड़ती है।

प्रस्तुत कार्य के लिए मैंने मुख्यतः
संग्रह लिए हैं- ओमप्रकाश वाल्मीकि की
(जिसमें भी कुल बारह कहानियाँ हैं) और
रत्नाकर की हिंदी अनूदित तेलुगु
"श्रेष्ठ दलित कहानियाँ" (जिसमें कुल बा
हैं)। "घुसपैठिये" कहानी-संग्रह की
दलितों की अंतर्व्यथा, प्रताड़ना और
वास्तविकता की भूमि पर प्रकट
कहानियाँ सामाजिक, सांस्कृतिक
परिवेश को प्रस्तुत करते हुए दलित
उजागर करती हैं। इसमें आक्रोशभाव तथा
स्पष्ट झलकता है। "श्रेष्ठ दलित कहानि
संग्रह की कहानियाँ समाज के निचले
ध्यान आकर्षित करती हैं। लगभग सभी
माला (माहर) और मादिगा (चमार) जाति
सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक
पक्षों को दर्शाया गया है। अनुवादक ने तेलु
शब्दों को जैसे का वैसा रखकर उनके अ
ब्रैकेट में समझाया।

भाषा द्वारा ही हम अपने विचारों को
करते हैं। साहित्यिक क्षेत्र में भी यही माध्यम
साहित्यकार अपनी रचना को शब्दबद्ध
दलित कहानियों के संदर्भ में यह कहा ज
कि ये सारी कहानियाँ आम दलित जनता
कही गयी हैं। इनमें ज़्यादातर पात्र अशिक्षि
और दबे हुए वर्ग के प्रतिनिधि होने के का
भाषा में औपचारिकता कम है। दलितों की
अपने जीवन संग्राम की भाषा है, उनके
यही भाषा तो अभिव्यक्त होती है। भीतर
दोनों तरफ़ जूझने वाली इन कहानियों
आधार कला या शैली नहीं, वरन् भाषा औ
अमानवीय जुल्म, अत्याचार और सहन
वाणी देने वाली ये कहानियाँ अपना एक
सौन्दर्य-शास्त्र गढ़ती दिखाई देती हैं। इन क
दलित जीवन के कई कोण हैं-जीवन से
जिन्दा रहने के, पीड़ा सहने के और उससे

भाषिक कला की दृष्टि से दलित
नकार-विरोध की भाषा है, गाली-गलौ
तेज-तीखा तथा आक्रोशपूर्ण विरोध की
जब संस्कृति और साहित्य की बात होती
सौन्दर्य, कला, रचनात्मकता, छंद, रस,
मिथक, सृजनात्मकता तथा शैली के महत्व
हैं पर दलित कहानियों में त्रासद
ललकार, विद्रोह तथा धर्मान्तर है। दलि

SJIF Impact Factor - 5.54

E- ISSN 2582-5429

AKSHARA

Multidisciplinary Research Journal

Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal

July 2021 Special Issue 02 Vol. III

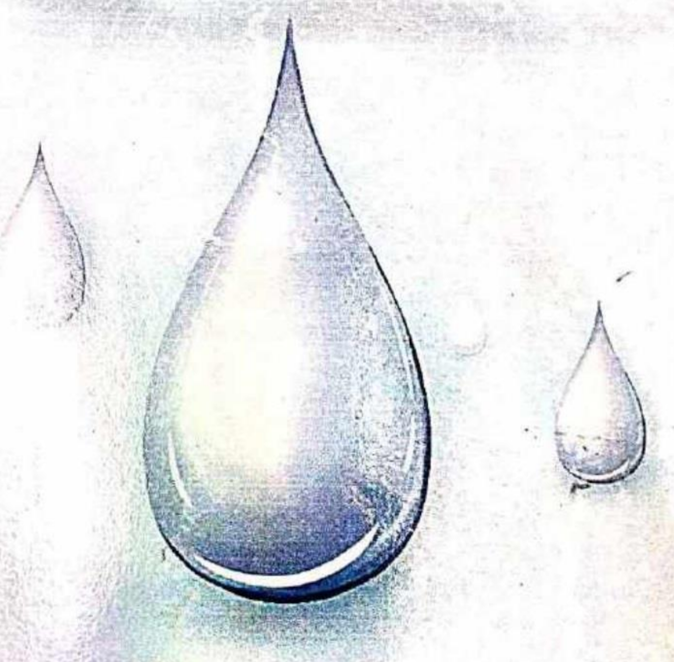

Chief Editor : **Dr. Girish S. Koli**, AMRJ

For Details Visit To - www.aimrj.com

Akshara Publication

Akshara Multidisciplinary Research Journal

Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal

July 2021

Special Issue Vol.02 Issue III

Scientific Journal of Impact Factor (SJIF) Impact-5.54

Scientific Journal Impact Factor

TOGETHER WE REACH THE GOAL

International Impact Factor Services

International Society for Research Activity (ISRA)
Journal-Impact-Factor (JIF)

Digital Online Identifier-Database System

Akshara Publication

Plot No 143 Professors colony,
Near Biyani School, Jamner Road, Bhusawal Dist Jalgaon Maharashtra 425201

E- ISSN 2582-5429

Akshara Multidisciplinary Research Journal

Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal

July 2021 Special Issue 02 Vol. III SJIF Impact- 5.54

Index

Sr.No	*Title of the Paper* & Author's Name	Pg.No
1	The Issue of Gender in Indian Literature-**U.T. Mahamadxodjaeva**	06-08
2	The matic Exploration of Rohinton Mistry works-**Gajanan N Janakwade**	09-13
3	An Empirical study of E-banking among the non professional student of Jalgaon City - **Dr. Pavitra Devidas Patil**	14-19
4	Social Exclusion of Scavengers in Mumbai - **Dr. Sonali Mandar Hajare**	20-23
5	Cognitive constructivism in education: the process of knowledge building- **Smt. Vaishali O. Shelar**	24-29
6	Effect of Working Mother on Child Socialization: An Sociological Analysis **Lovely / Dr. Ajit Singh Tomar**	30-34
7	The Noun Paradigms in Tamil- **Mrs. Kamola Ergasheva**	35-39
8	Flipped Classroom Innovative Instructional Strategy for Quality Enhancement of Teaching Practices - **Ms. Sadiya M. Farooque / Dr. Hemant D. Chitte**	40-45
9	The effective use of creative teaching strategies in Education for well orgaized and motivated classroom Environment- **Mr. Manohar Dilip Dalavi**	46-49
	हिंदी विभाग	
Sr.No	*Title of the Paper* & Author's Name	Pg.No
10	राग दरबारी' स्वातंत्र्योत्तर भारतीय ग्रामीण जीवन का जीवंत दस्तावेज- **डॉ. जिन्दर सिंह मुण्डा**	50-54
11	व्यावहारिक अनुवाद मे चुनौतियाँ- **अंचल सक्सेना / हृदयनारायन दुबे**	55-57
12	स्त्री विमर्श की सांस्कृतिक चुनौतियाँ-**अमन कुमार**	58-62
13	उपन्यासकार रामकरण शर्मा का संस्कृत साहित्य में अवदान ('सीमा' उपन्यास के परिप्रेक्ष्य में) **- डॉ. प्रीति श्रीवास्तव**	63-67
14	यशपाल कृत 'दिव्या' उपन्यास में नारी अस्मिता और जिजीविषा- **डॉ. संतोष कुमार अहिरवार**	68-71
15	हिन्दी कथा-साहित्य में किन्नर विमर्श- **डॉ. रमा विनोद सिंह**	72-75
16	'बातन की ठाठ' कहानी के सवाल- **भरत**	76-78
17	दलित कहानियों का भाषिक विश्लेषण: वस्तु और भाषा के स्तर पर- **नम्रता सिंह**	79-82
18	मैत्रेयी पुष्पा के 'चाक' उपन्यास में नारी चेतना- **प्रा. डॉ. राजेंद्र काशिनाथ बाविस्कर**	83-85
19	सकल भारतीय साहित्य एक है - **मरीना एक्का**	86-88
20	'झीनी-झीनी बीनी चदरिया' में चित्रित बुनकर समाज का यथार्थ- **शेख उस्मान सत्तारमियाँ**	89-91
21	कृष्णा सोबती के उपन्यासों में नारी विमर्श-**डॉ . राखी. के. शाह**	92-95
22	गांधीजी के ग्रामोन्नति विचारों का समकालीन हिंदी साहित्य पर प्रभाव-**डॉ.चित्रा मिलिंद गोस्वामी**	96-98
23	डॉ. नरेंद्र मोहन की नाट्य-साधना-**डॉ.बाबासाहेब गव्हाणे**	99-106
24	सूर्यबाला के उपन्यासों में चित्रित सामाजिक समस्याएँ- **अस्मिता भगवान पाटील / डॉ. संगीता सूर्यकांत चित्रकोटी**	107-113
25	डॉ. रामकुमार वर्मा के नाटकों में बौध्दविचारों से प्रभावित स्त्री चरित्र - **सौ. गायकवाड शितल अंकुश / प्रा. डॉ. कल्लशेट्टी एम.के.**	114-115
26	सिरमौर जनपद के वैवाहिक लोकगीत- **डॉ. नरेश कुमार**	116-119
27	हिंदी भाषा शिक्षण एवं साहित्य सर्जना पर कोविड-19 का प्रभाव-**डॉ. अरुण घोगरे**	120-122
28	हिन्दी साहित्य में आदिवासी विमर्श ('धार' उपन्यास के संदर्भ में)- **प्रा. डॉ. भारती बी. वळवी**	123-126

AMRJ
Akshara Multidisciplinary Research Journal E-ISSN
Peer-Reviewed & Refereed International Research Journal
July 2021 Special Issue 02 Vol. III
SJIF Impact

17

दलित कहानियों का भाषिक विश्लेषण: वस्तु और भाषा के स्तर पर

नम्रता सिंह
शोधार्थी
दलित-आदिवासी अध्ययन एवं अनुवाद केंद्र, हैदराबाद विश्वविद्यालय
मोबाइल नम्बर: 8074761545 ईमेल: namrta.lsr@gmail.com

दलित लेखक के चित्रण में सच्ची अनुभूति है, मात्र सहानुभूति नहीं। दलितों पर होने वाले सामाजिक अ... अनुभूति के साथ चित्रित किया है।इस सन्दर्भ में अनेक कहानियों के नाम गिनाये जा सकते हैं।उदाहरण के लिए मोहनदास नै... जी की कहानी 'हमारा जवाब' देखी जा सकती है।इस कहानी का नायक हिम्मत सिंह वास्तव में हिम्मत वाला था।आ... दलित बस्ती का हिम्मत कुछ नया करने की तमन्ना रखता है।वह उच्च वर्ग की बस्ती जीवनी मंडी में मिठाई का खोमचा ... ।वह मेहनत से पेट भरना चाहता है।पर मिठाई की खुशबू भी उसके दलित होने को छिपा न सकी।एक दलित की यह हिम्मत ... सरे आम मिठाई बेचे।मानो जीवनी मंडी में वह मिठाई नहीं वह अपनी जाति बेच रहा हो।और लोग हैं कि उससे मिठाई नहीं ... खरीद रहे हों।हिम्मत अंतिम क्षण तक संघर्ष करता है हार नहीं मानता।इस कहानी में चित्रित वस्तु हिम्मत की अपनी मेहनत ... की सहानुभूति जो सवर्ण जाति करती है।

विषयवस्तु

दलित कहानी में मौजूद दलित समाज के जीवन्त अनुभव का यह वही यथार्थ है, जिसे वर्ण एवं जाति केन्द्रित सामा... व्यवस्था के शोषण और दमन के खिलाफ दलित कहानीकारों ने रचा है। इसीलिए बीसवीं सदी में हुए दलित आन्दोलनों ... विचारधारा के प्रभाव में जो दलित कहानियाँ लिखी गई; उनका विश्लेषण करने पर साफ पता चलता है कि दलित कहानियाँ, क... मात्र नहीं हैं, अपितु दलित समाज के उत्पीड़न, संघर्ष और प्रतिरोध का यथार्थ चित्र है। इनका आकलन करते हुए यह भी पता च... है कि दलित लेखकों ने मुख्यधारा के लेखन के समानान्तर अपनी जातीय संस्कृति, सामाजिक संघर्ष और पारम्परिक वर्ण ... जातिकेन्द्रित सामाजिक व्यवस्था में अपना वजूद तलाशने का प्रयास किया है तथा वर्ण एवं जाति को अपने समाजके शोषण ... दमन का सबसे बड़ा कारण माना है।

वर्ण एवं जाति केन्द्रित असमानता तथा उसके शोषण एवं दमन के खिलाफप्रतिरोध की चेतना विकसित करना दलि... कहानी का मुख्य लक्ष्य है। यद्यपि वर्ण-जाति व्यवस्था को लेकर इतिहाकारों और समाजशास्त्रियों के एक बड़े तबके का मान... कि यह व्यवस्था समाज को नियन्त्रित एवं संचालित करने के लिए थी तथा श्रमिकों का विभाजन इसका लक्ष्य था जिसका वि... करते हुए मूकनायक के प्रवेशांक में अम्बेडकर ने लिखा था कि "जाति प्रथा सिर्फ श्रमिकों का विभाजन नहीं है...वह वंशगत है ... जिसमें श्रमिकों का वर्गीकरण एक के ऊपर दूसरी सीढ़ीनुमा है, इसमें जिसका जन्म जिस तल (जाति) में होता है, वह उसी तल में ... मरता है।"[1] वर्ण और जाति का यह सवाल जिसे कथाकारों ने दलित कहानी का हिस्सा बनाया। दलित कहानी के सन्दर्भ में यह वर्ण ... और जाति क्या है? इस सन्दर्भ में जयप्रकाश कर्दम की 'नो बार' कहानी का अंश ध्यातव्य है–

"बेटी एक बात तो बताओ
"क्या पापा?"
"इस लड़के की कास्ट क्या है?"[2]

जब लड़की के सवर्ण पिता को लड़के की जाति का पता चलता है कि वह दलित है तो पिता की टिप्पणी होती है -"आखिर नो बार का यह मतलब नहीं कि किसी चमार-चूहड़े के साथ..."[3] यह कहानी प्रगतिशीलता के ढोंगियों का पर्दाफ़ाश करती है।आज भी हमारा समाज जाति एवं वर्ण-व्यवस्था से मुक्त नहीं हो पाया है।

शोध प्रपत्र

खालसा कॉलेज फॉर वूमैन
सिविल लाईन्ज़, लुधियाना
एवं
केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा
के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित
एक-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी
दिनांक 05 नवम्बर 2019

हिन्दी साहित्य में विभिन्न विमर्शों की भूमिका

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री/श्रीमती/डॉ/सुश्री नम्रता सिंह, शोधार्थी, हैदराबाद विश्वविद्यालय ने दिनांक **05** नवम्बर **2019** को हिन्दी विभाग, खालसा कॉलेज फॉर वूमैन, सिविल लाईन्ज़, लुधियाना द्वारा आयोजित एक-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी में अध्यक्षा/बीज-वक्ता/विषय-विशेषज्ञ/पत्र वाचक/प्रतिभागी के रूप में भाग लिया तथा अपना वैचारिक योगदान दिया। इन्होंने संगोष्ठी में दलित कहानियों का भाषिक विश्लेषण विषय पर शोध-पत्र प्रस्तुत किया।

मुक्ति गिल
डॉ. मुक्ति गिल
प्राचार्या एवं
संगोष्ठी संरक्षक

प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय
निदेशक
केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा

कामिनी साहिर
डॉ. कामिनी साहिर
विभागाध्यक्षा एवं
संगोष्ठी संयोजिका

शोध प्रपत्र

University of Hyderabad
DEPARTMENT OF HINDI

CERTIFICATE

This is to certify that Prof./Dr./Mr./Ms. नम्रता सिंह
has chaired / participated / presented a paper on the topic दलित कहानियों की भाषा : मुद्दे और चुनौतियाँ (चयनित कहानी-संग्रहों के संदर्भ में) *in the National Seminar held on* 15 नवंबर 2019 *on* भारतीय दलित साहित्य : मुद्दे और चुनौतियाँ.

Coordinator

Head of the Department
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
Head, Department of Hindi
हैदराबाद विश्वविद्यालय
University of Hyderabad
हैदराबाद Hyderabad-500 046

AS PER THE UNIVERSITY POLICY, ANTI-PLAGIARISM SCREENING IS NOT REQUIRED FOR THE REGIONAL LANGUAGES

Librarian
Indira Gandhi Memorial Library
UNIVERSITY OF HYDERABAD
Central University P.O.
HYDERABAD-500 046.